राजस्थान भारती प्रकाशन

हम्मीरायण

भूमिका लेखक

डा० दशरथ शर्मा एम० ए० डी० लिट्

सम्पादक

भँवरलाल नाहटा

प्रकाशक

सादूल राजस्थानी रिसर्च-इन्स्टीट्यूट

बीकानेर।

प्रथमावृति १०००] सं० २०१७ [मूल्य ३)

प्रकाशक

श्री लालचंद कोठारी

सादूल राजस्थानी रिसर्च इन्स्टीट्यूट

बीकानेर

मुद्रक

श्री शोभाचंद सुराना

रेफिल आर्ट प्रेस

३१, बड़तल्ला स्ट्रीट, कलकत्ता-७

फोन : ११-७९२१

प्रकाशकीय

श्री सादूल राजस्थानी रिसर्च-इन्स्टीट्यूट बीकानेर की स्थापना सन् १९४४ में बीकानेर राज्य के तत्कालीन प्रधान मंत्री श्री के० एम० पणिक्कर महोदय की प्रेरणा से, साहित्यानुरागी बीकानेर-नरेश स्वर्गीय महाराजा श्री सादूलसिंहजी बहादुर द्वारा संस्कृत, हिन्दी एवं विशेषतः राजस्थानी साहित्य की सेवा तथा राजस्थानी भाषा के सर्वाङ्गीण विकास के लिये की गई थी।

भारतवर्ष के सुप्रसिद्ध विद्वानों एवं भाषाशास्त्रियों का सहयोग प्राप्त करने का सौभाग्य हमें प्रारंभ से ही मिलता रहा है।

संस्था द्वारा विगत १६ वर्षों से बीकानेर में विभिन्न साहित्यिक प्रवृत्तियां चलाई जा रही हैं, जिनमें से निम्न प्रमुख हैं—

१. विशाल राजस्थानी-हिन्दी शब्दकोश

इस संबंध में विभिन्न स्रोतों से संस्था लगभग दो लाख से अधिक शब्दों का संकलन कर चुकी है। इसका सम्पादन आधुनिक कोशों के ढंग पर, लंबे समय से प्रारंभ कर दिया गया है और अब तक लगभग तीस हजार शब्द सम्पादित हो चुके हैं। कोश में शब्द, व्याकरण, व्युत्पत्ति, उसके अर्थ, और उदाहरण आदि अनेक महत्वपूर्ण सूचनाएं दी गई हैं। यह एक अत्यंत विशाल योजना है, जिसकी संतोषजनक क्रियान्विति के लिये प्रचुर द्रव्य और श्रम की आवश्यकता है। आशा है राजस्थान सरकार की ओर से, प्रार्थित द्रव्य-साहाय्य उपलब्ध होते ही निकट भविष्य में इसका प्रकाशन प्रारंभ करना संभव हो सकेगा।

२. विशाल राजस्थानी मुहावरा कोश

राजस्थानी भाषा अपने विशाल शब्द भंडार के साथ मुहावरों से भी समृद्ध है। अनुमानतः पचास हजार से भी अधिक मुहावरे दैनिक प्रयोग में लाये जाते हैं। हमने लगभग दस हजार मुहावरों का, हिन्दी में अर्थ और राजस्थानी में उदाहरणों सहित प्रयोग देकर संपादन करवा लिया है और शीघ्र ही इसे प्रकाशित करने का प्रबंध किया जा रहा है। यह भी प्रचुर द्रव्य और श्रम-साध्य कार्य है।

यदि हम यह विशाल संग्रह साहित्य-जगत को दे सके तो यह संस्था के लिये ही नहीं किन्तु राजस्थानी और हिंदी जगत के लिए भी एक गौरव की बात होगी।

३. आधुनिक राजस्थानी प्रकाशन रचनाओं का

इसके अन्तर्गत निम्नलिखित पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं—

१. कळायण, ऋतु काव्य। ले० श्री नानूराम संस्कर्ता

२. आभै पटकी, प्रथम सामाजिक उपन्यास। ले० श्री श्रीलाल जोशी।

३ वरस गांठ, मौलिक कहानी संग्रह। ले० श्री मुरलीधर व्यास।

'राजस्थान-भारती' में भी आधुनिक राजस्थानी रचनाओं का एक अलग स्तम्भ है, जिसमें भी राजस्थानी कवितायें, कहानियां और रेखाचित्र आदि छपते रहते हैं।

४ 'राजस्थान-भारती' का प्रकाशन

इस विख्यात शोधपत्रिका का प्रकाशन संस्था के लिये गौरव की वस्तु है। गत १४ वर्षों से प्रकाशित इस पत्रिका की विद्वानों ने मुक्त कंठ से प्रशंसा की है। बहुत चाहते हुए भी द्रव्याभाव, प्रेस की एवं अन्य कठिनाइयों के कारण, त्रैमासिक रूप से इसका प्रकाशन सम्भव नहीं हो सका है। इसका भाग ५ अङ्क ३-४ 'डा० लुइजि पिओ तैस्सितोरी विशेषांक' बहुत ही महत्वपूर्ण एवं उपयोगी सामग्री से परिपूर्ण है। यह अङ्क एक विदेशी विद्वान की राजस्थानी साहित्य-सेवा का एक बहुमूल्य सचित्र कोश है। पत्रिका का अगला ७वां भाग शीघ्र ही प्रकाशित होने जा रहा है। इसका अङ्क १-२ राजस्थानी के सर्वश्रेष्ठ महाकवि पृथ्वीराज राठोड़ का सचित्र और वृहद् विशेषांक है। अपने ढंग का यह एक ही प्रयत्न है।

पत्रिका की उपयोगिता और महत्व के सम्बन्ध में इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि इसके परिवर्तन में भारत एवं विदेशों से लगभग ८० पत्र-पत्रिकाएं हमें प्राप्त होती हैं। भारत के अतिरिक्त पाश्चात्य देशों में भी इसकी मांग है व इसके ग्राहक हैं। शोधकर्ताओं के लिये 'राजस्थान भारती' अनिवार्यतः संग्रहणीय शोध-पत्रिका है। इसमें राजस्थानी भाषा, साहित्य, पुरातत्व, इतिहास, कला आदि पर लेखों के अतिरिक्त संस्था के तीन विशिष्ट सदस्य डा० दशरथ शर्मा, श्रीनरोत्तमदास स्वामी और श्री अगरचन्द नाहटा की वृहद् लेख सूची भी प्रकाशित की गई है।

५. राजस्थानी साहित्य के प्राचीन और महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों का अनुसंधान, सम्पादन एवं प्रकाशन

हमारी साहित्य-निधि को प्राचीन, महत्वपूर्ण और श्रेष्ठ साहित्यिक कृतियों को सुरक्षित रखने एवं सर्वसुलभ कराने के लिये सुसम्पादित एवं शुद्ध रूप में मुद्रित करवा कर उचित मूल्य में वितरित करने की हमारी एक विशाल योजना है। संस्कृत, हिंदी और राजस्थानी के महत्वपूर्ण ग्रंथों का अनुसंधान और प्रकाशन संस्था के सदस्यों की ओर से निरंतर होता रहा है जिसका संक्षिप्त विवरण नीचे दिया जा रहा है—

६. पृथ्वीराज रासो

पृथ्वीराज रासो के कई संस्करण प्रकाश में लाये गये हैं और उनमे से लघुतम संस्करण का सम्पादन करवा कर उसका कुछ अंश 'राजस्थान भारती' में प्रकाशित किया गया है। रासो के विविध संस्करण और उसके ऐतिहासिक महत्व पर कई लेख राजस्थान-भारती में प्रकाशित हुए हैं।

७. राजस्थान के अज्ञात कवि जान (न्यामतखां) की ७५ रचनाओं की खोज की गई। जिसकी सर्वप्रथम जानकारी 'राजस्थान-भारती' के प्रथम अंक में प्रकाशित हुई है। उसका महत्वपूर्ण ऐतिहासिक काव्य 'क्यामरासा' तो प्रकाशित भी करवाया जा चुका है।

८. राजस्थान के जैन संस्कृत साहित्य का परिचय नामक एक निबंध राजस्थान भारती में प्रकाशित किया जा चुका है।

९. मारवाड़ क्षेत्र के ५०० लोकगीतों का संग्रह किया जा चुका है। बीकानेर एवं जैसलमेर क्षेत्र के सैकड़ों लोकगीत, घूमर के लोकगीत, बाल लोकगीत, लोरियां और लगभग ७०० लोक कथाएँ संग्रहीत की गई हैं। राजस्थानी कहावतों के दो भाग प्रकाशित किये जा चुके हैं। जीणमाता के गीत, पाबूजी के पवाड़े और राजा भरथरी आदि लोक काव्य सर्वप्रथम 'राजस्थान-भारती' में प्रकाशित किए गए हैं।

१० बीकानेर राज्य के और जैसलमेर के अप्रकाशित अभिलेखों का विशाल संग्रह 'बीकानेर जैन लेख संग्रह' नामक वृहत् पुस्तक के रूप में प्रकाशित हो चुका है।

११. जसवंत उद्योत, मुंहता नैणसी री ख्यात और अनोखी आन जैसे महत्वपूर्ण ऐतिहासिक ग्रंथों का सम्पादन एवं प्रकाशन हो चुका है।

१२. जोधपुर के महाराजा मानसिंहजी के सचिव कविवर उदयचंद भंडारी की ४० रचनाओं का अनुसंधान किया गया है और महाराजा मानसिंहजी की काव्य-साधना के संबंध में भी सबसे प्रथम 'राजस्थान-भारती' में लेख प्रकाशित हुआ है।

१३. जैसलमेर के अप्रकाशित १०० शिलालेखों और 'भट्टि वंश प्रशस्ति' आदि अनेक अप्राप्य और अप्रकाशित ग्रंथ खोज-यात्रा करके प्राप्त किये गये हैं।

१४. बीकानेर के मस्तयोगी कवि ज्ञानसारजी के ग्रंथों का अनुसंधान किया गया और ज्ञानसार ग्रंथावली के नाम से एक ग्रंथ भी प्रकाशित हो चुका है। इसी प्रकार राजस्थान के महान विद्वान महोपाध्याय समयसुन्दर की ५६३ लघु रचनाओं का संग्रह प्रकाशित किया गया है।

१५. इसके अतिरिक्त संस्था द्वारा—

(१) डा० लुइजि पिओ तैस्सितोरी, समयसुन्दर, पृथ्वीराज, और लोकमान्य तिलक आदि साहित्य-सेवियों के निर्वाण-दिवस और जयन्तियां मनाई जाती हैं।

(२) साप्ताहिक साहित्यिक गोष्ठियों का आयोजन बहुत समय से किया जा रहा है, इसमें अनेकों महत्वपूर्ण निबंध, लेख, कविताएं और कहानियां आदि पढ़ी जाती हैं, जिससे अनेक विध नवीन साहित्य का निर्माण होता रहता है। विचार विमर्श के लिये गोष्ठियों तथा भाषणमालाओं आदि का भी समय-समय पर आयोजन किया जाता रहा है।

१६. बाहर से ख्यातिप्राप्त विद्वानों को बुलाकर उनके भाषण करवाने का आयोजन भी किया जाता है। डा० वासुदेवशरण अग्रवाल, डा० कैलाशनाथ काटजू, राय श्री कृष्णदास, डा० जी० रामचन्द्रन्, डा० सत्यप्रकाश, डा० डब्लू० एलेन, डा० सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या, डा० तिबेरिओ-तिबेरी आदि अनेक अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त विद्वानों के इस कार्यक्रम के अन्तर्गत भाषण हो चुके हैं।

गत दो वर्षों से महाकवि पृथ्वीराज राठौड़ आसन की स्थापना की गई है। दोनों वर्षों के आसन-अधिवेशनों के अभिभाषक क्रमशः राजस्थानी भाषा के प्रकाण्ड

विद्वान् श्री मनोहर शर्मा एम० ए०, बिसाऊ और पं० श्रीलालजी मिश्र एम० ए०, हूंडलोद, थे ।

इस प्रकार संस्था अपने १६ वर्षों के जीवन-काल में, संस्कृत, हिन्दी और राजस्थानी साहित्य की निरंतर सेवा करती रही है । आर्थिक संकट से ग्रस्त इस संस्था के लिये यह संभव नहीं हो सका कि यह अपने कार्यक्रम को नियमित रूप से पूरा कर सकती, फिर भी यदा कदा लड़खड़ा कर गिरते पड़ते इसके कार्यकर्त्ताओं ने 'राजस्थान-भारती' का सम्पादन एवं प्रकाशन जारी रखा और यह प्रयास किया कि नाना प्रकार की बाधाओं के बावजूद भी साहित्य सेवा का कार्य निरंतर चलता रहे । यह ठीक है कि संस्था के पास अपना निजी भवन नहीं है, न अच्छा संदर्भ पुस्तकालय है, और न कार्य को सुचारु रूप से सम्पादित करने के समुचित साधन ही हैं; परन्तु साधनों के अभाव में भी संस्था के कार्यकर्ताओं ने साहित्य की जो मौन और एकान्त साधना की है वह प्रकाश में आने पर संस्था के गौरव को निश्चय ही बढ़ा सकने वाली होगी ।

राजस्थानी-साहित्य-भंडार अत्यन्त विशाल है । अब तक इसका अत्यल्प अंश ही प्रकाश में आया है । प्राचीन भारतीय वाङ्मय के अलभ्य एवं अनर्घ रत्नों को प्रकाशित करके विद्वज्जनों और साहित्यिकों के समक्ष प्रस्तुत करना एवं उन्हें सुगमता से प्राप्त कराना संस्था का लक्ष्य रहा है । हम अपनी इस लक्ष्य पूर्ति की ओर धीरे-धीरे किन्तु दृढता के साथ अग्रसर हो रहे हैं ।

यद्यपि अब तक पत्रिका तथा कतिपय पुस्तकों के अतिरिक्त अन्वेषण द्वारा प्राप्त अन्य महत्वपूर्ण सामग्री का प्रकाशन करा देना भी अभीष्ट था, परन्तु अर्थाभाव के कारण ऐसा किया जाना संभव नहीं हो सका । हर्ष की बात है कि भारत सरकार के वैज्ञानिक संशोध एवं सांस्कृतिक कार्यक्रम मंत्रालय (Ministry of scientific Research and Cultural Affairs) ने अपनी आधुनिक भारतीय भाषाओं के विकास की योजना के अंतर्गत हमारे कार्यक्रम को स्वीकृत कर प्रकाशन के लिये रु० १५०००) इस मद में राजस्थान सरकार को दिये तथा राजस्थान सरकार द्वारा उतनी ही राशि अपनी ओर से मिलाकर कुल रु० ३००००) तीस हजार की सहायता, राजस्थानी साहित्य के सम्पादन-प्रकाशन-

हेतु इस संस्था को इस वित्तीय वर्ष में प्रदान की गई है; जिससे इस वर्ष निम्नोक्त ३१ पुस्तकों का प्रकाशन किया जा रहा है।

१. राजस्थानी व्याकरण—	श्री नरोत्तमदास स्वामी
२. राजस्थानी गद्य का विकास (शोध प्रबंध)	डा० शिवस्वरूप शर्मा अचल
३. अचलदास खीची री वचनिका—	श्री नरोत्तमदास स्वामी
४. हमीरायण—	श्री भंवरलाल नाहटा
५. पद्मिनी चरित्र चौपई—	,, ,, ,,
६. दलपत विलास	श्री रावत सारस्वत
७. डिंगल गीत—	,, ,, ,,
८. पंवार वंश दर्पण—	डा० दशरथ शर्मा
९. पृथ्वीराज राठोड़ ग्रंथावली—	श्री नरोत्तमदास स्वामी और श्री बद्रीप्रसाद साकरिया
१०. हरिरस—	श्री बद्रीप्रसाद साकरिया
११. पीरदान लालस ग्रंथावली—	श्री अगरचन्द नाहटा
१२. महादेव पार्वती वेलि—	श्री रावत सारस्वत
१३. सीताराम चौपई—	श्री अगरचन्द नाहटा
१४. जैन रासादि संग्रह—	श्री अगरचन्द नाहटा और डा० हरिवल्लभ भायाणी
१५. सदयवत्स वीर प्रबन्ध—	प्रो० मंजुलाल मजूमदार
१६. जिनराजसूरि कृतिकुसुमांजलि—	श्री भंवरलाल नाहटा
१७. विनयचन्द कृतिकुसुमांजलि—	,, ,, ,,
१८. कविवर धर्मवर्द्धन ग्रंथावली—	श्री अगरचन्द नाहटा
१९. राजस्थान रा दूहा—	श्री नरोत्तमदास स्वामी
२०. वीर रस रा दूहा—	,, ,, ,,
२१. राजस्थान के नीति दोहा—	श्री मोहनलाल पुरोहित
२२. राजस्थान व्रत कथाएं—	,, ,, ,,
२३. राजस्थानी प्रेम कथाएं—	,, ,, ,,
२४. चंदायन—	श्री रावत सारस्वत

२५. भड्डली— श्री अगरचन्द नाहटा
म: विनय सागर
२६. जिनहर्ष ग्रंथावली श्री अगरचन्द नाहटा
२७. राजस्थानी हस्तलिखित ग्रंथों का विवरण ,, ,,
२८. दम्पति विनोद ,, ,,
२९. हीयाली-राजस्थान का बुद्धिवर्धक साहित्य ,, ,,
३०. समयसुन्दर रासत्रय श्री भंवरलाल नाहटा
३१. दुरसा आढा ग्रंथावली श्री बदरीप्रसाद साकरिया

जैसलमेर ऐतिहासिक साधन संग्रह (संपा० डा० दशरथ शर्मा), ईशरदास ग्रंथावली (संपा० बदरीप्रसाद साकरिया), रामरासो (प्रो० गोवर्द्धन शर्मा), राजस्थानी जैन साहित्य (ले० श्री अगरचन्द नाहटा), नागदमण (संपा० बदरीप्रसाद साकरिया), मुहावरा कोश (मुरलीधर व्यास) आदि ग्रंथों का संपादन हो चुका है परन्तु अर्थाभाव के कारण इनका प्रकाशन इस वर्ष नहीं हो रहा है ।

हम आशा करते हैं कि कार्य की महत्ता एवं गुरुता को लक्ष्य में रखते हुए अगले वर्ष इससे भी अधिक सहायता हमें अवश्य प्राप्त हो सकेगी जिससे उपरोक्त संपादित तथा अन्य महत्वपूर्ण ग्रंथों का प्रकाशन सम्भव हो सकेगा ।

इस सहायता के लिये हम भारत सरकार के शिक्षाविकास सचिवालय के आभारी हैं, जिन्होंने कृपा करके हमारी योजना को स्वीकृत किया और ग्रान्ट-इन-एड की रकम मंजूर की ।

राजस्थान के मुख्य मन्त्री माननीय मोहनलालजी सुखाड़िया, जो सौभाग्य से शिक्षा मन्त्री भी हैं और जो साहित्य की प्रगति एवं पुनरुद्धार के लिये पूर्ण सचेष्ट हैं, का भी इस सहायता के प्राप्त कराने में पूरा-पूरा योगदान रहा है। अतः हम उनके प्रति अपनी कृतज्ञता सादर प्रगट करते हैं।

राजस्थान के प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षाध्यक्ष महोदय श्री जगन्नाथसिंहजी मेहता का भी हम आभार प्रगट करते हैं, जिन्होंने अपनी ओर से पूरी-पूरी दिलचस्पी लेकर हमारा उत्साहवर्द्धन किया, जिससे हम इस वृहद् कार्य को सम्पन्न करने में समर्थ हो सके । संस्था उनकी सदैव ऋणी रहेगी ।

इतने थोड़े समय में इतने महत्वपूर्ण ग्रन्थों का संपादन करके संस्था के प्रकाशन-कार्य में जो सराहनीय सहयोग दिया है, इसके लिये हम सभी ग्रन्थ सम्पादकों व लेखकों के अत्यंत आभारी हैं।

अनूप संस्कृत लाइब्रेरी और अभय जैन ग्रन्थालय बीकानेर, स्व० पूर्णचन्द्र नाहर संग्रहालय कलकत्ता, जैन भवन संग्रह कलकत्ता, महावीर तीर्थक्षेत्र अनुसंधान समिति जयपुर, ओरियंटल इन्स्टीट्यूट बड़ोदा, भांडारकर रिसर्च इन्स्टीट्यूट पूना, खरतरगच्छ वृहद् ज्ञान-भंडार बीकानेर, मोतीचंद खजान्ची ग्रंथालय बीकानेर, खरतर आचार्य ज्ञान भण्डार बीकानेर, एशियाटिक सोसाइटी बंबई, आत्माराम जैन ज्ञानभंडार बड़ोदा, मुनि पुण्यविजयजी, मुनि रमणिक विजयजी, श्री सीताराम लालस, श्री रविशंकर देराश्री, पं० हरदत्तजी गोविंद व्यास जैसलमेर आदि अनेक संस्थाओं और व्यक्तियों से हस्तलिखित प्रतियां प्राप्त होने से ही उपरोक्त ग्रन्थों का संपादन संभव हो सका है। अतएव हम इन सबके प्रति आभार प्रदर्शन करना अपना परम कर्त्तव्य समझते हैं।

ऐसे प्राचीन ग्रन्थों का सम्पादन श्रमसाध्य है एवं पर्याप्त समय की अपेक्षा रखता है। हमने अल्प समय में ही इतने ग्रन्थ प्रकाशित करने का प्रयत्न किया इसलिये त्रुटियों का रह जाना स्वाभाविक है। गच्छतः स्खलनंक्वापि भवत्येव प्रमादतः, हसन्ति दुर्जनास्तत्र समादधति साधवः।

आशा है विद्वद्‌वृन्द हमारे इन प्रकाशनों का अवलोकन करके साहित्य का रसास्वादन करेंगे और अपने सुझावों द्वारा हमें लाभान्वित करेंगे जिससे हम अपने प्रयास को सफल मानकर कृतार्थ हो सकेंगे और पुनः मां भारती के चरण कमलों में विनम्रतापूर्वक अपनी पुष्पांजलि समर्पित करने के हेतु पुनः उपस्थित होने का साहस बटोर सकेंगे।

निवेदक
लालचन्द कोठारी
प्रधान-मंत्री
सादूल राजस्थानी-इन्स्टीट्यूट
बीकानेर

बीकानेर,
मार्गशीर्ष शुक्ला १५
सं० २०१७
दिसम्बर ३, १९६०.

दो शब्द

वीरवर चौहान हम्मीर इतिहास प्रसिद्ध महान् व्यक्ति हुए हैं जिनके हठ के सम्बन्ध में "तिरिया तेल हमीर हठ, चढै न दूजी बार" पर्याप्त प्रख्यात कहावत है। राजस्थान के इस महान् वीर के सम्बन्ध में जैनाचार्य नयचंद्र सूरि का 'हम्मीर महाकाव्य' बहुत वर्ष पूर्व प्रकाशित हो चुका है, और उसका नवीन संस्करण पुरातत्त्वाचार्य श्रीजिनविजयजी के सम्पादित कई वर्षों से छपा पड़ा है जो अभी तक प्रकाशित नहीं हो पाया। नागरी प्रचारणी सभा से कवि जोधराज का हम्मीर रासो व 'हमर हठ' ग्रन्थ भी बहुत वर्ष पूर्व प्रकाशित हुए थे। प्राकृत 'पैंगलम्' में हम्मीर सम्बन्धी फुटकर पद्य एवं मैथिल कवि विद्यापति की पुरुषपरीक्षा में दयावीर प्रबन्ध भी प्रकाशित है, पर हम्मीर सम्बन्धी प्राचीन राजस्थानी स्वतंत्र रचना प्राप्त न होना वर्षों से अखरता था। सन् १९५४ में श्री महावीरजी तीर्थक्षेत्र अनुसन्धान समिति, जयपुर की ओरसे राजस्थान के जैन शास्त्रभंडारों की ग्रन्थ सूचीका द्वितीय भाग प्रकाशित हुआ तो दिगम्बर जैन बड़ा तेरापंथी मंदिर के गुटका नं० २६२में सं० १५३८ में रचित 'राय दे हमीर दे चौपई' होने की सूचना पाकर बड़ी प्रसन्नता हुई। उक्त गुटके को मँगवा कर उसकी प्रतिलिपि कर ली गई। प्रकाशित सूचीमें रचयिता के सम्बन्ध में उल्लेख नहीं था, पर प्रति मँगवाने पर कवि का नाम 'भांडउ व्यास' ज्ञात हो गया और इस रचना का परिचय मरु-भारती वर्ष ४ अंक ३ में 'महान् वीर हम्मीर दे चौहान सम्बन्धी एक प्राचीन राजस्थानी रचना' नामक लेख में दे दिया गया। तदनन्तर मुनि जिनविजयजी से इस महत्वपूर्ण अज्ञात रचना के

विषय में बातचीत होने पर उन्होंने इसे हमीर महाकाव्य के परिशिष्ट में प्रकाशित करने के लिए हमारे करवायी हुई प्रतिलिपि लेली पर वह ग्रन्थ अद्यावधि प्रकाशित नहीं हो पाया। गत वर्ष सादूल राजस्थानी रिसर्च इन्स्टीट्यूट को भारत सरकार एवं राजस्थान सरकार से प्राचीन राजस्थानी ग्रन्थ प्रकाशनार्थ आर्थिक सहायता प्राप्त होने पर इस रचना को संस्था की ओर से प्रकाशित करना निश्चित किया गया और उस गुटके को पुनः जयपुर से मँगाकर प्रेसकापी कर ली गई। इसी बीच उदयपुर में मुनि कान्तिसागरजी के संग्रह में इस रास की दो प्रतियां होने का ज्ञान हुआ तो श्रीनरोत्तमदासजी स्वामी को उन कृतियों की प्रतियाँ या नकल भेजने के लिए लिखा गया और उन्होंने जो प्रारम्भ त्रुटित प्रति मुनि जी से मिली उसके आधार से पद्यांक १२७ से २१६ तक का पाठ सम्पादित करके भेजा। मुनिजी के पास से दूसरी पूर्ण प्रति प्राप्त न होने से जयपुर वाली प्रति को ही मुख्य आधार मानकर प्रकाशित किया जा रहा है। स्वामी जी की प्रतिलिपि का भी इसमें यथास्थान उपयोग कर लिया गया है और पृष्ठ ६७ से ७९ तक उदयपुर की प्रतिके पाठान्तर दिये गए हैं।

मांडा व्यास की रचना को अबतक बचाये रखने का श्रेय जैन विद्वानों को है। मुनि कान्तिसागरजी के संग्रह में इसकी जो पूर्ण प्रति का विवरण देखने को मिला उसके अनुसार उस प्रति में भी पर्याप्त पाठभेद है। रचनाकाल व रचयिता के सम्बन्ध में भी पाठ भिन्न[1] है।

---

[1] "हम्मीरायण अति रसाल, भावकलश कहि चरित्र रसाल"
अन्तिम पद्य में भी मांडा की जगह 'भावकलश कहि गुरुना पसाइ" पाठ है एवं रचना काल पनरहसइ ताम्रीसइ आदि" पाठ है यह प्रति सं० १६०९ की लिखी हुई है।

भावकलश रचित कृतकर्म चौपई का विवरण भी मुनिजी के विवरण ग्रन्थ (अप्रकाशित) में देखा गया है। प्रस्तुत रास की प्रति एवं प्रतिलिपि प्राप्त करने में श्री कस्तूरचंद्रजी कासलीवाल मुनि कान्तिसागरजी व स्वामी नरोत्तमदासजी का सहयोग प्राप्त हुआ, इसलिए हम उनके आभारी हैं।

यद्यपि जयपुर वाली प्रतिलिपि कर्त्ता ने इसका नाम 'राय हमीर दे चौपई' लिखा है, चौपई छन्द की प्रधानता होने से वह संगत भी है पर मूल ग्रंथकार ने प्रारम्भ व अन्त में 'हम्मीरायण' शब्द का प्रयोग किया है अतः हमने भी इसी नाम को अपनाया है।

यह रचना ३२६ पद्यों की छोटी सी होने से इसके साथ में हम्मीर सम्बन्धी अन्य फुटकर रचनाओं को देना आवश्यक समझा गया अतः परिशिष्ट नं० १ में प्राकृत पैङ्गलम् के हम्मीर सम्बन्धी ८ पद्य हिन्दी अनुवाद सहित प्राकृत ग्रन्थ परिषद् के ग्रन्थाङ्क ५ में प्रकाशित प्राकृत पैंगलम् के नवीन संस्करण से उद्धृत किये गये हैं इसलिए इस ग्रन्थ के सम्पादक डा० भोलाशंकर व्यास और प्राकृत ग्रन्थ परिषद् के सञ्चालकों के आभारी हैं।

परिशिष्ट नं० २ में हम्मीर सम्बन्धी २१ कवित्त व दोहे अनूप संस्कृत लाइब्रेरी के राजस्थानी विभाग की प्रति नं० १२६ (सं० १७९८ लिखित) से प्रतिलिपि करके दिये गए हैं †। और उसी लाइब्रेरी की प्रति नं० ९६ में भाट खेम रचित हम्मीर दे कवित्त एवं बात (सं० १७०६ लिखित) प्राप्त हुए उन्हें परिशिष्ट नं० ४ में प्रकाशित किये गए हैं। एतदर्थ उपर्युक्त लाइब्रेरी के व्यवस्थापकगण धन्यवादार्ह हैं।

---

† कवित्त नं० ६, १०, १९ में कुछ पाठ त्रुटित हैं एवम् कहीं कहीं पाठ भी अशुद्ध हैं, अतः इसकी अन्य पूर्ण व शुद्ध प्रति अपेक्षित है।

मैथिल कवि विद्यापति की 'पुरुष परीक्षा' ग्रन्थ के दयावीर कथा में भी हम्मीर का वृतान्त पाया जाता है। पुरुष परीक्षा ग्रन्थ अब अप्राप्य सा है, इसलिये हमारे ग्रन्थालय के प्राचीन संस्करण से दयावीर कथा को हिन्दी अनुवाद के साथ परिशिष्ट नं० ३ में दे दिया गया है।

हम्मीर सम्बन्धी अप्रकाशित रचनाओं में कवि महेश के हम्मीर रासे की दो त्रुटित प्रतियाँ हमारे संग्रह में हैं। उस ग्रन्थ की कई पूर्ण प्रतियां राजस्थान प्राच्य विद्याप्रतिष्ठान, जोधपुर आदि के संग्रह में हैं उनकी प्रतिलिपि प्राप्त करने का भी प्रयत्न किया गया पर उन प्रतियों में अत्यधिक पाठ भेद होने से उसका स्वतंत्र सम्पादन करना ही उचित समझा गया अतः इसमें सम्मिलित नहीं किया गया।

हम्मीरायण नामक एक और काव्य भी प्राप्त है जिसकी एक अशुद्ध-सी प्रति राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान ने और उसके वृहद् रूपान्तर की प्रतिलिपि स्वर्गीय पुरोहित हरिनारायण जी के संग्रह में है, यह ग्रन्थ काफी बड़ा होने से मुनिजिनविजय जी ने श्री अगरचन्द जी नाहटा के सम्पादन में राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान से प्रकाशन करना निर्णय किया है।

हम्मीरदेव वचनिका नामक एक और महत्वपूर्ण रचना की प्रति श्री उदयशङ्कर जी शास्त्री के संग्रह में है, उसका भी स्वतन्त्र रूप से वे सम्पादन कर रहे हैं इसलिये उसका उपयोग यहां नहीं किया जा सका है।

माननीय डा० दशरथ शर्मा ने इस ग्रन्थ की विस्तृत व शोधपूर्ण प्रस्तावना लिख देने की कृपा की है इसके लिए हम उनके अत्यन्त आभारी हैं। प्रकाशित रचनाओं का कथासार देने का विचार था, पर उसका यथोचित डा० दशरथ जी की भूमिका में हो गया है अतः इस ग्रन्थ के पृष्ठों को अनावश्यक बढ़ाना उचित नहीं समझा गया।

भंवरलाल नाहटा

रणथंभोर का ऐतिहासिक दुर्ग

भूमिका

(हम्मीरायण का पर्यालोचन)

राजस्थानी भाषा अपने वीर काव्यों के लिए सर्वत्र प्रसिद्ध हो चुकी हैं। कवि सम्राट श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर के शब्दों में 'राजस्थान ने अपने रक्त से जो साहित्य निर्माण किया है उसकी जोड़ का साहित्य और कहीं नहीं पाया जाता' किन्तु इस 'बेजोड़' साहित्य में से अभी तक कुछ रत्न ही हमारे सम्मुख आ सके हैं। वीर रस के प्रेमी अब रणमल छन्द और कान्हडदे प्रबन्ध से परिचित हैं। रतन महेसदासोत री वचनिका और अचलदास खीची री वचनिका के सुसम्पादित संस्करण भी अब हमें प्राप्य हैं। वीठू सूजा नगराजोत का 'राउ जइतसी-रउ छन्द' भी मनस्वी इटालियन विद्वान् तेसीतोरी की कृपा से मुद्रित हो चुका है। कुछ प्रकीर्णक रचनाओं का भी प्रकाशन हुआ है। किन्तु यह प्रकाशित साहित्य अप्रकाशित राजस्थानी वीर रसात्मक साहित्य का एक सामान्य अंश मात्र है। शायद ही कोई ऐसा राजस्थानी वीर हो जिसके लिये कुछ न लिखा गया हो। और हम्मीर तो राजस्थान के उन आदर्श वीरों में से है जिसकी कीर्ति का ख्यापन कर राजस्थान का कवि समाज कुछ विशेष गौरव की अनुभूति करता रहा है। इन्हीं कवियों में 'भाण्डउ' व्यास भी हैं जिसकी कृति 'हम्मीरायण' पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत है।

हम्मीरायण का रचयिता

हम्मीरायण के रचयिता के बारे में सन्देह के लिए कुछ विशेष अवकाश नहीं है। कवि ने अपना नाम पद्य ४, ५१, ६०, १०६, ११४, १७३, २२२, २४२, २४४, २८८, ३२६, आदि में 'माइ', 'मांडउ' और 'माडउ' रूप में दिया है, जिससे स्पष्ट है कि नाम 'माण्डा' या माण्डा रहा होगा जिसका राजस्थानी में कर्तृ-कारक के एक वचन में 'मांडउ' या 'माण्डउ' रूप होगा। जिस प्रकार माण्डा के समसामयिक नृप 'बीका' को 'बीकउ' या 'बीकोजी' कहते हैं। इसी तरह हम्मीरायण के कवि को हम 'माण्डउ' या 'माण्डोजी' भी कहें तो ठीक होगा। हम्मीरायण के कर्ता व्यास थे जिनका सदा से कथा-वार्तादि कहना मुख्य व्यवसाय रहा है। अतः रामायणादि की कथा के प्रेमी 'माण्डउ' व्यास का वीर-व्रती हम्मीर की ओर आकृष्ट होकर 'हम्मीरायण की रचना करना स्वाभाविक था।

कवि ने अपने पिता का नाम कहीं नहीं दिया है। डा० माताप्रसाद गुप्त का यह मत कि हम्मीरायण किसी कासवराव के पुत्र भाण की रचना है, भ्रान्तिमूलक है। वास्तव में वे इस चउपई का अर्थ ठीक न समझ पाए हैं :—

> कासिवराउ तणउ पुत्र भाण। श्री सुरिज प्रणमउ सुविहाण।
> पुहमि रायणि अति सुरसाल। माड गायो चरिय सुर्यासाल ॥४॥

इस चौपाई का भाण तो 'भानु' या सूर्य है जो कश्यप का पुत्र है। इसी का दूसरा नाम सूर्य है। कवि उसे सुविधान से प्रणाम करता है।

डा० गुप्त ने शायद पृथ्वीराज द्वारा प्रताप को प्रेषित पत्र के इस पद्य पर ध्यान नहीं दिया है :—

पातल जो पतसाह, बोलै मुख हूँता वयण।
मिहिर पिछ दिस मांह, ऊगै कासपराव उत॥

यह 'कासपराव उत (पुत्र)' और 'कासिपराउ तणउ' पुत्र एक ही हैं। "मिहिर' भानु और सूरिज का समानार्थक है। कवि ने अपना निजी नाम तो चउपई की दूसरी अर्धालि के दूसरे चरण में दिया है, और इसी नाम की आवृत्ति उसने ५१-६० आदि पद्यों में भी की है जिनका निर्देश हम अभी कर चुके हैं। समग्र कथा की अच्छी तरह आवृत्ति कर डा० गुप्त यदि कवि का नाम निश्चित करने का प्रयत्न करते तो उनसे यह भूल न होती।

हम्मीरायण की कथा

हम्मीरायण का कथा-भाग कुछ विशेष लम्बा नहीं है। इसे रामायण से तुलित किया जाए तो शायद यही कहना पड़े कि इसमें लङ्काकाण्ड मात्र ही है। हम्मीर के आरम्भिक जीवन को सर्वथा छोड़ कर इसकी कथा प्रायः अलाउद्दीन और हम्मीर के संघर्ष से ही आरम्भ होती है। संक्षेप में कथा निम्नलिखित है :—

जयतिगदे का पुत्र हम्मीरदे चहुआण रणथंभोर का राजा था। उनका भाई वीरम युवराज था और सूरवंशी रणमल तथा रायपाल उसके प्रधान थे। हम्मीर ने प्रधानों को आधी बूंदी गुजारे में और बहुत सी सेना दी थी।

इसी बीच में उल्लुखां के दो विद्रोही सरदार, महिमासाहि और मीर 'गाभरू' उल्लुखां की बहुत सी सेना का नाश कर रणथम्भोर आ पहुँचे। हम्मीर ने उन्हें शरण दी, और उन्हें दो लाख वेतन ही नहीं,

बहुत अच्छी जागीर भी दी। महाजनों ने इस नीति की कटु आलोचना की। किन्तु हम्मीर ने उनकी सलाह पर ध्यान न दिया।

उल्लूखाँ को जब ये समाचार मिले, तो उसने अत्यन्त क्रुद्ध होकर हम्मीर पर चढ़ाई की कानों कान किसी को खबर भी न लगी। किन्तु अकस्मात् 'जाजउ' देवड़ा उधर से आ निकला। उसने कुछ मुसलमानी सेना नाट की और हम्मीर को रणथंभोर पहुँच कर खबर भी दी। फलतः जब उल्लूखाँ हीराघाट पहुंचा, हम्मीर मुठभेड़ के लिए तैयार था। हम्मीर, महिमासाहि, मीर गाभरू और हम्मीर के राजपूतों से पराजित होकर उल्लूखाँ मैदान से भाग निकला।

अलाउद्दीन को जब यह सूचना मिली तो उसने सब सेना एकत्रित कर रणथंभोर को आ घेरा, और मोल्हाभाट को दूत के रूप में भेज कर हम्मीर को कहलाया कि वह राजकुमारी देवलदे, धारु और वारु वेश्याओं, अनेक गढ़ों और हाथियों को बादशाह की नजर करें। दोनों मीर भाइयों की विशेष रूप में मांग थी। इनके बदले में सुल्तान हम्मीर को मांडू, उज्जयिनी आदि देने के लिए उद्यत था। किन्तु हम्मीर तो एक दर्भाग्र भूमि भी देने के लिए तैयार न हुआ। मोल्हा ने कीर्ति और लक्ष्मी रूपी दो कन्याओं को हम्मीर के सामने प्रस्तुत किया था। हम्मीर ने कीर्ति को वरण करना ही उचित समझा।

हम्मीर के पत्र के उत्तर में दाहिमा, कछवाहा, भाटी आदि छत्तीस राजकुलों के लोग रणथम्भोर में आकर एकत्रित हो गए। महिमासाहि के नेतृत्व में शाही सेना पर आक्रमण कर उन्होंने निसरखान को मार डाला। अनेक दूसरे मीर भी मारे गए। गढ़ में खूब उत्सव हुआ। बादशाह ने

युद्ध चालू रखा किन्तु साथ ही में गढ़ को लेने के अन्य उपाय भी सोचने लगा।

हम्मीर एक दिन सिंहासन पर बैठा हुआ युद्ध देख रहा था। महिमासाहि भी वहीं था। वह चाहता तो बादशाह को अपने बाण का निशाना बना लेता, किन्तु हम्मीर के मना करने पर उसने केवल अलाउद्दीन के सातों राजछत्र काट डाले।

सुल्तान ने रणथम्भोर को हस्तगत करने का अब एक और उपाय किया। उसने रिण की 'खाई को लकड़ियों से पाटने' का प्रयत्न किया। किन्तु हम्मीर के सैनिकों ने लकड़ियाँ जला दीं। उसके बाद अलाउद्दीन की आज्ञा से सैनिकों ने बालू से उसे भरना शुरू किया। बालू से बीच का स्थान भरने पर उसके सैनिकों के हाथ गढ़ के कंगूरों तक पहुँचने लगे। हमीर चिन्तातुर हुआ। किन्तु गढ़ के अधिष्ठाता देव की कृपा से ऐसा पानी आया कि सब बालू बह गई।

गढ़ में फिर आनन्द होने लगा। धारू और बारू नाम की वेश्याएँ ऐसा नृत्य करतीं की उसकी समाप्ति सुल्तान को पीठ दिखाकर होती। सुल्तान ने महिमासाहि के चाचा को बन्दी कर लिया था। उसने बन्धन से मुक्त होकर एक ही तीर से उन दोनों वेश्याओं को मार गिराया। बादशाह ने उसे बहुत इनाम दिया।

बारह वर्ष तक युद्ध चलता रहा। अन्त में सुल्तान ने सन्धि की बातचीत आरम्भ की। रायपाल और रणमल को अत्यन्त विश्वस्य समझ कर हम्मीर ने सुल्तान के पास भेजा। अभी तक उनके पास आधी बून्दी की जागीर थी। पूरी बून्दी की प्राप्ति का आश्वासन मिलने पर इन दुष्ट

प्रधानों ने सुल्तान को वचन दिया कि सेना के प्रयोग के बिना ही वे उसे दुर्ग दिलवा सकेंगे।

गढ़ में पहुँच कर इन दुष्टों ने झूठ मूठ ही बातें बनाते हुए राजा से कहा, "सुल्तान देवलदेवी को मांगता है।" कुमारी भी आत्मोत्सर्ग के लिए तैयार हुई। किन्तु हम्मीर ने उसकी बात पर ध्यान न देकर अपनी सेना तैयार करनी शुरू की। अपने प्रधानों की दगाबाजी को अब भी वह न समझ सका। दुर्ग के धान्यरक्षक से मिल कर इन्होंने सब धान्य इधर उधर करवा दिया। फिर अलाउद्दीन पर हमला करने के बहाने से हम्मीर से सेना लेकर वे शत्रु से जा मिले। हम्मीर को अब कोई ऐसा व्यक्ति दिखाई न दे रहा था जिसके हाथ में वह हथियार दे। इसलिए प्रजा को बुला कर उसने कहा, "मैं राजा हूँ, तुम मेरी प्रजा हो" कहो, मैं तुम्हें कहाँ पहुँचाऊँ? और जाजा तुम भी परदेशी पाहुणे हो, तुम अपने घर जाओ।" किन्तु जाने के लिए कोई तैयार न हुआ। महिमासाहि ने तो यह भी कहा, "यदि हमें देने से गढ़ बच सके तो हमें बचाओ।" हम्मीर के लिए यह असम्भव था।

मीरों के कहने पर हम्मीरने धान्यागारों की देखभाल करवाई तो मालूम हुआ कि वे सब खाली हैं। अब जौहर के सिवाय उपाय ही क्या था? उसकी तैयारी हुई। राजा ने वंश रक्षा के लिये वीरम को गढ़ से जाने के लिये कहा। किन्तु जब वह तैयार न हुआ तो उसने कुंवर को तिलक दिया और विदा करने से पूर्व उसे उचित शिक्षा दी।

हाथियों और घोड़ों को राजपूतों ने मार डाला। जगहर (जौहर) की चितायें जल उठीं। सवा लाख का संहार हुआ। फिर सब स्थानों में

विदा मांगता हुआ जब हम्मीर कोठारों में गया तो उन्हें मरा पाया। किन्तु उसे अब जीने की इच्छा न रही थी। उस समय वीरमदे, हम्मीर दे, मीर और महिमासाहि, भाट और पाहुणा जाजा केवल ये व्यक्ति दुर्ग में वर्तमान थे। उचित स्थान पर अपनी अन्त्येष्ठि और दोनों मीरों को दफनाने का काम हम्मीर ने भाट को सौंपा। सबसे पहले मीरों ने, फिर देवड़ा जाजा ने और उसके बाद वीरम ने युद्ध किया। हम्मीर ने अपने हाथों ही अपना गला काटा। "यह सब संसार जानता है कि संवत् १३७१ ज्येष्ठ अष्टमी शनिवार के दिन राजा मरा और गढ़ टूटा।"

सुबह रणक्षेत्र में बादशाह पहुँचा। उसने रणमल से पूछा, 'इनमें तुम्हारा साहिब कौन है?" मद से मस्त उस अँधे ने पैर से राव को दिखलाया। उसी समय नल्ह भाट ने हम्मीर की विरुदावली का उच्चारण किया और अलाउद्दीन की भी प्रशंसा की। उसने एक एक सिर दिखा कर सब वीरों का वर्णन किया। 'रणथंमौर जलहरी है, जिसमें हम्मीर शिव स्थान पर वर्तमान है। यह जलदे? 'देवड़ा जाजा' ने उस सहिव की अपने शिर से पूजा की है। यह राजा का बन्धुवर वीरमदे है। यह तुम्हारे घर के मीर महिमासाहि और गाभरू हैं। वह शरणागतों की रक्षा करने वाला हम्मीर है।

बादशाह ने नाल्ह भाट को मुंहमांगा दान मांगने को कहा। नाल्ह ने स्वामिद्रोहियों के घात की प्रार्थना की। सुल्तान ने रणमल, रायपाल और कोठारी की अँगूठे तक खाल निकलवा डाली। भाट प्रसन्न हुआ। राजपूतों को दाग दिया, दोनों मीरों को दफनाया, और राजा को गङ्गा में प्रवाहित किया और फिर भाट की प्रार्थनानुसार उसे भी मरवा दिया। भाटने हम्मीर का बदला लेकर अपना नाम रखा।'

'भाण्डउ' ने "यह कथा सोमवार के दिन कार्तिक सुदी सप्तमी, संवत् १५३८ के दिन कही (पद्य ३२५)"

अर्थ-विषयक कुछ मतभेद

हम इस प्रस्तावना को प्रायः समाप्त कर चुके थे। उस समय श्री अगरचन्दजी नाहटा से हमें 'हमीर दे चउपई' पर हिन्दुस्तानी (१९६०, जनवरी-मार्च) में प्रकाशित डॉ० मानाप्रसाद गुप्त का लेख मिला। डा० गुप्त ने हम्मीरायण की कथा पर काफी रोशनी डाली है, जिस अर्थ पर हम पहुँचे हैं और जो अर्थ डा० गुप्त ने दिया है, उनमें अनेकशः पर्याप्त मतभेद है। अतः कुछ और लिखने से पूर्व उन स्थलों पर कुछ विचार करने के लिए हम विवश हुए हैं। कथा के सत्यासत्य की परीक्षा उसका अर्थ निश्चित होने पर ही हो सकती है।

डा० माताप्रसाद कृत अर्थ	*प्रस्तावित अर्थ और सुझाव*
(१) "वह (कवि) अपने को काश्यप राव का पुत्र माण बताता है।"	(१) कश्यपराज का पुत्र भानु है। उन श्री सूर्य को मैं सविधान प्रणाम करता हूँ।" हम ऊपर बता चुके हैं कि कवि का नाम 'भाट', भाण्ड या 'भाण्डउ' व्यास है।
(२) "गढ़ के परकोटे में चार प्रमुख पोलियां थी और प्रत्येक पोली पर नौलखी चंद्रिका होती थी।"	(२) चौपाई इस प्रकार है :— कोटि जिसो हुवइ इन्द्र विमाण, च्यारि पोलि तिणि कोटि प्रधान। पोलि चंदि नवलखीअ होइ, चउरासी चहुटा तिनु जोइ॥१॥ इसमें प्रत्येक पोली पर नौलखी चंद्रिका होती थी। ऐसा अर्थ तो इसमें कहीं दिखाई नहीं पड़ता। वास्तव में नौलखी तो एक पोली विशेष है जो अब भी इसी नाम से प्रसिद्ध है।

(३) "राजा का आवास त्रैलोक्य-मंदिर का नाम का था, और गढ़ के परकोटे में एक अलंकृत पौली थी जिसके बीच में एक त्रुटित रणस्तंभ था।"

(३) चौपाई इस प्रकार हैं :—

त्रैलोक्यमंदिर राय आवास,
सीला ऊन्हा धवलहरि पासि।
भूखी पोलि अछइ तिणि कोटि,
रिणनइ थंम विचइ छइ त्रोटि ॥१७॥

यहाँ डा० गुप्त और अधिक चूके हैं। त्रैलोक्य-मन्दिर एक प्रासाद विशेष की संज्ञा है। ऐसी ही संज्ञाएँ बीकानेर और राणकपुर के त्रैलोक्य-दीपक प्रासादों में भी अनुसन्धेय हैं। किन्तु हम डा० गुप्त के पहले पंक्ति के अर्थ को यथा तथा ठीक भी मान लें। ना भी दूसरी पंक्ति के अर्थ से सहमत होना तो असम्भव है। यह समझ में नहीं आता कि "पौलिके बीच में त्रुटित रणस्तंभ" की कल्पना ही वे कैसे कर चुके? वास्तव में "रण" दुर्ग की निकटस्थ प्रसिद्ध पहाड़ी है जिसका उल्लेख प्रायः सभी इतिहासकारों ने किया है। 'स्तम्भ से यह पहाड़ अभिप्रेत है जिस पर दुर्ग है। इनके बीच में गहरा खड्ड है (देखें आगे हमारा रणथंभोर का भौगोलिक वृत्त)। कवि ने इसी तथ्य को 'रिण नइ थम्म विचइ छइ त्रोटि' कह कर प्रकटित किया है। रिण का नाम 'चउपइ' में आगे भी है।

(४) "पहले उलुगखां ने इनसे पांच लब्धियां मांगी थीं, किन्तु इन्होंने उसे आधी लब्धि भी नहीं दी, फिर भी बादशाह के यहां इनका मान था, इसलिए ये उलुगखां की सेना में बने हुए थे।"

(४) डा० गुप्त का यह अर्थ हमारे विचार से अस्पष्ट है और अशुद्ध भी। लब्धि का पारिभाषिक अर्थ एक ज्ञान विशेष है जो इस प्रसंग में उपयुक्त नहीं है, यदि 'लब्धि' को हम प्राप्ति' के अर्थ में लें तो आधीलब्धि और पांच लब्धिका अर्थ समझने की आवश्यकता है। हमीरायण के उद्धरण ये हैं :—

अलुखान जि मंगियउ, अम्ह तीरइ पंचाग।
घणा दिवस म्हे ऊलग्या, लेउ न दीधउ आध ॥४०॥
अम्हनइ मान हुतउ एतलउ, परि बैठा लहता कणइलउ।
पातिसाह नइ करता सलाम, कटकि ढलगता
अलुखान ॥४५॥

इन पद्यों का वास्तविक अर्थ मुसलमानी इतिहासों को देखने से ज्ञात होता है जिनके अवतरण हमने आगे उद्धृत किए हैं। इस्लीम कानून के अनुसार लूट का कुछ भाग सुल्तान का और कुछ सैनिक का होता है। उलुगखां ने गुजरात से आते समय इस राज्य भाग को, जो यहाँ 'पंचाध' (पचार्ध) के रूप में प्रस्तुत है बलात् सिपाहियों से वसूल किया था। मुहम्मद शाह और उसके साथी 'अर्ध' भी देने के लिए तैयार न थे, क्योंकि उन्होंने बहुत दिन तक सेवा की थी। वे उलुगखां के दुर्व्यवहार से असंतुष्ट थे।

उससे पूर्व उनका संमान इतना था कि घर बैठे उन्हें वृत्ति मिलती थी, वे बादशाह को सलाम करते और उलुगखां की फौज में नौकरी बजाते। उलुगखां के दुर्वचनों से दुःखी होकर उन्होंने कालु मलिक को मार दिया, कटक में कोलाहल किया और जग देखते यहाँ आए थे :—

इणि वचनि दुहविया स्वामि,
कालु मलिक मार्यउ तिणि ठामि।
कटक मांहि कुलाइल किया,
जग देखत इहाँ आविया ॥४६॥

(५) 'जाजा देवड़ा उस समय अखाड़े में था। और बीकन वहां घोड़ा ले कर आया था।"

(५) जिस चउपइ का अर्थ डा० गुप्त ने किया है वह यह है :—

हेडाउ जाजउ देवडउ, घोड़ा ले आयु बीकणउ।६८।

अखाड़े के लिए यहां कोई शब्द नहीं है। शायद डा० गुप्त ने 'हेडाउ' का अर्थ अखाड़ा कर दिया है। 'हेडाउ' राजस्थानी का विख्यात शब्द है। "हेडाउ-मीरी" का ख्याल अब भी होली के समय होता है। हेडाउ हेम बणजारे की कथा भी प्रसिद्ध है। श्री मनोहर शर्मा ने इस दोहे की ओर भी मेरा ध्यान आकृष्ट किया है :—

लाखें सरिसा लख गया, अनड़ सरीसा आठ।
हेम हेडाउ सारसा, वले न आया वाट ॥

'बीकन वहाँ घोड़ा लेकर आया था' अर्थ भी प्रसङ्गानुकूल नहीं है। सीधा अर्थ तो यही है कि हेडाउ जाजा बिक्री के लिये घोड़े लादा था। पाँच सहस्र घोड़ों से आक्रमण एक भद्रों का व्यापारी हेडाउ ही कर सकता था।

(६) "छावनी बीड़ी खाकर सोई हुई थी।"

(६) हम्मीरायण का पाठ है :—

"छाइणि सूनो वीटि खानी ॥७१॥

उस समय के किसी ग्रन्थ में हमने नहीं पढ़ा कि छावनी बीड़ी खाकर सो जाती थी। यह दुरर्थ निर प्राचीन राजस्थानी के 'वीटि' शब्द का अर्थ न समझने से हुआ है। वास्तविक अर्थ है :—

"खानने सोती छाइणि (झाईन नगर) को घेर लिया।

(७) तदनन्तर उसने बाली नगर में पड़ाव किया

(७) मूल पाठ है—

'बाली नगर डाही अहिठाण"

अर्थात् उसने नगर को जलाकर अधिष्ठान-राज्यस्थान तथा प्रधान स्थानों को ढहा दिया। 'डाहों' का अर्थ 'जला कर' राजस्थानी भाषा में प्रसिद्ध है।

(८) 'हम्मीर ने सूमार की कोठी लूटी।'

(८) यहाँ हम्मीर का राज्य था अतः सूमार की कोठी यदि कोई होगी तो अपने ही राज्य की होगी। मूल में 'कोटी सूमार' शब्द है. इसका अर्थ स्पष्ट नहीं है सम्भवतः शाही शिविर को हम्मीर ने

लूटा है। सुर्जन चरित में इस बात का उल्लेख है कि हम्मीर ने शाही कैम्प को लूटा और अलाउद्दीन ने दूत द्वारा इस पर अपना रोष प्रकट किया।

(९) वह करमदी बीटि में आधी रात को पहुँच गया।

(९) पाठ है :—करमदी बीटी आधी राति ॥६७॥

'बीटी' का अर्थ यही 'घेर लिया' है। उसने आधी रात करमदी को घेर लिया। 'बीटी' शब्द हम्मीरायण में अनेकशः प्रयुक्त है।

(१०) मीर मुहम्मद नाम का बड़ा पठान था जो खुरासान से आया था।

(१०) चउपई यह है :—

मुहिमद मीर मोटा पठाण, बे ऊमटी आव्या खुरसाण।
मुगले काफर ते अति घणा, मलिक मीर मीया नहमणा ॥९९॥

इसमें सरहदी अनेक जातियों के नाम हैं जो सुल्तान की सेना में सम्मिलित हुई थीं। मोहमंद, पठान, खुरसाण, मुगल काफिर आदि के नाम स्पष्ट है। मोहम्मदी, मीर, मोटे पठान, खुरसाण सभी उमड़ कर आए थे।

(११) "नगर की समस्त जनता से मिल कर उसने बधावा किया।"

११. चउपई यह है :—

नगर लोक सहु मिल्या, बधावइ चहुआण ;
गढ बधावइ अति घणउ, मरि मरि अँखि अयाण ॥१४॥

अर्थ यह है, "नगर के सब लोग मिले। वे चौहाण (हमीर) को बधाई देने लगे। अज्ञानी (बेसमझ) लोग आंख भर भर गढ को भी अत्यन्त बधाई देते थे।"

यह सब राजपूती प्रथा है। गढ़ के पूजन
लिए १९१ वीं चौपाई देखें। आगे गढ़ को लि
भी है।

(१२) केडि—क्रीडा १५०

१२. केडिका यह क्रीडा अर्थ उपयुक्त नहीं है
'केड़ि' का अर्थ पीछे या पश्चात् होता है गुजरात
और राजस्थानी में इस शब्द का प्रचुर प्रयोग पाय
जाता है।

(१३) "यह हम्मीर है जो कि दुर्ग के दृढ़ कपाट दे कर अड़ गया है; रणथम्भोर दुर्ग से भिड़ कर ही तू उसका समतुल्य जान सकेगा।

१३. छपद की अन्तिम दो पंक्तियाँ ये हैं :—
रे अलावदीन हम्मीर यह, दिढकिमाड आडउ खरउ
रिणथंभि दुर्ग लग्गिनटा, हिव जाणीयइ पटन्तरउ ॥१५१

यहाँ वास्तव में हम्मीर दृढ़ कपाट है। वह कपाट
दे कर अड़ नहीं गया है। 'भड़किंवाड़' चारणी साहित्य
का प्रसिद्ध शब्द है (भड़किंवाड़ शब्द के लिए नैणसी
की ख्यात, भाग २, पृष्ठ २७७ भी देखें। पाठान्तर
अर्थ शायद अन्यः सत्य हो।

(१४) हमीर ने कहा है कि नगर के नाम को मलिन कर वह दोनों अमीरों को न देगा और न हाथी-घोड़े या गढ़ को अर्पित करेगा

१४. यहाँ मूल पाठ 'न परणावउं डीकरी' को
गुप्तजी ने 'नयर नाम ऊंटीकरी' लिखा है और 'नगर'
के नाम को मलिन कर' अर्थ करने की कष्ट कल्पना
की है। देवलदे पुत्री के लिए बादशाह की मांग
थी जिसके उत्तर में हम्मीर ने फरमाया कि "पुत्री नहीं
परणाऊंगा"

१५. छत्तीस राजपूत जातियों के नाम।

१५. इनमें खाइड़ा, महुवड़ा, और रणमल्ल जाति नाम नहीं है। इसके लिये उदयपुर की प्रतिका पाठान्तर द्रष्टव्य है।

१६. युद्ध के आरम्भ में सुल्तानी सेना के आगे हम्मीर की सेना में भगदड़ पड़ गई जब निसुरतखां ने हम्मीर के नौ लाख सैनिक मारे।

१६. यह फिर दुरर्थ है। चउपई यह है :—

मार्या मीर मलिक जाम,
सगला दल मांहि पच्यउ भंगाण।
नवलखि मास्या निसरखान,
चंबारव पच्यउ तेणि ठाणि ॥१७२॥

वास्तविक अर्थ यह है :—

"जब उन्होंने मीर और मलिकों को मारा सब (सुलतानी) सेना में भगदड़ पड़ गई। नवलखी (द्वार) के पास नुसरतखान को जब राजपूतों ने मारा, तो उस स्थान में चीखना चिल्लाना शुरू हो गया।

नुसरतखां की मृत्यु के लिए आगे दिया ऐतिहासिक वृत्त देखें।

१७. 'शत्रु दल में हलचल पड़ गई और शाह-ए. आलम गढ़ पर चढ़ पड़ा।

१७. दोहा यह है :—

कटक मांहि हल हल हुइ, हुउ दमामे घाउ।
सुमट सनाह लेइ भला, चडिउ आलम साह ॥१७४॥

अर्थ यह है :—

"कटक में हलचल हुई। दमामों पर चोट पड़ी। वीरोचित अच्छा कवच धारण कर शाह-ए-आलम (अल्लाउद्दीन) ने गढ़ पर चढ़ाई की"।

१८. "हम्मीर के योद्धा तलवार सेल और सींगनियों से बाण चला रहे थे, जब कि सुल्तानी सेना के ओर से यंत्र, नालें और ढींकुलियां चल रही थीं और ऐयार मार काट कर रहे थे (१८६-१८७)

१८. इन चौपाइयों में कहीं यह निर्देश नहीं है कि इस पक्ष के योद्धा इन अस्त्रों को और विपक्ष के योद्धा उनसे भिन्न अस्त्रों को प्रयुक्त कर रहे थे।

१९. "पहिले दिन का युद्ध समाप्त होने पर लोग भोजन बनाने के लिए लकड़ी जला रहे थे कि बादशाह का 'फर्मान' वहां से हटने के लिए हुआ और सभी लोग अपना सीधा सामान लेकर वहां से हट गए"।

१९. इतिहास और भूगोल दोनों पर बिना ध्यान दिए शायद यही अर्थ संभव हो।

दोनों षटपद ये हैं :—

पहिलउ रिण पूरउ लाकडे, देइ आग बाल्यउ तिय मडे।
कटक सहू नइ हुयउ फुरमाण, बेलू नखाउ तिणि ठाणि ॥१९८॥
सुयण तणी बाधइ पोटली, मीरमलिक बेलू आपइ मरी।
न करइ कोई मूक गडवाल, बेलू आपइ सहि पोटली ॥१९९॥

इसके वास्तविक अर्थ के लिए पाठक गण ऐतिहासिक अवतरणों को देख लें। उनसे उनको निश्चय होगा कि चौपाइयों का वास्तविक अर्थ निम्नलिखित है :—

पहिले उन्होंने रिण (की खाई) को लकड़ी से भरा ; किन्तु उसे (हम्मीर के) सैनिकों ने जला डाला। (फिर) सब सेना को आज्ञा हुई 'उस स्थान पर बालू डलवाओ' सूथण (पायजामे) की पोटली बांध बांध कर मीर और मलिक बालू भर कर लाते। गढ के घेरने वाले कोई युद्ध न कर रहे थे। सभी पोटली में बालू ला रहे थे।"

गुप्त जी की भूल का कारण यहां वेलु का अर्थ बालू न करके ब्यालु (भोजन) समझना है जिससे वे दुरर्थ कर सके हैं अन्यथा यहाँ भोजन और सीधा सामान का प्रसंग ही क्या था ? यह शाही सेना थी, न कि भोजनभट्ट ब्राह्मणों की मंडली, जो सीधा सामान उठा कर चली गई।

फरिश्ता ने 'रिण की खाई' नाम देकर सब घटना का वर्णन किया है। इसामी की फुतूहुस् सलातीन और हम्मीर महाकाव्यादि से सब कथा पढ़ी जा सकती है।

२०. इसके बाद राजा नित्य पाल पर आता।

२०, चउपई का अंश यह है :—

'राउ आगलि नित पालउ पडइ' (२०३)

यहां राजा पाल पर नहीं आता। उसके सामने 'पालउ' पड़ता है। 'पाला' का अर्थ 'अखाड़ा' है ; सम्भवतः 'पाला पड़ना' यहां 'मजलिस लगने के' अर्थ में है।

२१ पद्यांश निम्नोक्त है :—

छट्ठई मासि संपूरण भयउ, ते देखो लोक मनि दराउ
कोसीसइ जइ पहुता हाथ, तुरका तणी सभी छइ वाच्छ
२००

राय हमीर चिंतातुर हूयउ, रिण पूरयउ दुर्ग हिव गयउ
गढ देवति लही परमाथ,आणी कुंची दीधी हाथि २०१

इसमें रिण के पूरा भर जाने पर गढ़ के कोसीसों तक हाथ पहुँचने लगे जिससे हम्मीर चिन्तातुर हुआ। गढ़ के अधिष्ठातृ देव ने परमार्थ (वास्तविक स्थिति) को समझ कर हम्मीर के हाथ में चाभी दी। राय ने तब बारीउघाड़ी और अधिष्ठातृ देव की माया से पानी बह निकला। पानी से बालू बह गई, वह झील फिर खाली हो गया।

२२. 'या वर्ष दिन' अर्थ के लिए यहाँ कोई अवकाश नहीं है। युद्ध का समय चउपई २१२, २१६, और २१७ में 'बार बरिस' है। चाहे युद्ध इतना न चला हो, हम्मीरायण के लिए यही अर्थ उपयुक्त है। मल्ल के २१ वें कवित्त में भी युद्ध का काल 'बरिस दुवादस' है। इससे 'बार' का ठीक अर्थ स्पष्ट है।

२३ श्रीमने में पैरों के पास बिठाने में कौन संघान है। पद्यांश यह है :—

२१· धीरे-धीरे छट्ठा महीना समाप्त हो गया और गढ़ के लोग चिन्तातुर हो उठे (२००) हम्मीर भी चिन्तित हुआ और उसने गढ़ देवता से युद्ध का परिणाम जानना चाहा (२०१)

२२ 'बार वर्ष (या वर्ष दिन ?) हो गए।'

२३ 'श्रीमने में वह इसे अपने पैरों के पास बिठाता है।'

"जिमणइ गोडइ बइसारइ पासि"· (२२४) यहां 'जिमणइ' का अर्थ 'जींवणा' या 'दाहिना अधिक उपयुक्त है। राज दरबार में राजा के निकट दाहिनी ओर बैठना सदा से प्रतिष्ठा सूचक रहा है। (देखो मानसोल्लास या बीकानेर, उदयपुर आदि राज्यों की दरबारी रीति-रिवाजों पर कोई पुस्तक)।

२४ 'पहले तुमने बड़े बड़े राज्यों को जीता है।'

२४ पद्यांश यह है ;—

" तं मोटउ अगंजित राव"

इसका अर्थ है, "तू बड़ा अजित राजा है।"

(अजित शब्द के महत्व को गुप्त सम्राटों की मुद्राओं पर देखें)

२५· 'यह तब समझा जायगा कि कोई बड़ा प्रधान तुम्हारे पास आया था जब तुम हमें सम्मान देकर वापस करोगे'

२५. पद्यांश यह है।

तउ तुम्हि आव्या बड़ा प्रधान।

घर मुकलावउ अम्ह नइ देइ मान ॥ २२५ ॥

"यह तब समझा जायगा" अर्थ न प्रासङ्गिक है और न शाब्दिक।

२६. 'उसे बल से क्यों नहीं ले लेते हो ?'

२६. पद्यांश यह है :—

"बंधवगढ नवि लीजइ प्राणि।"

इससे अगली पंक्ति में प्रधान कहते हैं कि यदि उन्हें पूरी बँदी दी जाय तो वे बल प्रयोग के बिना गढ दिला सकते हैं। इसलिए उपयुक्त अर्थ होगा—

"इसे बल के प्रयोग से नहीं लिया जा सकता।"

२७. 'कोठारी से उन्होंने कहा, "धान्य फेंक कर तुम भी सब के समान निश्चेष्ट पड़ जाओ।"

२७. पद्यांश यह है :—

कोठारी नइ बोल्यउ बिरउ,
धान नखावि सहु तउं परउ ॥२३४॥

इससे अग्रिम षटपद में हमें यह सूचना भी मिलती है। 'तिणि नीचि नाख्या सहु धान।' किन्तु दुर्ग में उस समय तक कोई निश्चेष्ट था ही नहीं। इसलिये निश्चेष्ट पड़ने का कोई प्रश्न ही नहीं है। धान नखावि (नखाव) सहु तउं परउ' का अर्थ यही है कि 'तू सब (सहु) धान्य दूर (परे, परउ) फिंकवा दे (नखाव)।'

२८. 'वे राजा को यह विश्वास दिलाते रहे कि उसकी सेना के आगे शत्रु निरंतर क्षीण पड़ता जा रहा है, केवल एक बार [और] उसे परिग्रह को [रणक्षेत्र में] देने की आवश्यकता थी।'

२८. षटपद यह है :—

रिणमल रइपाल मांगइ पसाउ; एक बार परघउ दइ राउ,
कटकि कीलउ करां अति भलउ, जे मैं तुरक पाड़ां
पातलउ ॥२३६॥

वास्तविक अर्थ यह है :—

"रिणमल और रायपाल ने यह प्रसाद (favour) मांगा, "एक बार राव हमें परिग्रह (सेना) दें। हम कटक में भली क्रीडा करेंगे, जिससे हम तुर्कों को कमजोर कर सकें।

अपभ्रंश और राजस्थानी के जानकार 'पसाउ' 'परघउ', 'कीलउ' 'पातलउ' आदि शब्दों से अच्छी तरह परिचित हैं। 'पातलउ' पातला (पतला) है।

२९. "इन दोनों ने प्रच्छन्न रूप से ऐसा कुछ किया कि सवा लाख (सपादलक्ष) का परिग्रह स्वामिद्रोह करके बादशाह से जा मिला।"

२९. चउपइ यह है :—

'राय तणइ मनि नहीं विशेष, द्रोहे कीधउ काम अलेख
सवालाख परिघउ (यइ) रावु, द्रोहे मिल्या जाइ पतिसाहि ॥२३७॥

'अलेख' का अर्थ 'अलेख्य है। इसी 'अलेख्य' कार्य को कवि ने २२२ वीं चउपई में भी इंगित किया है। द्रोह का उत्तरदायित्व शायद कवि ने प्रधानों पर ही रखा है।

(३०) जाजा ने कहा, "घर वह जावे जो माता पिता के अतिरिक्त तीसरे का जन्मा हो।"

(३०) पद्यांश यह है:—

'जाजउ कहइ ति जाउ,
जे जाया तिह जण तणा ॥२४८॥

संभवतः 'तिह जण' का अर्थ डा० गुप्त ने तीसरा जन किया है। वैसे "तिह जण" का अर्थ 'वह (अवक्तव्य) पुरुष' अर्थात् जार प्रतीत होता है। मल्ल के कवित्त में इसी प्रसंग में 'तंसै जणै' है (पृष्ठ ४९ दूहा ३)

(३१) महिमासाहि ने कहा कि तो यह कोठार के धान्य और गढ की रक्षा करेगा।

(३१) चउपई यह है:—

महिमासाहि हसिउं कहइ, निसुणि राय हमीर।
धान जोवाडि कोठार ना, गढ राखां तउ मीर ॥२५४॥

अर्थ यह है:—

महिमा साहि ने कहा, 'हे राय हमीर, सुनो। तुम कोठार के धान्य को दिखवाओ।" ('धान्य होगा) तो हम गढ रखेंगे।'

इससे अग्रिम चौपाई में यह वर्णित है कि राव ने कोठारी से पूछा कि कोठार में कितना धान है। बनिये ने सब भंडार खाली दिखा दिए।

(३२) उसने मुख्य माहेश्वरी को प्रधान बनाने तथा दोनों अमीरों को सम्मान देने के लिए कह कर कुमार को विदा किया।

(३२) मूल पद्यांश "रखे महेसरी करउ प्रधान (२२५) में 'रखे' शब्द का अर्थ डा० गुप्त ने गलत किया है यह अव्यय है और फलितार्थ निषेधात्मक है। श्री जिनराजसूरि और श्रीमद् देवचन्द्रजी' आदि राजस्थानी तथा गूजराती के कवियों ने इसका प्रचुरता से प्रयोग किया है। गुजरात में तो आज भी बोलचाल में निषेध पर बल देने के लिए यह शब्द पर्याप्त प्रचलित है। अतः यहां माहेश्वरी प्रधान बनाना निषिद्ध किया है। आगे महेसरी ना वाणिज्यो थान भी निषेध का ही समर्थक है।

(३३) मुकलावइ = मुक्त किया। (२७८)

(३३) मुक्त के स्थान पर 'विसर्जन करना या विदा देना अधिक उपयुक्त है।

(३४) "जमहर (जौहर) करने के लिए हम्मीर ने घोड़ा दौड़ाया।"

(३४) चउपई यह है:—

जमहर करी उछउ हुयउ, हमीर दे चहुआन।
मंगलाख रामति धणी, घोडई दियइ दमाम ॥२७९॥

हम्मीर ने जौहर करने के लिए नहीं अपितु जौहर कार्य से विरत होने पर घोड़ा दौड़ाया। जमहर स्त्रियों के लिए था; पुरुषों के लिए जौहर के बाद आमरणान्त युद्ध।

(३५) "[यह सुनकर] राजा ने अपने आप ही अपना गला काट डाला।"

(३५) पद्यांश यह है:—

राव पवाडउ कीयउ मलउ
आपणही सारयउ जै गलउ ॥२९३॥

राजा ने यह बड़ा पवाड़ा किया कि अपने ही हाथ अपना गला काट डाला।

'पवाड़ा' के अर्थ पर हमने आगे विचार किया है।

३६. उसने मांगा कि रणमल, रायपाल तथा गढ़ के कोठारी की खाल एक अंगूठा मोटी निकलवा ली जाय।

(३६) यह अर्थ संगत नहीं कहा जा सकता। मनुष्य की खाल और एक अंगूठा मोटी? वह गैंडा तो नहीं है। 'अंगूठा थकी का अभिप्रेत अर्थ 'अंगूठा मोटी' न होकर अंगूठे तक की (अर्थात् समस्त शरीर की) खाल है। अंग्रेजी में इसे Flaying alive कहते हैं।

हम्मीर महाकाव्य से तुलना

हम्मीर महाकाव्य में भी हम्मीर की कथा का विशद वर्णन है। हम्मीरायण का रचना समय सं० १५३८ है। हम्मीर महाकाव्य की रचना ग्वालियर के तंवर राजा वीरम के समय हुई, जिसकी ज्ञात निश्चित तिथियाँ सं० १४५८ और १४७९ हैं (तारीख मुबारकशाही, १७७; प्रशस्ति संग्रह, महावीर ग्रन्थमाला, द्वितीय पुष्प, जयपुर, पृ० १७३, पंक्ति २४)। हम्मीर महाकाव्य में हम्मीर की सब जीवनी का वर्णन है, उसकी जानकारी कुछ अधिक परिपूर्ण और प्राचीन आधारों पर आश्रित प्रतीत होती है। अलाउद्दीन से संघर्ष के बारे में दी हुई दोनों काव्यों की सूचनाओं में जो अन्तर है, उसे कोष्टक रूप में हम इस प्रकार प्रस्तुत कर सकते हैं:—

हम्मीरायण

१. जयतिगदे का पुत्र हम्मीर दे जब रणथंभोर में राज्य कर रहा था, अल्लाखान के विद्रोही सरदार महिमासाहि और मीरगाभरु ने हम्मीर की शरण ली। महाजनों ने उनके व्यय आदि को ध्यान में रखते हुए राजा को उन्हें निकाल देने की सलाह दी। किन्तु राजा ने इस पर ध्यान न दिया। इस पर अल्लाखान बहुत बड़ी सेना लेकर रणथम्भोर पर चढ़ आया। (१८-६६)

(२) अल्लखान की चुपचाप चढ़ाई का किसी को पता न था। किन्तु रास्ते में भाग्यवशात् जाजा देवड़ा भी वहीं आ ठहरा जहाँ अल्लखान की कुछ सेना का पड़ाव था। जाजा ने उसकी सेना को नष्ट किया और खबर

हम्मीर महाकाव्य

(१) जैत्रसिंह के पुत्र हम्मीरदेव ने गद्दी पर बैठते ही दिग्विजय का निश्चय किया और माळवा, मेवाड़, आबू, वदनोर, अजमेर, सांभर, मरोठ, खंडेला, चम्पा, ककराला, तिहुनगढ़ आदि पर विजय प्राप्त कर रणथम्भोर वापस आया। तदनन्तर उसने कोटि यज्ञ किया और पुरोहित के कहने पर एक मास का मौनव्रत धारण किया। उसी समय उल्लखान को अलाउद्दीन ने कहा, 'रणथम्भोर का राजा हमें कर दिया करता था। उसका पुत्र हम्मीर तो हम से बात भी नहीं करता। इस समय वह व्रत में स्थित है। तुम जाकर उसके देश का विनाश करो" (सर्ग ९,१-१०४)

(२) उल्लूखान बनास के किनारे पहुँचा। घाटी के अन्दर घुसने में अपने को असमर्थ पाकर वह वहीं ठहरा। सेनापति भीमसिंह और मन्त्री धर्मसिंह ने उसकी फौज पर आक्रमण किया। मुसलमानी फौज हारी। इधर-उधर लूटपाट कर धर्मसिंह तो रणथम्भोर की ओर लौट गया। किन्तु दुर्ग में प्रवेश करती समय भीमसिंह के सिपाहियों ने मुसलमानों से छीने हुए नगारों को बजा डाला। उसे अपनी जय का संकेत समझकर तितर-बितर हुए मुसलमानी

रणथम्भोर में दी। उधर अलूखान बढ़कर हीरापुर घाट पर जा उतरा। हम्मीरदे ने महिमासाहि और अनेक क्षत्रियों की सेना के साथ अलूखान पर आक्रमण किया। अलूखान पराजित होकर भागा और बादशाह तक पुकार हुई। (६७-८३)	सिपाही एकत्रित हो गए। भीमसिंह वीरता से युद्ध करता हुआ मारा गया। व्रत के पूरा होने पर हम्मीर ने धर्मसिंह को नपुंसक, अंधा आदि कहते हुए उसे वास्तव में शरीर से अन्धा और नपुंसक बना दिया। धर्मसिंह का पद उसने खांडाधर भोज को दिया। किन्तु कुछ दिन बाद धन की आवश्यकता पड़ने पर उसने अंधे धर्मसिंह को फिर अपने पुराने पद पर नियुक्त कर दिया। प्रजा को अनेक करों से पीड़ित कर उसने राजा के विरुद्ध कर दिया। भोज को भी राजा और धर्मसिंह ने इतना तंग किया कि वह और उसका भाई पीथसिंह यात्रा के बहाने दिल्ली जाकर अलाउद्दीन के नौकर हो गए। भोज के चले जाने पर हम्मीर ने दण्ड-नायक का पद रतिपाल को दिया (सर्ग ९,१०६-१८८)
३. अल्लाउद्दीन ने क्रुद्ध होकर बहुत बड़ी सेना एकत्रित की और रणथंभोर को जा घेरा। मोल्हउ भाट के मुख से की हुई देवलदेवी, गढ़, हाथी आदि की मांग हम्मीर ने ठुकरा दी।	३. भोज की सलाह से अलाउद्दीन की सेना ने फसल कटने से पहले रणथंभोर पर आक्रमण किया। उल्लूखान जब हिन्दूवाट पहुंचा तो हम्मीर के सेनानियों ने आठ ओर से उस पर आक्रमण किया, पूर्व से वीरम ने, पश्चिम से महिमासाहि ने, जाजदेव ने दक्षिण से, उत्तर से गर्भरूक ने, आग्नेय दिशा से रतिपाल ने, वायव्य से तिचर ने, ईशान से रणमल्ल ने और नैर्ऋत से वैचर ने। मुसल्मानी सेना बुरी

महिमासाहि और हम्मीर के राजपूतों ने मुसलमानी सैन्य को रौंद डाला और निसरखान को मार डाला। (८४-१७३)

४ अब सब प्रान्तों और देशों की फौज लेकर अलाउद्दीन ने आक्रमण किया। हम्मीर ने भी इस अवसर पर छत्तीस कुलके राजपूतों को बुलाया। युद्ध आरम्भ हुआ, बादशाह उसे एक ओर खड़ा देखता। बादशाही सेना हारी। बहुत से मीर और मलिक मारे गए। खबर लेने पर मालूम हुआ कि सवा लाख आदमी समाप्त हुए हैं। (१७४-१९२)

तरह पराजित हुई और उल्लूखान जान लेकर भागा। रतिपाल ने बन्दी मुसलमानी स्त्रियों से गाँव-गाँव में छाछ बिकवाई। राजा ने रतिपाल को खूब पुरस्कृत किया (१०-१-६३)

इसी समय हम्मीर से आज्ञा प्राप्त कर महिमासाहि आदि ने भोज की जागीर पर आक्रमण किया और उसके भाई को सकुटुम्ब पकड़ कर ले आए। एक तर्फ से रोता धोता भोजदेव और दूसरी ओर से पराजित उल्लूखान अलाउद्दीन के दरबार में पहुँचा।

अलाउद्दीन ने हम्मीर का समूल उच्छेद करने का निश्चय किया और राज्य के प्रत्येक प्रान्त से सेनाएँ मंगाई (१०-६४-८८) सुल्तान के भाई उल्लूखान और निसुरत्तखान ने हम्मीर को पराजित करने के लिए प्रयाण किया। दर्रों को पार करना कठिन था इसलिए दोनों भाइयों ने सन्धि-मन्त्रणा के बहाने मोल्हण को हम्मीर के पास भेजा, और छल से दर्रे में प्रवेश कर मुर्डा, प्रतोली और श्री मण्डपदुर्ग एवं जैत्रसर आदि के चारों ओर अपनी सेना के पड़ाव डाल दिए (११-१-२४)

मोल्हण दूत बना दरबार में पहुँचा, और उसने हम्मीर से लाख स्वर्णमुद्राओं चार हाथियों, तीन सौ घोड़ों और राजकन्या की माँग की। विशेषतः

मांग चार मुगलों की थी जिन्होंने उन भाइयों की आज्ञा भग की थी (११,५९-६०)। हम्मीर ने उसे धमकाते हुए कहा, यदि तुम दूत रूप में न आये होते तो मैं तुम्हारी जीभ निकलवा डालता। जिस तरह हाथी आदि के जीवित रहते कोई हाथी के दाँत, सर्प की मणि और सिंह की केसर-पंक्ति को नहीं ले सकता, इसी तरह चौहान के धन को उसके जीते कोई ग्रहण नहीं कर सकता। शरणागत शत्रुओं की सामान्य पुरुष भी रक्षा करते हैं। मुझ से मुगलों को मांगने वाले तुम्हारे स्वामी तो सर्वथा मूर्ख होंगे। मैं एक विस्वे के शतांश को भी देने के लिए तैयार नहीं हूं। जो तुम्हारे स्वामी से बन पड़े, वह करे (११-२५-६८)

हम्मीर ने उसके बाद पूरी तैयारी की मुसलमान सेनापतियों के दुर्ग-ग्रहण के अनेक प्रयत्नों को उसने विफल किया। एक दिन युद्ध में दुर्ग से चलाया हुआ एक गोला शत्रु के गोले से भिड़कर उछला और उससे निसुरत्तिखान मारा गया। (११-६९-९९)

निसुरत्तिखान का अन्तकृत्य कर इस बार अलाउद्दीन स्वयं रणथंभोर पहुँचा। प्रातःकाल होते ही हम्मीर ने आक्रमण किया। दिन भर घोर युद्ध हुआ। इसी प्रकार दूसरा दिन भी भयंकर युद्ध में

बीता। इस युद्ध में मुसलमानी फौज के ८५,००० योद्धा काम आए। (१२-१-८९)

५. एक दिन हम्मीर की मजलिस जमी थी। गाना हो रहा था। उसी समय सुन्दरी धारादेवी नर्तकी ने वहाँ आकर नृत्य शुरू किया। मयूरासन बन्ध से नृत्य करते हुए उसने ताल-त्रुटि के समय सुल्तान को पश्चाद्-भाग दिखाया। इससे खिन्न होकर अलाउद्दीन ने कहा, "क्या कोई ऐसा व्यक्ति है जो इसे बाण से मार गिराए। सुल्तान के भाई ने उत्तर दिया, 'तुमने उड्डानसिंह को कैद में डाल रखा है। वही यह काम कर सकता है।' बादशाह ने उड्डानसिंह की बेड़ियाँ कटवा दीं और उस पर कृपा दिखाई। उस दुष्ट ने बाण से धारा को मार कर दुर्ग की उपत्यका में गिरा दिया। महिमासाहि ने बादशाह को मारना चाहा, किन्तु हम्मीर के मना करने पर उसने उड्डानसिंह को ही मारा। इसके विनाश से चकित होकर अलाउद्दीन ने अपना डेरा तालाब के दूसरी ओर कर दिया। (१३-१-३८)

सुल्तान ने खाई को पूलियों, वस्त्रों, और लकड़ियों के टुकड़ों से भरवा दिया और एक ओर गढ़ के निकट सुरंग बनवा दी। किन्तु हम्मीर ने सारे सामान को अग्नि के गोलों से और सुरंग के कारीगरों

५. एक दिन हम्मीर सिंहासन पर बैठा था। उसके आदेश से महिमासाहि ने अलाउद्दीन के सातों छत्र काट डाले। सुल्तान ने लकड़ों से खाई को भरने का यत्न किया। जब हम्मीर के सैनिकों ने लकड़ियाँ जलादीं तो सुल्तान ने बालू से खाई को भर कर गढ़ लेने का प्रयत्न किया। किन्तु गढ़ के अधिष्ठातृ देव की माया से ऐसा पानी आया कि बालू बह गई।

(१९१-२०२)

हम्मीर के सामने धाड़ और बाड़ नर्त्तकियाँ सुल्तान को पीठ दिखाकर नाचती थी। सुल्तान ने धनुर्गुण महिमासाहि के भाया द्वारा उन्हें एक बाण से ही मरवा डाला।

बारह वर्ष तक इस तरह युद्ध चला (पद्य २१२) (२०३-२१२)

६. दिल्ली से वापिस आने की अर्ज होने लगी। तब बादशाह ने हम्मीर को कहला कर भेजा, "बारह वर्ष युद्ध की सीमा है। हम पर्याप्त रण-क्रीड़ा कर चुके हैं। अब मुझे विदा दो। मैं तो तुम्हारा मेहमान हूँ।" लोगों की सलाह से हम्मीर ने अपने दो अत्यन्त विश्वस्त प्रधानों को बात चीत के लिए भेजा। बादशाह ने उन्हें खूब मान दिया। उन्हें पूरी बून्दी और कुछ अन्य ग्रास का भी आश्वासन देकर बादशाह ने उन्हें अपनी ओर मिला लिया (२१३-२३०)

७. जब हम्मीर ने पूछा तो मन आई बात बना दी कि बादशाह तो

को लाख के तेल से जला दिया। इस प्रकार से उसने बादशाह के अनेक उपायों को व्यर्थ किया।

(१३-३९-४८)

६. वर्षा आ गई। यथा तथा संधान की इच्छा से अलाउद्दीन ने दूतों द्वारा रतिपाल को बुलाया। उसे खूब प्रसन्न किया। और उसके सामने अचल पसार कर कहने लगा, "मैं इस दुर्ग को लिए बिना गया तो मेरी सब कीर्ति लुप्त हो जाएगी। किन्तु मेरे सौभाग्य से तुम आ गए हो। मैं तो केवल विजय का इच्छुक हूँ। यह राज्य तो तुम्हारा ही होगा।" सुल्तान ने उसे खूब मदिरा पिलाई। बादशाह को वचन देकर रतिपाल वापस लौटा।

(१३-४९-८२)

७. रणथंमोर लौट कर रतिपाल ने राजा को भड़काते हुए कहा, "अलाउद्दीन कहता है कि यह मूर्ख अपनी लड़की को न देगा तो मैं उसकी स्त्रियों को

देवलदे को मांगता है। देवलदे ने कहा, "मुझे देकर तुम अपने को बचाओ। समझ लेना कि मैं पैदा ही नहीं हुई, या छोटी अवस्था में ही मर गई। किन्तु हम्मीर ने इस बात पर ध्यान न दिया। (२३१-२३३)

भी छीन लूँगा। इस पर मैं उसे भर्त्सना दे कर मैं चला आया हूँ। रणमल आप से नाराज है। इसलिए पाँच सात आदमी ले जा कर आप उसे राजी कर लें।" जब बोरम के पास हो कर रतिपाल निकला तो शराब की गंध से उसने अनुमान कर लिया कि रतिपाल शत्रु से मिल गया है। किन्तु राजा ने रतिपाल के विरुद्ध कार्य करना उचित न समझा। उधर रानियों के कहने से देवलदेवी पिता के पास पहुँची और अनेक नीतियुत वाक्यों से उसे अपने प्रदान के लिए समझाया। किन्तु इससे प्रसन्न होने के स्थान पर हम्मीर अत्यन्त क्रुद्ध हुआ। उसने पुत्री की बातों का समाधान कर उसे वापस अपने स्थान पर भेज दिया। (१३-८४-१२९)

८. कोठारी से मिल कर उन्होंने सब धान दूर गिरवा दिया। उससे कहा, हमें पूरी बूंदी मिली है हम तुझे प्रधान बनाएंगे। फिर रिणमल और रउपाल ने हम्मीर से सेना मांगी। उन्होंने कहा, हम ऐसी रणक्रीडा करेंगे कि शत्रु कमजोर पड़

८. उधर रतिपाल ने रणमल्ल के पास जाकर कहा, भाई! यहाँ से भागो। राजा तुम्हें पकड़ने आ रहा है। तुम्हें अभी विश्वास न हो तो सायंकाल के समय जब वह पाँच सात आदमियों के साथ आए तो मेरा वचन सत्य मान लेना।" राजा को उसी तरह आता देख रणमल्ल गढ़ से उतर कर शत्रु से आ मिला। उनकी दुश्चेष्टा से [illegible] . अब राजा ने कोठारी से अन्[illegible] तो धान्य

जाएगा।" संशय रहित राजा ने उन्हें सब सेना दी। वे बादशाह से जा मिले। गढ़ में कोई ऐसा व्यक्ति न रहा जिसके हाथ में हम्मीर हथियार दे। (२३४-२४०)

९. हम्मीर ने शेष लोगों को बुलाया और कहा, "मैं तुम्हारा ठाकुर हूँ, तुम मेरी प्रजा। कहो मैं तुम्हें कहाँ पहुंचाऊँ?" किन्तु वे जाने को राजी न हुए। उसने जाजा से कहा, 'जाजा तुम जाओ। तुम परदेशी पाहुणे हो।' किन्तु जाजा ने भी यह कहते इन्कार किया कि ऐसे समय में वही लोग जाएंगे जो ऐसे वैसे व्यक्तियों की सन्तान है। दोनों मीरों ने तो यह भी कहा कि वह उनका समर्पण कर दुर्ग का उद्धार करे। किन्तु हम्मीर इसके लिए तैयार न हुआ।

की इच्छा से उसने कहा कि अन्न है ही नहीं। (१३०-१३०-३७)

९. इस सार्वत्रिक कृतघ्नता से खिन्न होकर उसने महिमासाहि को बुलाया और कहा, तुम विदेशी हो। तुम्हारा यहाँ रहना उचित नहीं है। जहाँ कहो मैं तुम्हें पहुँचा दूँ। हम तो क्षत्रिय हैं। अपनी जमीन के लिए प्राणों की आहुति देना हमारा तो धर्म है।' इन वचनों से मर्माहत होकर महिमासाहि घर पहुँचा और स्त्री, बालकादि सब को तलवार की धार उतार कर हम्मीर से कहने लगा, "तुम्हारी भाभी जाने से पूर्व एकबार तुम्हारे दर्शन करना चाहती है।" राजा वहाँ पहुँचा और घर के उस बीभत्स दृश्य को देख कर मूर्छित हो गया। सचेतन होते ही महिमासाहि के गले लग कर अपने को धिक्कारता हुआ वह विलाप करने लगा। (१३८-१६६)

दुर्ग रक्षा का फिर विचार होने लगा। किन्तु हम्मीर ने जब कोठारी से धान्य के बारे में पूछा तो उसने जा कर खाली कोठे दिखा दिए (२४१-२५५)

१०. राजा ने अब जमहर (जौहर) करने का निश्चय किया। वीरमदे से उसने जाने के लिए कहा: किन्तु वह राजी न हुआ। तब उसने कुमार को तिलक दिया, उचित शिक्षा दी, और उसकी माँ के साथ उसे वहाँ से निकाल दिया। हाथियों और घोड़ों को हम्मीर के अनुयायियों ने मार डाला। घर घर में लोगों ने जमहर किए। तमाम रणथंभोर ऐसा जला मानों हनुमान् ने लंका में अग्नि लगाई हो।

इसके बाद हम्मीर ने फिर कोठे देखे तो उन्हें धान्य से परिपूर्ण पाया।

१०. वहाँ से लौट कर जब उसने कोष्ठागार को देखा तो उसमें उसे अन्न से परिपूर्ण पाया। जाहड ने झूठ बोलने का कारण भी बताया। "तेरी बुद्धि पर वज्र पड़े", कहते हुए राजा ने बाहर जाने के इच्छुक नागरिकों के लिए मुक्ति द्वार खोल दिया और बाकी को जौहर की आज्ञा दी। स्वयं दानादि दे और भगवान् जनार्दन की अर्चना कर वह पद्मसर के किनारे पर बैठ गया। रंगदेवी आदि रानियों ने अपने को सुभूषित किया। राजा ने संतुष्ट हो कर अपनी केशपट्टिका काट कर उन्हें दी। फिर देवलदेवी को गले लगा कर वह रो पड़ा। रानियां हम्मीर की केशपट्टिका हृदय पर रख कर अग्नि में प्रवेश कर गईं। उन्हें जलाञ्जलि देकर राजा ने जब जाजा को भेजा तो वह नौ हाथियों के सिर काट कर राजा के पास पहुंचा और कहने लगा, जिस प्रकार रावण ने शिव की अर्चना की थी, वैसे ही मैं तुम्हारी अर्चना करता हूँ। ये नौ सिर हैं, और दसवाँ सिर मेरा होगा।"

जाजा वीरमदे और दोनों मीर गढ़ की रक्षा के लिए तैयार थे, किन्तु हम्मीर ने कहा, "अब अनर्थ हो चुका है। अब जीने से क्या लाभ ?"

(२५६-२७७)

११. गढ़ मे केवल ये रहे-वीरमदे, हम्मीरदे, मीर (गाभरू), महिमा-साहि, माट और पाहुणा जाजा। हम्मीर घोड़े पर चढ़ा, किन्तु वीरम को पैदल देख कर घोड़े से उतर पड़ा और घोड़े को अपने हाथ से मार डाला। दोनों मीर, फिर जाजा, उसके बाद वीरम ने युद्ध किया हम्मीर ने स्वयं अपने हाथों गला काट कर अपनी इह लीला समाप्त की।

संवत् १३७१ ज्येष्ठ

वीरम ने राज्य को तिरस्कृत कर दिया, तव राजा ने प्रसन्नता पूर्वक जाजदेव को राज्य दिया, और स्वप्नागत पद्मसर के आदेशानुसार उसने सब द्रव्य पद्मसर में डाल दिया। फिर हम्मीर की आज्ञा से वीरम ने छाइड़का सिर काट डाला (१३-१६९-१९२)

११. वीरम, सिंह, टाक, गङ्गाधर, चारों मुगल बन्धु और क्षेत्रसिंह परमार इन वीरों के साथ हम्मीर युद्ध में उतरा। पहले वीरम काम आया। फिर शत्रु-बाणों से महिमासाहि को मूर्च्छित देख कर हम्मीर आगे बढ़ा और अनेक शत्रुओं का वध कर स्वयं अपने हाथ से ही मरा। उसके लिये यह असह्य था कि शत्रु उसे जीता पकड़ें। युद्ध की तिथि श्रावण शुक्र षष्ठी रविवार था। (१३-१९२-२२५)

सूर वंशी रतिपाल को और रणमल्ल को धिक्कार है। अभिनंद्य वह जाजा है जिसने हम्मीर की मृत्यु के बाद भी दो दिन तक दुर्ग की रक्षा की। दो न न कहने से हां का अर्थ बनता है यह सोचकर जिसने हम्मीर के "जा, जा" का अर्थ 'ठहर जा' किया और स्वामि की आज्ञा का भङ्ग किए विना उसकी सेवा की वह जाजा चिरजयी हो। अहङ्कार निकेतन उस महिमासाहि का वर्णन तो क्या किया जाए जिसने प्राणान्त पर भी शत्रु के सामने सिर न झुकाया। उस वीर महिमासाहि की बराबरी कौन कर सकता है जो पकड़े जाने पर पैर को आगे दिखाता हुआ

अष्टमी शनिवार के दिन हम्मीर काम आया और गढ़ टूटा। (२७८-२९४)

अलाउद्दीन की सभा में घुसा, और जिसने यह पूछने पर कि यदि मैं तुम्हें जीवित छोड़ दूँ तो तुम मेरे लिए क्या करोगे, यह उत्तर दिया, 'वही जो तुमने हम्मीर के लिए किया है।' (१४-१-२०)

१२. युद्ध के बाद अलाउद्दीन रणक्षेत्र में आया। जब उसने हम्मीर के विषय में पूछा तो रणमल ने पैर से उसे दिखाया। इतने में भाट नल्ह ने हम्मीर की विरुदावली पढ़ी और बादशाह को सब सिर दिखाए—राजा का जिसने जलहरी रूपी रणथंभोर में स्थित अपने स्वामीरूपी महादेव की अपने सिर से पूजा की थी, वीरम का गाभरू और महिमासाहि का और हम्मीर का भी। जब बादशाह ने उसे वर देना चाहा तो उसने यही प्रार्थना की कि स्वामिद्रोही रतिपाल आदि को प्राण-दण्ड दिया जाए और उसके बाद उसकी भी इह-लीला समाप्त की जाए। बादशाह ने रायपाल, रणमल, और बनिए की खाल निकलवा कर भाट को प्रसन्न किया। भाट का हनन कर उसने उसकी इच्छा पूर्ति भी की। राजा, मीर आदि की उसने उचित अन्त्य-क्रिया की। (२९५-३२१)

१२. पूछने पर जिसने रणक्षेत्र में पड़े हम्मीर के सिर को पैर से दिखाया, और पूछने पर राजा से प्राप्त कृपाओं का भी वर्णन किया, उस रतिपाल की अलाउद्दीन ने जो खाल निकलवा डाली वह ठीक ही किया। (इससे मानों उसने यह उपदेश दिया कि) कोई स्वामिद्रोह न करे। (१४-२१)

काव्य कथाओं में सत्यासत्य का विवेचन

हम ऊपर हम्मीरायण का सार दे चुके हैं । किन्तु तुलनात्मक दृष्टि से विषय के अध्ययन के लिए कोष्टकों में किसी अंश में उसकी पुनरावृत्ति आवश्यक हुई है। उन्हें देखने से यह स्पष्ट है कि हम्मीरायण और हम्मीरमहाकाव्य की कथाओं में पर्याप्त समानता है। हम्मीरमहाकाव्य के अनुसार हम्मीर की मृत्यु के बाद कवियों ने हम्मीर विषयक अनेक छोटी मोटी रचनाएं की। शायद यही रचनाएं हमारे काव्यों की मूलस्रोत हों । किन्तु यह भी असम्भव नहीं है कि 'भाण्डउ' व्यास ने हम्मीरमहाकाव्य को सुना और उसका कुछ आश्रय भी लिया हो।

विशेषतः कथाओं का अन्तर विवेच्य है। जहाँ दोनों कथाओं में भिन्नता है, उसमें कौन ग्राह्य है और कौन अग्राह्य ? न केवल यह कहना पर्याप्त है कि यह कथा कल्पित प्रतीत होती है, या 'यह अधिक प्रमाणिक है क्योंकि इसमें अधिक विस्तार नहीं है' । और न हम पारस्परिक कथाओं को केवल अन्य कथाओं के मौन के आधार पर ही एकान्ततः तिलांजलि दे सकते हैं। जो बात हमें एक स्थान पर न मिली है वह शायद अन्यत्र मिल सके। समसामयिक आप्त ग्रंथों और अभिलेखों के विरुद्ध जानेवाली परम्परा का हमें अवश्य त्याग करना पड़ता है। किन्तु वहाँ भी आप्तता आवश्यक है। पूर्वाग्रह वहाँ भी हो सकता है। मुसलमान इतिहासकार यदि हिन्दू राजा के विषय में कुछ लिखें या चारण और भाट किसी सुल्तान, अमीर आदि के विषय में तो दोनों के लेखों की कुछ परीक्षा करनी पड़ती है। इन्हीं बातों को ध्यान में रखते हुए हम अभिलेखों, खज़ाईनुल फुतूह, तारीखे फिरोजशाही, फुतूहुस्सलातीन, तारीखे फरिश्ता आदि तवारीखों

और चारणी साहित्य की अनेक पुस्तकों का विषय विवेचन में यथासमय प्रयोग करेंगे।

हम्मीरायण में हम्मीर के पिता का नाम जयतिगदे दिया है और हम्मीर महाकाव्य ने जैत्रसिंह। हम्मीर के वि० १३४५ के शिलालेख में जैत्रसिंह नाम ही है; किन्तु यह सम्भव है कि बोलचाल की भाषा में जैत्र सिंह का नाम जैतिग ही रहा हो। हम्मीरायण ने युद्ध का केवल मात्र यही कारण दिया है कि हम्मीर ने विद्रोही मुगल सरदार महिमाशाहि और गर्भरूक को शरण दी थी। हम्मीरमहाकाव्य को भी यह कारण अज्ञात नहीं है। किन्तु उसने मुख्यता अन्य राजनैतिक कारणों को दी है। एक देश में दो दिग्विजयी नहीं हो सकते। अलाउद्दीन को यह बात खलती थी कि रणथंभोर उसे कर नहीं दे रहा था; वही रणथंभोर जो किसी समय दिल्ली के अधीन था उधर हम्मीर कोटिमखी था; उसे अपने बल का गर्व था। भोज के प्रतिशोध की कथा याद में आती है उससे काव्य में रोचकता अवश्य बढ़ी है; किन्तु यह समझना भूल होगा कि हम्मीरमहाकाव्य ने उसे प्रमुखता दी है। वास्तव में उसका दृष्टिकोण प्रायः वही है जो तारीखे फिरोजशाही का। उसे भी मुहम्मदशाह की कथा ज्ञात थी, तो भी प्रमुखता उसने अलाउद्दीन की दिग्‌जिगीषा को ही दी है। और वास्तव में यह बात है भी ठीक। इन दोनों उच्चाभिलाषी व्यक्तियों में युद्ध अवश्यम्भावी था चाहे मुहम्मदशाह हम्मीर के दरबार में शरण ग्रहण करता या न करता। उत्तर के अन्य राज्यों में कौन मुहम्मदशाह पहुँचे थे जो अलाउद्दीन ने उनपर आक्रमण किया? विरोधाग्नि तो अलाउद्दीन के समय से पहले ही प्रज्वलित हो चुकी थी। उसमें मुहम्मदशाह को शरणदान ने एक प्रबल आहुति देकर

पूर्णतः प्रज्वलित कर दिया। इसके अतिरिक्त अन्य घटनाएँ भी हुईं जिनसे अल्लाउद्दीन को रणथम्भोर लेने के लिए और भी दृढ़प्रतिज्ञ होना पड़ा। अतः विवेचना से सिद्ध है कि युद्ध के कारण दोनों काव्यों में ठीक हैं। किन्तु हम्मीरायण ने केवल तात्कालिक कारण देकर सन्तोष किया है। हम्मीरमहाकाव्य की दृष्टि और कुछ गहराई तक पहुंची है[1]।

युद्ध की घटनाओं के वर्णन में कुछ अन्तर है किन्तु मुसलमानी तवारीखों को पढ़ने से प्रतीत होता है कि हम्मीरमहाकाव्य ने जलालुद्दीन के समय की कुछ घटनाएं सम्मिलित की हैं। भीमसिंह की मृत्यु और धर्मसिंह का अन्धीकरण शायद सन् १२९१ के लगभग हुए हों। धर्मसिंह पर पुनः कृपा सन् १२९१ और १२९८ के बीच में हुई होगी। हम्मीरायण आदि में इन घटनाओं का अभाव सम्भवतः इनके सन् १२९८ के पूर्व होने के कारण है। किन्तु भोजादि की कथाएं कल्पित नहीं हैं। खांटाधर या खड्गधर भोज भारतीय ऐतिह्य का प्रसिद्ध व्यक्ति है। उसने तन मन से अल्लाउद्दीन की सेवा की और वह अन्ततः कान्हडदे और सातल के विरुद्ध युद्ध करता हुआ मारा गया[2]। यही भोज सम्भवतः खेम के पन्द्रहवें कवित्त का भोज है; और यह भी बहुत सम्भव है कि मल्ल के दशवें पद्य में भी (जिसके आधार पर खेम का पन्द्रहवां पद्य लिखा गया है) भोज का नाम रहा हो। श्री

१—अलाउद्दीन की नीति के लिए देखें तारीखे फिरोजसाही, जिल्द ३, पृष्ठ १४८ (इलियट और डाउसन का अनुवाद); आगे दिए हुए मुस्लिम तवारीखों के अवतरण, "अर्ली चौहान डाइनेस्टीज" पृ १०८,१०९ और प्रस्तावना के अन्त में प्रदत्त हम्मीर की जीवनी।

२—देखें मरुभारती, भाग ८, पृ.११३-११४

अगरचन्दजी की प्राप्त प्रति में यह कवित्त त्रुटित है। भोज का भाई पीथम या पृथ्वीसिंह इसी तरह मल्ल के कवित्त ९ का 'प्रीथीराज' हो सकता है जिसके रणथम्भोर से प्रयाण और बादशाह से मिलने का स्पष्ट निर्देश, "प्रिथीराज परवाण कियौ, पतिसाही भेलो" शब्दों में है। ११ वें पद्य में फिर यही 'पीथल' के रूप में वर्तमान है। इसलिए यदि हम्मीरमहाकाव्य की प्रामाणिकता के लिए भोजादि व्यक्तियों का 'कवित्तादि' में निर्देश अभीष्ट हो, तो वह निर्देश भी वर्तमान है।

धर्मसिंह की कथा को कल्पित क्यों माना जाय? उसमें न असंगति है और न अलौकिकता। विद्यापति आदि ने उसका नाम न लिया है तो उसके अनेक कारण हैं। उनकी कथा अत्यन्त संक्षिप्त है। वह उन अमात्यों में भी न था जो भागकर अलाउद्दीन से जा मिले थे। वह हम्मीर के पतन का कारण बनता है; किन्तु केवल ऐसे रूप में जिसका अनुमान मात्र किया जा सकता है। ठोक पीट कर देखने से मालूम पड़ता है कि नयचन्द्र को नाम घड़ने की आदत न थी और उसे इतिहास की अच्छी जानकारी थी। और तो क्या उसकी तिथियाँ तक ठीक हैं। नयचन्द्र ने रणथम्भोर पर अलाउद्दीन के आक्रमण का कारण उसकी दिग्विजीषा, और रणथम्भोर के पतन का कारण मुख्यतः हम्मीर की गलत आर्थिक नीति को समझा है। नयचन्द्र ने वास्तव में जिस रूप से कथा को प्रस्तुत किया वह उसे काव्यकार के ही नहीं, इतिहासकार के पद पर भी आरूढ़ करता है। अलाउद्दीन से विग्रह बन्ध चुका था। बहुत बड़ी सेना, विशेषतः मुद्गलों को रखना आवश्यक था। अतः धर्मसिंह को अपना अर्थ-सचिव बनाकर उसने प्रजा पर गृब कर लगाए। यह आर्थिक उत्पीड़न हम्मीर के पतन का मुख्य

कारण बना। यही तथ्य हम्मीरायण के कर्ता 'भाण्डउ' को भी ज्ञात था। हम्मीरायण के महाजन भी सैनिक व्यय के विरुद्ध आवाज उठाते हैं; किन्तु सब व्यय के विरुद्ध नहीं, अपितु उस व्यय के जो मीर भाइयों के वेतन के कारण उन पर लद गया था।[१]

हम्मीर महाकाव्य और हम्मीरायण दोनों ही जाजा को प्रमुखता देते हैं, किन्तु दोनों के स्वरूप में कुछ अन्तर है। हम्मीरायण का जाजा प्राहुणा है। वह घोड़े बेचने निकला है, और दैववशात् उसी स्थान पर पहुंच जाता है जो उलूखाँ ने घेरा है। उसके सवार मुस्लिम सेना विनाश करते हैं और वह उलूखां के आने की सूचना रणथम्भोर पहुंचाता है। हम्मीर उसे बहुत धन देता है। जब उलूखां हीरापुरघाट होकर छाइणी (झाईन) नगर को जलाकर उसके राज्य स्थान को ढहाकर बढ़ता है और हम्मीर, महिमासाहि और गाभरू को साथ लेकर रात के समय मुसलमानी सैन्य पर आक्रमण करता है, हम्मीरायण के जाजा का इसमें कुछ विशेष हाथ नहीं है।

हम्मीर महाकाव्य में जाजा हम्मीर के वीर सेनानी के रूप में वर्तमान है। वह हम्मीर के आठ प्रधान वीरों में एक है। वह उन सेनानियों में से

---

१ मुसल्मानी तवारीखों में धर्मसिंह का नाम नहीं है। किन्तु उन्होंने दिल्ली सल्तनत का इतिहास लिखा न कि हम्मीर के राज्य का। अन्य बातों में भी हिन्दू साधनों पर अनैतिहासिकता का आक्षेप करते समय लेखकों को मुसलमानी इतिहासों की अपूर्णता और उनके पूर्वाग्रहों का भी ध्यान रखना चाहिए। उनमें परस्पर विरोध भी पर्याप्त हैं।

जिन्होंने अलाउद्दीन के प्रसिद्ध सेनापति उलूगखां के छक्के छुड़ा दिए थे। हम्मीर शम्भु तो जाजा उसके लिए सिर अर्पण करने के लिए समुद्यत रावण है।[1] जाजा वह वीर है जो अन्तिम गढ़रोध में अभिषिक्त होकर स्वामी की मृत्यु के बाद भी ढाई दिन तक गढ़ की रक्षा करता है। वह जाति से 'चौहान' है।

हम्मीरायण ने भी आगे जाकर जाजा के शौर्य की पर्याप्त प्रशंसा की है। उसमें भी एक स्थान पर रणथम्भोर को जलहरी, हम्मीर को शम्भु जाजा को सिर प्रदान करनेवाले भक्त से उपमित किया गया है (३०५) किन्तु उसके कुछ कथन हम्मीर महाकाव्य के विरुद्ध पड़ते हैं। वह सर्वत्र प्राहुणे के रूप में वर्णित है। वह देवड़ा भी है जो चौहानों की शाखा विशेष है। देवड़े चौहान हैं; किन्तु उन्हें देवड़ा कहकर ही प्रायः सम्बोधित और वर्णित किया जाता है। इससे अधिक खटकनेवाली बात यह है कि वह विदेशी के रूप में वर्णित है :—

जाजा तुं घरि जाइ, तुं परदेसी प्राहुणउ।

म्हे रहीया गढ़ माहि, गढ गाढउ मेल्हां नहीं॥ २४७॥

हम्मीर गढ़ में रहेगा; वह उसकी चीज है, उस द्वारा रक्ष्य है। किन्तु जाजा परदेशी अतिथि है। उसे गढ़ की रक्षा में प्राणोत्सर्ग करने की आवश्यकता नहीं। वह अपने घर आए तो इसमें कोई दोष नहीं। यही बात सामान्यतः परिवर्तित शब्दों में 'कवित्त रणथंभोर रै राणै हमीर हठालै रा' में भी वर्तमान है (पृ० ४९, दोहा १-२)। किन्तु उसका कर्त्ता कवि मल्ल 'माण्डउ' से एक कदम और आगे बढ़ गया है। उसने जाजा को वह

१ रावणः शम्भुमानर्च तथा त्वामर्पयाम्यहम्।

गूजर बना दिया है (पृ० ४४, पद्य २)। इससे अधिक कथा का विकास 'भाट खेम रचित राजा हम्मीरदे कवित्त' में है जिसके अनुसार 'जाजा बड़ गूजर प्राहुणा (मेहमान) होकर आया था। उसे राजा हमीर ने अपनी बेटी देवलदे विवाही थी। वह मुकुटबद्ध ही मरा। देवलदे राणी तालाब में डूब कर मर गई' (देखें 'बात', पृ० ६४)

किन्तु जाजा-विषयक प्राचीन सूचनाओं में तो उसका परदेशित्व आदि कहीं सूचित नहीं होता। प्राकृतपैङ्गलम् के अन्तर्गत जाजा-सम्बन्धी पद्यों में हम्मीर उसका स्वामी है (पृ० ३९, पद्य ३), और वह उसका अनुयायी मन्त्रि-वर है[१] (पृ० ४०, पद्य ४) वह प्राहुणा नहीं, हम्मीर का विश्वस्त योद्धा है। 'पुरुष परीक्षा' में भी हम्मीर जाजा को चला जाने के लिए कहता है, किन्तु इसका कारण जाजा का विदेशित्व नहीं है (देखें परिशिष्ट ३, पृ० ५४)। हम्मीर विषयक प्राचीन प्रबन्धों में विदेशित्व तो महिमासाहि आदि तक ही परिमित है। हम्मीर महाकाव्य में हम्मीर महिमासाहि से कहता है :—

> प्राणानपि मुमुक्षामो वयमात्मक्षितेः किल।
> क्षत्रियाणामयं धर्मो न युगान्तेऽपि नश्वरः॥ १४९॥
> यूयं वैदेशिकास्तद्वः स्थातुं युक्तं न सापदि।
> यियासा यत्र कुत्रापि ब्रूत तत्र नयामि वत्॥ १५१॥

---

१ पुर जज्जला मंतिवर, चलिअ बीर हम्मीर॥
डा० माताप्रसाद गुप्त 'मत्त' पाठ को विशेष उपयुक्त समझते हैं। इस पाठ पर हम अन्यत्र विचार करेंगे।

"हम अपनी भूमि के लिए प्राण त्याग के लिए भी इच्छुक रहते हैं। यह क्षत्रियों का वह धर्म है जो प्रलयकाल में भी प्लुत नहीं होता। तुम विदेशी हो, इसलिए आपत्तियुक्त इस स्थान में तुम्हारा रहना उचित नहीं है। जहाँ कहीं जाने की इच्छा हो, कहो मैं तुम्हें वहाँ पहुंचा दूं।"

पुरुष परीक्षा का कथन और भी ध्येय है। जब हम्मीर जाजादि से चले जाने के लिए कहता है तो वे उत्तर देते हैं:—

"आप निरपराध राजा (होते हुए भी) शरणागत पर कृपाकर संग्राम में मरण को अङ्गीकृत करते हैं। हम आपकी दी हुई आजीविका खानेवाले हैं। अब स्वामी आपको छोड़कर हम कैसे कापुरुषों की तरह आचरण करें। किन्तु कल सुबह महाराज के शत्रु को मारकर स्वामी के मनोरथ को पूर्ण करेंगे। हाँ, इस विचारे यवन को भेज दीजिए।" यवन ने कहा, "हे देव! केवल एक विदेशी की रक्षा के लिए आप अपने पुत्र, स्त्री और राज्य को क्यों नष्ट कर रहे हैं। राजाने कहा, 'यवन, ऐसा मत कहो। किन्तु यदि तुम किसी स्थान को निर्भय समझो तो मैं तुम्हें वहाँ पहुँचा दूं।" (परिशिष्ट ३, पृ० ५४)। उक्ति-प्रयुक्ति से स्पष्ट है कि हम्मीर के योद्धा-समाज में केवल एक विदेशी है, और वह जाजा नहीं, अपितु महिमासाहि है।

'भाण्डउ' ने न जाने क्यों जाजा पर विदेशित्व का ही आरोपण नहीं किया, अपितु महिमासाहि के लिए प्रयुक्त युक्तियों को भी जाजा के लिए प्रयुक्त किया है। महिमासाहि को जो वचन हम्मीर ने कहे थे उन्हें हम अभी उद्धृत कर चुके हैं। भाण्डउ की कृति में हम्मीर प्रायः यही शब्द जाजा से कहता है:—

जाजा तुं घरि जाइ, तुं परदेसि प्राहुणउ।
म्हे रहीया गढ़ माँहि, गढ गाढउ मेल्हां नहीं॥

एक उक्ति मानों दूसरे का भावानुवाद है। जाजा के विदेशित्व के स्वीकृत होने पर कथा जिस रूप में बढ़ी हम ऊपर उसका निर्देश कर चुके हैं।

प्रसङ्गवश जाजा के विषय में इतना लिख कर[1] हम फिर इन दोनों काव्यों में वर्णित घटनावली पर विचार करेंगे। यह सर्वसम्मत है कि अलाउद्दीन स्वयं रणथंभोर के घेरे के लिए पहुंचा। किन्तु हम्मीरायण में हम्मीर के रात्रि के आक्रमण के अनन्तर ही सुल्तान रणथंभोर आ पहुंचता है। हम्मीर महाकाव्य का घटना क्रम कुछ भिन्न है। उलुगखां की पराजय के बाद मीर भाइयों ने भोज की जगरा पर आक्रमण किया। भोज वहाँ न था। किन्तु उसका भाई और दूसरे कुटुम्बी मुहम्मदशाह के हाथ पड़े। भोज ने जाकर अलाउद्दीन के दरबार में पुकार की। किन्तु इस बार भी अलाउद्दीन स्वयं न आया। उसने उल्लू और निसुरत्तखान (उल्लूग्खां और नुसरतखाँ) को ही युद्ध के लिए भेजा। सन्धि का बहाना कर अब की बार ये घाटी को पार कर गए। मुण्डी और प्रतौली में नुसरतखाँ और मण्डप

---

१. जज्जल के महत्त्वपूर्ण व्यक्तित्व पर हमने आज से बारह वर्ष पूर्व इण्डियन हिस्टॉरिकल क्वार्टरली, १९४९, पृष्ठ २९२-२९५ पर एक लेख प्रकाशित किया था। डॉ० हजारीप्रसादजी द्विवेदी की 'हिन्दी साहित्य के आदिकाल' की 'आलोचना' में आलोचना करते समय भी हमने यह भी सिद्ध किया था कि प्राकृत पैंगल का जज्जल कवि नहीं अपितु हम्मीर का सेनापति जाजा है।

में उल्लूगखाँ की सेना जा पहुँची; और वहीं से उन्होंने मोल्हण को अपना दूत बनाकर हम्मीर के पास भेजा। हम्मीरायण में स्वयं अलाउद्दीन मोल्हा को भेजता है। मुसलमानी तवारीख फुतूहुस्सलातीन के आधार पर हमें हम्मीरमहाकाव्य का ही कथन मान्य है।[1] दोनों की माँग में कुछ अन्तर है। हम्मीरमहाकाव्य में यह माँग लाख स्वर्णमुद्राओं, चार हाथियों, चार मुगलों, राजकन्या, और तीन सौ घोड़ों के लिए है। हम्मीरायण में अलाउद्दीन कुछ माँगता ही नहीं, अपनी माँग के स्वीकृत होने पर मांडू, उज्जयिनी, सांभर आदि भी देने के लिए तैयार है। उसमें हाथियों की संख्या अनिश्चित और मुगलों की दो है, जो शायद ठीक है। साथ ही इसमें धारु और वारु नाम की नर्तकियों के लिए भी माँग की गई है। दोनों काव्यों का उत्तर एक सा। ऐसा ही उत्तर 'सुर्जन चरित' में भी वर्णित है; और इसकी सत्यप्रत्ययता फुतूहुस्सलातीन द्वारा समर्थित है।[2]

नुसरतखाँ की मृत्यु का प्रसङ्ग दोनों काव्यों में है। किन्तु नुसरतखाँ किस तरह मरा इसका ठीक वर्णन तो हम्मीरमहाकाव्य में है। तारीखे फिरोज शाही से भी हमें ज्ञात है कि जब नुसरतखाँ पाशीब और गरगज तैयार कर रहा था; दुर्ग पर की किसी मगरिबी का गोला उसे लगा और वह बुरी तरह घायल हो कर तीन चार दिन में मर गया। हम्मीरमहाकाव्य में और तारीखे फिरोजशाही में भी अलाउद्दीन इसी के बाद स्वयं रणथंभोर पहुँचता है। उसके पीछे दिल्ली में विद्रोह हुआ और भन्दर भी; किन्तु सुल्तान रणथंभोर के सामने से न हटा।[3]

---

१. फुतूहुस्सलातीन का अवतरण आगे देखो।

२. ,, ,, ,, ,, ,,

३. तारीखे फिरोजशाही का अवतरण आगे देखें।

फरिश्ता ने हम्मीरमहाकाव्य के इस कथन का भी समर्थन किया है कि हम्मीर ने दुर्ग से निकल कर मुसल्मानों को बुरी तरह से हराया। यह पराजय इतनी करारी थी कि एकबार तो मुसल्मानी सैन्य को घेरा उठा कर झाईन के दुर्ग में आश्रय लेना पड़ा।[1] हम्मीरायण में मारी गई मुसल्मानी सेना की संख्या सवा लाख और हम्मीरमहाकाव्य में ८५,००० है। वास्तव में मारे गए मुसल्मानी सैनिकों की संख्या ८५,००० से भी पर्याप्त कम रही होगी। एक दो दिन की लड़ाई में उन दिनों इतने आदमियों का हत होना असम्भव था।

हम्मीर की नर्तकी धारू के मारे जाने की कथा दोनों काव्यों में है। हम्मीरायण ने बारु नाम और बढ़ा दिया है। मल्ल और खेम की कवित्तों में भी एक ही नर्तकी है। धारू, वाराङ्गना का ही पर्याय है, भाण्डउ ने उसे अलग समझ लिया मालूम देता है। इस कथा की वास्तविकता का कोई निश्चय नहीं किया जा सकता। प्रायः ऐसी ही कथा कान्हडदे – प्रबन्ध में भी है।

गढ़ रोध के वर्णन में भी समानता है। हम्मीरमहाकाव्य में अलाउद्दीन के खाई को पूलियों और लकड़ी के टुकड़ों से भरने और दुर्ग तक सुरंग पहुँचाने के प्रयत्नों का वर्णन है। जिस तरह हम्मीर ने इन प्रयत्नों को विफल किया उसका भी इसमें निर्देश है। यह वर्णन मुसल्मानी इतिहासकारों द्वारा समर्थित है। हम्मीरायण में खाई को बालू के थेलों से पाट कर और उन्हीं के बृहत् ढेर पर चढ़ कर गढ़ के कंगूरों तक पहुँचने का मनोरञ्जक वर्णन है। मुसल्मान इतिहासकारों ने लिखा है कि अलाउद्दीन ने बाहर से मँगवा कर सेना में थेले बँटवाए थे। 'भाण्डउ' ने उनके पायजामों की ही बालू की पोटलिया बनवा दी है। इस वर्णन में हम्मीरमहाकाव्य और

---

१. आगे दिया तारीखे फरिश्ता का अवतरण देखें।

हम्मीरायण ने एक दूसरे की अच्छी अनुपूर्ति की है और दोनों का ही वर्णन तत्कालीन इतिहासों से समर्थित है। थोरी पर थोरी डालकर मुसल्मान सैनिकों ने एक पाशीब तैयार की। जब यह पाशीब दुर्ग की पश्चिमी बुर्ज की ऊँचाई तक पहुँची, तो उन्होंने उस पर मगरिबियाँ रखीं और उनसे किले पर बड़े-बड़े मिट्टी के गोले चलाने शुरू किए, चौहानों ने अपनी मगरिबियों के गोलों से पाशीब को नष्ट कर दिया। सुरंग बनाने वाले सिपाहियों को राळयुक्त तेल के प्रयोग से चौहानों ने मार डाला।[1]

दोनों ओर की यह झपट कई दिन तक चलती रही। किन्तु हम्मीरायण का उस समय को बारह वर्ष बतलाना अशुद्ध है। चारणी शैली में गढ़रोध को बारह वर्ष तक पहुँचाना सामान्य-सी बात रही है। अलाउद्दीन ने राजस्थान के अनेक दुर्गों को लिया। प्रायः हर एक गढ़रोध का समय बारह साल है, चाहे वास्तव में बारह महीने से अधिक समय दुर्ग को हस्तगत करने में न लगा हो।

दोनों काव्यों में लिखा है कि अन्ततः अलाउद्दीन गढ़रोध से थक गया। यह कथन किसी अंश में मुसल्मानी इतिहासों द्वारा समर्थित है। दिल्ली और अवध में विद्रोह के समाचारों से मुसल्मानी सिपाहियों की हिम्मत टूट रही थी। किन्तु उनके हृदय में सुल्तान का इतना भय था कि किसी को इतना साहस न हुआ कि वह रणथंभोर को छोड़कर चला जाए।[2]

अलाउद्दीन से बातचीत का वर्णन दोनों काव्यों में है। किन्तु हम्मीरा-

१. तारीखे फिरोज़शाही इ० डी० ३, पृ० १७४-५

२. वही, पृ० १७७

यण के वर्णन में शुरू से ही रतिपाल (रायपाल) और रणमल्ल (रिणमल) अलाउद्दीन के दरबार में पहुंचते हैं। हम्मीरमहाकाव्य में रणमल्ल का विद्रोह रतिपाल की कारिस्तानी का फल है। किन्तु इनमें से कोई भी कथन ठीक हो, यह तो निश्चित ही है कि हम्मीर के ये दोनों प्रधान सेनानी शत्रु से जा मिले थे।[1]

हम्मीरायण और हम्मीरमहाकाव्य में कोठारी के विश्वासघात या मूर्खता के कारण हम्मीर को यह झूठी सूचना मिलती है कि दुर्ग में धान्य नहीं है। किन्तु खज़ाइनुल फुतूह के वर्णन से तो प्रतीत होता है कि दुर्ग में अन्न का वास्तव में अकाल पड़ चुका था। अमीर खुसरो ने लिखा है, "हाँ, उनकी सामग्री समाप्त हो चुकी थी। वे पत्थर खा रहे थे। दुर्ग में धान्य का अकाल इस स्थिति तक पहुँच चुका था कि एक चावल का दाना दो स्वर्णमुद्राओं से वे खरीदने को तैयार थे और यह उन्हें न मिलता था।[2] अलाउद्दीन को इस अन्नाभाव की सूचना देकर रतिपाल और रणमल्ल ने मानों दुर्ग के पतन को निश्चित ही बना दिया। हम्मीरायण और हम्मीरमहाकाव्य का यह कथन कि वास्तव में भण्डार अन्न परिपूर्ण थे, सम्भवतः ठीक नहीं है। इसी अन्नाभाव के कारण सम्भवतः हम्मीर की बहुत सी सेना उसे छोड़कर चली गई थी।

दुर्ग में जौहर की कथा सभी ग्रंथों में वर्तमान है। मुसल्मानों ने भी इसकी ज्वालाओं को देखा; और अनुमान किया कि गढ़रोध समाप्ति पर

---

१. हम्मीर के कवित्त में भी (देखो पृ० ४७) में अनेक स्वामिद्रोहियों के नाम हैं। इनमें बीरम को झूठ मूठ समेट लिया गया है।

२. हबीब (अनुवादक), खज़ाइनुलफुतूह, पृ० ४० ।

है।[1] यह कथा दोनों ही काव्यों में वर्तमान है कि महिमासाहि ने अन्त तक हम्मीर का साथ दिया। किन्तु हम्मीरमहाकाव्य में मुहम्मदशाह के अपने बाल-बच्चों और स्त्री को असिसात् करने की कथा अधिक है। एक मुसल्मान वीर के लिए सम्भवतः जौहर का यही उचित स्वरूप था। काड़ी का जौहर का वर्णन आज कल की Scorched earth Policy की याद दिलाती है जिसमें इस लक्ष्य से कि कोई वस्तु शत्रु के हाथ में न पड़े, सभी वस्तुएँ भस्मसात कर दी जाती है। जौहर में स्त्रियों की आहुति ही न होती, हाथी, घोड़े आदि उपयोगी जीव मार दिए जाते, और सार द्रव्य प्रायः बावड़ी, कुएँ आदि ऐसे स्थानों में फेंक दिए जाते जहाँ से शत्रु उनको न प्राप्त कर सकें। रणथंभोर के दुर्ग में भी इसी नीति का अनुसरण किया गया था।

जौहर से पूर्व राजवंश के एक कुमार को गद्दी देकर बाहर निकालने की कथा हम्मीरायण में वर्तमान है। हम्मीरमहाकाव्य के अनुसार राजा ने प्रसन्नतापूर्वक राज्य जाजा को दिया। इस विरोध का परिहार शायद किया जा सकता है। हम्मीर ने एक स्ववंशज कुमार को बाहर निकाल दिया; किन्तु अपनी मृत्यु के बाद भी दुर्ग के लिए युद्ध करने का भार जाजा को दिया। जालोर में यही कार्यभार कान्हड़दे के वीर पुत्र वीरम ने संभाला था।[2]

हम्मीरायण ने अन्तिम युद्ध में ६ व्यक्तियों की उपस्थिति लिखी है

---

१. देखें हमारी पुस्तक Early Chauhan Dynasties पृ. १६६, टिप्पण ५८

२. वही पृ. ११४।

वीरम, हम्मीर, मीर गाभरू, महिमासाहि और जाजा। हम्मीरमहाकाव्य में हम्मीर के अन्तिम युद्ध में जाजा उसका साथी नहीं है। उसे राज देकर दुर्ग में छोड़ दिया गया है। उसके साथी चार मुगल बन्धु, टाक गङ्गाधर वीरम, क्षेत्रसिंह परमार और सिंह हैं। इस युद्ध में सम्बन्ध हिन्दू-हिन्दू का नहीं, केवल अभिन्न मैत्री और स्वामिभक्ति का है। हम्मीर के सेवक एक एक करके उसे छोड़ गये तो भी मुगल बन्धु अन्त तक उसके साथ रहे। हम्मीरायण के अनुसार महिमासाहि (मुहम्मद शाह) ने युद्ध में प्राण त्याग किया। किन्तु हम्मीर महाकाव्य में उसके मूर्च्छित होने और सचेतन होने पर अलाउद्दीन से उत्तर प्रत्युत्तर का हम ऊपर उल्लेख कर चुके हैं। हम्मीरमहाकाव्य ही का कथन इसमें ठीक है। तारीखे फिरिश्ता और तबकाते अकबरी ने भी इसके वीरोचित उत्तर का उल्लेख किया है। अलाउद्दीन ने मुहम्मदशाह को घायल पड़े देखा तो कहने लगा, "मैं तुम्हारे घावों की चिकित्सा करवाऊं और तुम्हें इस आफत से बचा लूं तो तुम मेरे लिए क्या करोगे और इसके बाद तुम्हारा व्यवहार कैसा होगा?" वीर मुहम्मदशाह ने उत्तर दिया "मैं ठीक हो गया तो तुम्हें मारकर हम्मीरदेव के पुत्र को सिंहासन पर बिठाउंगा, इस उत्तर से क्रुद्ध होकर अलाउद्दीन ने उसे मस्त हस्ती से कुचलवा दिया। किन्तु उसने मुहम्मदशाह को अच्छी तरह दफनाया। स्वामीभक्ति की वह कद्र करता था[१२] दूसरों को जैसा काव्यों में लिखा है समुचित सजा मिली। रणमल्ल, रतिपाल और उनके साथियों को मरवा दिया गया। फिरिश्ता के शब्दों में "जो लोग अपने चिरंतन स्वामी को धोखा देते हैं, वे किसी दूसरे के नहीं हो सकते[१]।"

---

१ वही पृ० ११४

हम्मीर महाकाव्य में हम्मीर के देहावसान के बाद दो दिन तक जाजा के युद्ध का वर्णन है। "प्राकृतपैङ्गलम्" आदि में जो अनेक उक्तियाँ जाजा के सम्बन्ध में हैं, उन में कुछ का जाजा के इस अन्तिम युद्ध से सम्बन्ध हो सकता है। जाजा हम्मीर के लिए क्या नहीं करने को उद्यत था, सेना में सब से अग्रसर हो युद्ध करने के लिये, सुल्तान के सिर पर अकेले बढ़ कर तलवार चलाने, सुल्तान के क्रोधानल में आहुति देने, और अपने स्वामी की शिरः कमल द्वारा पूजा करने के लिए, स्वामिभक्ति के इतिहास में जाजा का नाम अग्रगण्य है। हम्मीरायण ने गढ़ पतन की तिथि संवत् १३७१ रखी है जो सर्वथा अशुद्ध है। अमीर खुसरो की दी हुई तिथि १० जुलाई, सन् १३०१ (वि० सं० १३५८) है और हम्मीर महाकाव्य की तिथि १२ जुलाई बैठती है जो जाजा के राज्य के दो दिनों को सम्मिलित करने से ठीक ही बैठती है।

हम्मीरायण और कान्हड़दे प्रबन्ध

हम ऊपर इस बात का निर्देश कर चुके हैं कि हम्मीर महाकाव्य और हम्मीरायण के मूल स्रोत सम्भवतः कई ऐसे फुटकर काव्य हैं जिनकी रचना हम्मीरदेव के देहावसान के थोड़े समय के अन्दर हुई थी। 'भाण्डउ' व्यास और हम्मीर महाकाव्य की कथा में साम्य का यह कारण हो सकता है। किन्तु स्थान-स्थान पर यह भी प्रतीत होता है कि भाण्डउ व्यास ने हम्मीर महाकाव्य से कुछ बातें ली हैं; और ऐसा करना अस्वाभाविक भी तो नहीं है।

कान्हड़दे प्रबन्ध और हम्मीरायण में भी काफी समानता है। कथा का

विन्यास प्रायः वही है। जालोर और रणथंमोर का वर्णन, सेना का प्रयाण, महमद अहमद, काफर और माफर जैसे शब्दों की सूची, राजपूत जातियों के नामोल्लेख और यद्ध का श्रृङ्गारादि अनेक अन्य एकसे वर्णन हम्मीरायण के पाठक को कान्हड़दे प्रबन्ध की याद दिलाते हैं। नीचे हम कुछ समान शब्दावली का उदाहरण भी प्रस्तुत कर रहे हैं। इनके आधार पर कोई बात निश्चित रूप से तो नहीं कही जा सकती, किन्तु यह विचार कभी-कभी उत्पन्न होता है कि मांडउ ने शायद कान्हड़दे प्रबन्ध सुना हो। किन्तु यह ध्यान भी रहे कि यह साम्यता विषय के साम्य और प्रचलित सामान्य प्रणाली के कारण भी हो सकती है।

कान्हड़दे प्रबन्ध	*हम्मीरायण*
१. यउ मुझ निर्मल मत्ति १.१	१. कथा करंता मो मति देहि १
२. मुडोधानी कुँअरी घणी, अंतेउरी कान्हड़दे तणी ४.५२	२. ऊलग करइ मोडोधा घणी। १९ मोटा राय तणी कूंयरी परणी पांचसइ अंतेउरी। २५
३. टांका वावि भर्या घी तेल, वरस लाख पुहुचइ दीवेल ॥४.३६	३. घीय तेल री बावड़ि जिसी। जीमतां नहीं फदे खूटसी ॥२४॥
४. इणि परि राजवंस जे सवइ, लहइ ग्रास ग्राम भोगवइ ॥४.४५॥	४. जे कुलवंता भला छइ सूर, तिह नइ दइ ग्रास तणा सवि पूर २१
५. अंगा टोप रंगाउलि पोहा ॥१.१८९	५. अंगाटोप रिगावली तणा ॥२३॥
६. कान्ह तणइ संपति इसी, जिसी इंद्रपरि रिद्धि ॥१.९	६. पुहवी इन्द्र कहीजइ सोइ इन्द्रसमा हम्मीर होइ ॥६॥

७. अहि महिमद नइ हाजीऊ ॥४.६५	७. अहमद महमद महधी कीदा १०५ हाजी काद्व ऊंबरा घणा ॥१०४॥
८. घांची मोची सूई सूनार ॥४.१९॥ गांछा छीपा नइ तेरमा ॥४.२०	८. मोची, घांची नई तेरमा, ११० सूई सूनार तणी नही मणा ॥१०९॥
९. दल चलंत धरणी कांपइ, सेपन फालइ भार । सायर तणां पूर ऊलटियां, जेहवां रेलणहार २.६३	९. ढोली थकउ चाल्यु सुरताण, सेषनाग टलटलीया ताम । डूंगर गुडइ समुद्र झलहलइ, त्रिभुवन कोलाहल ऊछलइ । ॥९४॥
१०. मारइ देस, फिरइ घण फोजइ । अनइ लूस्यइ धान । बोलइ ठोरधार सपराणा । माणस मालइ थान ॥१.७०॥	१०. सवालाख माहि दीधी धाइ, लूसइ पघइ माणस थाइ, टाढइ पोलि नगर प्राकार, देश माहि धलि फिरी अपार॥११७॥
११. कटक तणी सामगरी दीठी, सांसल कटि वषाण । धन्य धन्य दिन आज अम्हारउ, जे आव्यउ सुरताण । २.१०७	११. आज अम्हारउ त्रिग्यउ प्रमान, हूं भलउ ऊसनउ चहुमाण । रिणथंभोर हउ होवउ राय, गुरू परि दीसी आव्यउ पतिसाह । ॥११२॥
१२. सात त्रिकतना मलहलइ रे, घत्र धरोइ निसाण । ३.१५४	१२. गोयन कनक दंड झलहलइ । ऊपरि धजी धजा लहलहइ ॥१११॥
१३. माली तम्बोली सोनार, चालइ घाट घणा सोनार ४.८४	१३. तंबोलीय मालीय कलाल, नापनी मोची नइ लोहार ॥१०९
१४. मान्हा सींगणी तीर विछूटइ, निरता पडइ नलीयार । २.१२५ यंत्र गर्धो गोला नाखइ २.१२८	१४. सींगणी तणा विछूटइ तीर ।१६६ यंत्र नालि वहइ ढींकुलीं ॥१६७॥
१५. हाडति बिहूं निसाणण कही । ॥४.१४३॥	१५. हाथ त्रिसावलि दीधी सही ॥१६०

हम्मीरायण के स्वतन्त्र प्रसंग

हम्मीरायण में कुछ ऐसे प्रसङ्ग भी हैं जो कान्हड़दे काव्य से ही नहीं हम्मीर महाकाव्य से भी सर्वथा स्वतन्त्र हैं। महिमासाहि और मीर गाभरू को शरण मिलने पर महाजनों का हम्मीर के पास पहुँच कर उसे इस नीति के विरुद्ध समझाना ऐसा ही प्रसंग है। कान्हड़दे प्रबन्ध में महाजन कान्हड़दे के पास अवश्य पहुंचते हैं, किन्तु उनका व्यवहार इनसे सर्वथा भिन्न है। उनमें स्वामिभक्ति तो इनमें स्वार्थ है, जब मुसलमानी सेना रणथंभोर पर आक्रमण करती है तो सहायता प्रदान न कर वे दुकानों में बैठे हँसते हैं। अन्त में एक वणिक जौहर का कारण बनता है। किन्तु सांसारिक दृष्टि से महाजनों की सलाह ठीक थी, और भाण्डउ ने उसे बहुत सुन्दर शब्दों में दिया है :—

विष वेली ऊगंतड़ी, नहे न खूटी जे (होइ);
इणिवेलि जे फल लागिस्यइ, देखइलउ सहूवइ कोइ ॥ ६१ ॥

इणि वेलो जे फल लागिसइं, थोडा दिन माँहि ते दीसिसइ;
निहरा किसा हुस्यइ परिपाक, स्वादि जिस्या हुस्यइ ते राख ॥ ६२ ॥

जब मुसल्मानी सेना रणथंभोर की ओर बढ़ती है, तब भी इसी रूपक को प्रयुक्त करते हुए कवि ने कहा है :—

हाटे बइठा हसइ वाणिया, वेलितणा फल जोअउ सयाणिया ॥ ७३ ॥

जाजा को विदेशी प्राहुणा कहकर इस बात का अन्त तक निर्वाह करना भी भाण्डउ व्यास की ही सूझ प्रतीत होती है। विजय होने

पर नगर में उत्सव के वर्णन हम्मीर महाकाव्य में हैं, और कान्हड़दे प्रबन्ध में भी। किन्तु वर्धापन के वर्णन में भाण्डउ ही कह सका है :—

रणथंभवरि वधावउ करइ, ते सूरिज मनि हरख जि धरइ"

नारदभाट का अलाउद्दीन के दरबार में जाना, अलाउद्दीन से उत्तर प्रत्युत्तर करना, और अन्त में अलाउद्दीन द्वारा स्वामिद्रोहियों को मरवाना भी सम्भवतः भाण्डउ की ही सूझ है। वीर भाट जाति की युद्ध में उपस्थिति और उसके महत्त्वपूर्ण कार्य का यह एक पर्याप्त पुराना उदाहरण है।

कान्हड़दे प्रबन्ध में अनेक राजपूत जातियों की सूची है। किन्तु हम्मीरायण की सूची में खंदा, वंदा, कछवाहा मेरा, गुंकिआण, बोडाणा, भाटी, गौड, तँवर, सेल, डाभी, डाडी, पवाण, हूण, गुहिलत; गोहिल, सिंधल, मंडाण; चंदेल, खादड़ा, चावडा, और निकुंद नाम अधिक हैं। संख्या भी जोड़ने पर पूरी छत्तीस बैठती है। घेरे के वर्णन में भी सामान्यतः कुछ नई बातें हैं जिनका ऊपर निर्देश हो चुका है। रणमल और रायपाल किस चाल से एक लाख सैनिकों को किले से निकाल ले गए—यह भी कुछ नवीन सूचना है।

हम्मीर के अन्तिम युद्ध के वर्णन में भी भांडउ ने अच्छी सफलता प्राप्त की है। ये पद्य पठनीय हैं :—

खमहर करी छडउ हुयउ, हमीर दे चहुआण;
सवालाख संभरि धणी; मोरइ दियइ पराण ॥ २७९ ॥
छत्तीसइ राजकुली, जलमता निमि दींस
जिणी वेला एको नहीं, डबाउड लिहु ईस ॥ २८० ॥

हाथी घोड़ा घरि हुँता, उलगाणा रा लाख ;
सात छत्र धरता तिहां, कोई न साहइ वाग ॥ २८१ ॥

अन्त में हम्मीर की राजलक्ष्मी के अन्त से भी माण्डउ ने एक अपने ढग का नवीन निष्कर्ष निकालते हुए लिखा है :—

(ए) खाज्यो पीज्यो विलसज्यो, ज्यांरइ संपइ होइ।
मोह म करिज्यो लछमो तणउ, अजरामर नहिं कोइ ॥ २८७ ॥

(ए) खाज्यो पीज्यो विलसज्यो. धनरउ लेज्यो लाह ;
कवि "मांडउ" असउ कहइ, देवा लांबी बांह ॥ २८८ ॥

मोल्हा भाट ने भी जिस रूप से अलाउद्दीन का सन्देश हम्मीर के सामने पेश किया है उसमें अच्छा उक्ति वैचित्र्य है। "भाट ने कहा "हे राजा सुनो, लक्ष्मी और कीर्ति तुझे वरण करने के लिए आई है। सच कह तू किस से विवाह करेगा। तूं वर है, वे दोनों सुन्दर तरुणियां हैं। सुल्तान ने स्वयंवर रचा है। हे हम्मीरदे, जिसे तू ठीक समझे ग्रहण कर।" राजा ने कहा, "हे बारहट, कीर्ति और लक्ष्मी में कौन भली है? लक्ष्मी से बहुत द्रव्य घर आएगा। कीर्ति देश, विदेश में होगी।" मोल्हा ने कहा, "मुझे सुल्तान ने भेजा है। उससे तू कुमारी देवलदे का विवाह कर और उसके साथमें धारू और वारू को भेज। सुलतान ने बहुत से हाथी और दो मीर भी मांगे हैं। इतना करने पर वह तुम्हें निहाल कर देगा। वह तुझे मांडव, उज्जैन, और सवालाख सांभर देगा[1]। ये चारों बातें पूरी कर अनन्त लक्ष्मी का भोगकर। राजा सुनो, कीर्ति दुर्लभ

१—यह अर्थ सर्वथा स्पष्ट नहीं है। वास्तव में ये स्थान उस समय न बादशाह के अधीन थे, और न हम्मीर के।

होती है। यदि तू नमन न करेगा तो तुझे दुःख ! (विपद) की प्राप्ति होगी। यदि तू शरण न देगा तो तुम्हें कीर्ति की प्राप्ति न होगी।" (१४६-१५२) इसका जो उत्तर हम्मीर ने दिया, वह उसके चरित्र के अनुरूप ही है।

वीरों की गाथा के गायन को मध्यकालीन कवि पवित्र मानते रहे हैं। पद्मनाभ ने कान्हडदे प्रबन्ध को पवित्र ग्रन्थों और तीर्थों के समान पवित्र समझा है। भांडउ व्यास को भी अपने ग्रन्थ की पवित्रता में विश्वास है :—

रामायण महाभारथ जिसउ; हम्मीरायण नीजउ तिसउ ;
पढ़इ गुणइ संभलइ पुराण, तिहाँ पुण्य हुइ गंग सनान ॥ ३२४ ॥
सकल लोक राजा रंजनी, कलियुगि कथा नवी नीपनी ;
भणतां दुख दालिद सहु टलइ, भांडउ कहइ मनोरथ फलइ ॥ ३२६॥

प्रतीत होता है कि रामायण नाम को ध्यान में रख कर ही भांडउ व्यास ने अपने ग्रन्थ का नाम हम्मीरायण रखा है।

रणथंभोर का भौगोलिक वृत्त

रणथंभोर की चढ़ाई के वर्णन को उसकी स्थिति के ज्ञान के बिना अच्छी तरह समझना असम्भव है। इसीलिए भांडउ व्यास ने रणथंभोर का कुछ वृत्त दिया है जो भौगोलिक और ऐतिहासिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है। उस नगरी में अनेक विषम घाट थाटो, और मठोवर हैं (?),

और चार मुख्य फाटक थे। इनमें पहले दरवाजे का नाम नवलखी था, जो अब भी इसी नाम से प्रसिद्ध है (९)। कलशध्वजादि से मंडित उसमें अनेक मन्दिर थे, उसमें कोटिध्वज अनेक व्यापारियों की दान-शालाएँ थी, नगर में अनेक जती, व्रती रहते। हजारों वेश्याएं भी उसमें थी। राजा त्रैलोक्यमन्दिर शैली के बने महल में रहता। पास ही गरमी और सर्दी के लिए उपयुक्त महल भी थे।

रिण और थंभ के बीच में नीची जमीन थी (१०)। जब अलाउद्दीन रणथंभोर पहुंचा तो हम्मीर ने चारों दरवाजे सजाए (१३५) गढ़ को सेना के बल से लेने में अपने को असमर्थ पाकर उसने गढ़ की बनावट को ध्यान में रखते हुए उसे लेने के अन्य उपाय किये थे (१९३)। हम ऊपर बता चुके हैं किस प्रकार रिण पर पाशीब बनाने का प्रयत्न किया था। भाण्डउ ने इसका वृतान्त खूब मनोरञ्जक बनाया है। कहा जाता है कि अलाउद्दीन ने सब फौज को आज्ञा दी कि वह उस झोल को बालू से भरे। मुसलमानी फौजियों ने लड़ना छोड़ दिया सूथन की पोटली बनाकर उस से बालू ला लाकर वे वहाँ डालने लगे। छठे महीने यह काम पूरा हुआ। कंगूरों तक अब मुसलमानी फौज के हाथ पहुँचने लगे उससे राजा हम्मीर को अत्यन्त चिन्ता हुई (१९८-२०१)। किस प्रकार यह प्रयत्न विफल हुआ यह ऊपर बताया जा चुका है।

हम्मीर महाकाव्य में रणथभोर के पद्मसर का वर्णन है (१३-९२)। यह तालाब अब भी पद्मला के नाम से प्रसिद्ध है। अबुलफजल ने इस प्रसिद्ध दुर्ग के बारे में लिखा है, 'यह दुर्ग पहाड़ी प्रदेश के बीच में। इसलिए लोग कहते हैं कि दूसरे दुर्ग नंगे है, किन्तु यह बख्तरबन्द है।

इसका वास्तविक नाम रन्तःपुर (रण की घाटी में स्थित नगर) है, और रण उस पहाड़ी का नाम है जो उसकी ऊपरी ओर है (अकबरनामा, २, पृ. ४९०), रणथंभोर के दुर्ग को हस्तगत करने के लिए अकबर ने रण की घाटी के निकट ऊंची सबात बनाई और रण की पहाड़ी पर से बड़ा तथा सबात के सिर तक पत्थर फेंकनेवाली तोपें पहुँचाई।

वीरविनोद में भी लिखा है, "ऊपर जाकर पहाड़ की बलन्दी ऐसी सीधी है कि सीढ़ियों के द्वारा चढ़ना पड़ता है और चार दर्वाजे आते हैं। पहाड़ की चोटी करीब एक मील लम्बी और इस कद्र चौड़ी है, जिस पर बहुत संगीन फसील बनी हुई है। जो पहाड़ की हालत के मुवाफिक ऊँची और नीची होती गई है और जिसके अन्दर का बड़ा बुर्ज और मोर्चे बने हुए हैं।"

इम्पीरियल गजेटियर में भी प्रायः यही बातें हैं। साथ ही यह भी लिखा है कि पूर्व की ओर नगर है जिसका दुर्ग से सम्बन्ध सीढ़ियों द्वारा है।

डा० ओझा का भी यह टिप्पण पठनीय है, "रणथंभोर का किला अंडाकृति वाले एक ऊँचे पहाड़ पर बना है, जिसके प्रायः चारों ओर अन्य ऊँची ऊँची पहाड़ियाँ आ गई हैं जिनको हम किले की रक्षार्थ कुदरती बाहरी दीवारें कहें, तो अनुचित न होगा। इन पहाड़ियों पर खड़ी हुई सेना शत्रु को दूर रखने में समर्थ हो सकती है। इनमें से एक पहाड़ी का नाम रण है जो किले की पहाड़ी से कुछ नीची है और किले तथा इसके बीच बहुत गहरा खड्डा होने से शत्रु ऊपर से भी दुर्ग पर पहुँच ही नहीं सकता।" (उदयपुर का इतिहास, भाग १, पृ० ५)

नागरी प्रचारिणी पत्रिका, भाग १५, पृष्ठ १५७-१६८, में श्री पृथ्वीराज चौहान का 'रणथंभोर' पर लेख भी पठनीय है। इसके मुख्य तथ्य निम्नलिखित हैं :—

(१) मोरकुण्ड से पहाड़ी का चढ़ाव है। यहां से कुछ चढ़ कर पक्का परकोटा और मोर दरवाजा नाम की एक पोली है।

(२) यहां से उतर कर और फिर उतार चढ़ाव के बाद दूसरा परकोटा है जिसका नाम बड़ा दरवाजा है।

(३) इससे उतर कर एक बड़ा मैदान है जिसके तीन तरफ पहाड़ियां और चौथी ओर रणथमोर का दुर्ग है। इसी मैदान में पद्मला तालाब है, छोटा पद्मला दुर्ग में है।

(४) आधे कोस चलने चलने पर किले पर चढ़ने का फाटक आता है जिसे नौलखा कहते हैं। किले का पहाड़ ओर से छोर तक दीवार की तरह सीधा खड़ा है। उस पर मजबूत पक्का परकोटा और बुर्ज बने हुए हैं।

(५) नौलखा दरवाजे से ऊपर तक पक्की सीढ़ियां बनाई गई हैं, जिन पर तीन फाटक बीच में पड़ते हैं।

(६) किले में पाँच बड़े तालाब हैं।

(७) दिल्ली दरवाजे पर शंकर का मन्दिर है। 'यहीं राव हम्मीरदेव का सिर है जो मनुष्य के सिर के बराबर है। कहते हैं राव हम्मीर जब अलाउद्दीन को परास्त करने आए तो गढ़ में रानियों को न पाया। वे सब भस्म हो गई थीं। राव को इससे इतनी ग्लानि हुई कि उन्होंने आत्मघात करने का निश्चय कर लिया, लेकिन कुछ विचार कर शिव के मन्दिर में गया और पूजन कर कमल काट कर शिव पर चढ़ा दिया।

(८) गढ़ केवल साढ़े तीन कोस के घेरे में है, पर है सीधे खड़े पहाड़ पर।
किले के तीन ओर प्राकृतिक पहाड़ी खाई और सुरक्षित है। खाई के
उस ओर वैसा ही खड़ा पहाड़ है जैसा किले का। उस पर परकोटा
खिंचा है। फिर चौतरफा कुछ नीची ज़मीन के बाद तीसरे पहाड़
का परकोटा। इस प्रकार किला कोसों के बीच में फैला हुआ है।
हम्मीरायण के १२५ वें पद्य 'सनपुड़ा' का नाम है यह वह पर्वतमाला
है जिस में से निकल कर बनास दक्षिण प्रवाहिनी बनती और चम्बल नदी
से जाकर मिलती है। सनपुड़ा के अद्रिपट्टों को पार करना आसान
न रहा होगा।

हम्मीरायण का चरित्र-चित्रण

हम्मीरायण में कुछ पात्रों का अच्छा चरित्र-चित्रण हुआ है। हमीरदे
शरणागत रक्षक (३०७); 'रण भांग' (२९) 'अणीअण राय' (२१९)
और कीर्तिधर्मा (१४८) है। अलाउद्दीन की मांगों को ठुकराते हुए वह
सुल्तान के दूत मोल्हण से कहता है।

> कीरति पोरसा वरिसि सइं, लाछी रहुं ते जाइ;
> टाम अगि जे करइइ, ते न आपइं पतिसाह "१५२"
> सह हारउं मउ हरि मरणि, कर आपउं नउ हाउ,
> राउ कहइ सारइट, निसुणि, हिऐ पहि पीलइं लाइ "१५४"

हम्मीर कीर्ति का प्रेमी है लक्ष्मी का नहीं। बादशाह ने जनों कई
मांगा था, वह उसे दमडि भी देने को तैयार नहीं है, जो वह और दायक
दोनों में ही लाभ दिखाई पड़ता है, अब मैं अपनी बात कहूँगा, युद्ध में

मृत्यु हुई तो वैकुण्ठ की प्राप्ति होगी। स्वार्थी महाजन और सुल्तान ऐसे वीर को शरणागतों को समर्पित करने के लिए राजी या विवश न कर सके तो आश्चर्य ही क्या है? किन्तु इस वीर राजपूत में नौकरों की पूरी पहचान नहीं है, इसीलिए यह अपने प्रधानों से धोखा खाता है। अपनी 'आण' की रक्षा में स्वयं को या प्रजा को भी कष्ट सहना पड़े तो इसकी उसे चिन्ता नहीं है। शत्रु के आगे झुकना तो उसने सीखा ही नहीं :—

मान न मेल्यउ आपणउ, नमी न दीधउकेम।
नाम हुवउ अविचल मही, चंद सूर दुय जाम ॥३०८॥

हम्मीर महाकाव्य में हम्मीर के चरित में कुछ विकास भी है। अन्तिम युद्ध के दृश्य में अपने भाई के प्रेम के कारण घोड़े से उतर कर लहू-लुहान पैरों से युद्ध में अग्रसर होते हम्मीर का दृश्य हृदयद्रावक है। यहाँ करुण और वीर रसों का एक विचित्र मेल है जो अन्यत्र नहीं मिलता।

दूसरा मुख्य चरित्र महिमासाहि का है। वह अद्वितीय धनुर्धर, स्वाभिमानी और दृढ़प्रतिज्ञ है, हम्मीर ने उसे भाई के रूप में स्वीकार किया है और दोनों इस भ्रातृत्व की भावना का अन्त तक निर्वाह करते हैं। किन्तु हम्मीरायण में महिमासाहि (मुहम्मदशाह) के चरित्र की उदात्तता पूर्णतया प्रस्फुटित न हो सकी है।

रणमल्ल और रायपाल हम्मीर के कृतघ्न स्वामिद्रोही अमात्य हैं जिन्हें अन्त में अपनी करणी का फल भोगना पड़ता है। स्वार्थी महाजनों का भी 'भाण्डउ' ने अच्छा खाका खींचा है। परिजनों में नाल्ह भाट का चरित्र अच्छा बना है। जाजा के विषय में हम ऊपर पर्याप्त लिख चुके हैं। उसका चरित प्रस्तुत करने में 'कवि' ने सफलता प्राप्त की है। हम्मीर को ईश और

उसे भक्त के रूप में देखने के रूपक को अन्त तक निबाहते हुए माण्डउ ने लिखा है :—

'जाजउ' सिर सिर ऊपरि कीयउ, जाणे ईश्वर निजि पूजीयउ ॥२९५॥
'वीरमदे' रउ मायउ देठि, वेउ मीर पड्या पग हेठि ॥२९६॥

जाजा का मस्तक हम्मीर के सिर पर था, मानों ईश्वर का उसने अपने सिर से पूजन किया हो।

देवलदे सरल स्वभाव की राजपूत कन्या है जो पिता को बचाने के लिए अपना बलिदान देने के लिए उद्यत है। शायद कई अन्य राजपूत कन्याओं ने भी इसी प्रकार कहा हो :—

देवलदे (इ) कहइ सुणि बाप, मो बइइ उगारि नि आप,
जाणे जणी न हुंती घरे, मान्हीं थकी गई त्या मरे ॥ १२१ ॥

प्रतिनायक अलाउद्दीन का चरित्र खींचने में भी माण्डउ ने कुछ कौशल से काम लिया है। वह दिग्विजयी है। (८३) उसे यह सह्य नहीं है कि उसका अपमान कर कोई मनुष्य सजा पाये बिना रह जाए (८६-८८) किन्तु वह देश की स्वयं लूट पाट के विरुद्ध है (१२८-११६) किन्तु हम्मीर के भाट का वह सम्मान करता है। उसमें वह चालाकी और फरेब भी है जिससे एक शत्रु को वश में कर वह दूसरे को नष्ट कर सके। किन्तु वास्तव में वह कृतघ्नता का विरोधी और स्वामिभक्ति का आदर करता है। हम्मीर की मृत्यु होने पर वह स्वयं पैदल रणक्षेत्र में आता है हम्मीर आदि के बारे में पूछ कर उनकी उचित अन्त्य क्रिया करवाता और स्वामिद्रोही रणमल्ल आदि को उचित दण्ड देता है। हम्मीर की मृत्यु से उसे कुछ दुःख है :—

सींगणी गुण तोडइ सुरताण. आलम साह न खाई (न) खाण (२६८)

उलूगखाँ आदि के चरित सामान्यतः ठीक हैं। वर्णन बहुल होने के कारण अन्य अनेक प्राचीन काव्यों की तरह यह काव्य चरित्र के विकास पर विशेष बल न दे सका है।

सामंतशाही जीवन और सैन्य सामग्री

उस समय के जीवन के अनेक पहलुओं पर, विशेषतः तत्कालीन सामन्तशाही जीवन और सैन्य सामग्री पर हमें इस काव्य से पर्याप्त सामग्री मिली है। राजा की मुख्यता तो स्वीकृत ही है। उस की नीति पर सब कुछ निर्भर था और यह नीति शान्ति की भी हो सकती थी और विग्रह की भी। किन्तु नीति का निर्धारण करने पर भी उसके लिए यह आवश्यक था कि वह समाज के दो प्रभावशाली वर्गों, सामन्तों और महाजनों को अपनी ओर रखे। यही उसकी जन-शक्ति और धनशक्ति के आधार थे। सामन्तों का और सामन्तों के प्रति राजा के व्यवहार का इस काव्य में अच्छा वर्णन है। राजा के सामन्तदल में सवालाख घोड़े थे (१९)। कुलवान् और अच्छे शूर व्यक्तियों को राजा पूरा वेतन (ग्रामादि) देता। समय पड़ने पर वे उसका काम निकालते। वह उनका कभी अपमान न करता (२१)। वे कभी किसीको प्रणाम (जुहार) न करते, घर बैठे भंडार खाते, युद्ध में वे किसी से भी न डरते। भगवान् से भी लड़ने के लिए तैयार रहते (२२)। उनके पास कवच और अनेक प्रकार के शस्त्रास्त्र थे। सूर वंश के रणमल और रायपाल हम्मीर के प्रधान थे। इन्हें आधी बूँदी ग्रास (जागीर) में मिली थी। जब मुहम्मदशाह और

उसका भाई रणथंभोर पहुँचे तो राजा ने उन्हें भी अच्छी जागीर दी और साथ ही नकद वेतन भी दिया (५१-२)। युद्ध का आरम्भ होते ही इन वीरों के पास संदेश पहुँचता :—

लहणा ग्राम अठारह घणा । हिव अवसर दाखउ आपणा (७५)

और ये सब नियत स्थान पर आकर एकत्रित हो जाते (देखो ७५-७९,१६६-१७१) इनमें सभी राजकुलों के लोग रहते। यह स्वाभाविक है कि परमारवंशी राजा के अनुयायी परमार और चौहान के चौहान ही होते। रणमल्ल और रतिपाल सूर वंश के थे। हम्मीर के अन्तिम संग्राम में उसका साथ देनेवाले चार राजपूतों में एक टाक, एक परमार, एक चौहान और एक अज्ञातवंशीय राजपूत था।

दूसरी शक्ति धनी महाजनों की थी। युद्ध के आर्थिक साधन इन्हीं के हाथ में थे। इसलिए राजनीति में भी इनका दखल था। हम्मीरायण में महाजनों का हम्मीर के पास पहुँचना और स्पष्ट शब्दों में हम्मीर की *नीति* को अपरिमित और अयुक्त कहना—इसी महाजनी प्रभाव का प्रमाण है। उनका असहयोग उसके पतन का एक मुख्य कारण भी है। जालोर में इसी वर्ग का समर्थन कान्हडदेव के अनेक वर्षीय सफल विरोध की नींव बन सका था[1]।

स्वयं राजा के पाँच सौ हाथी और 'सहस एक सह पंच' घोड़े थे और वह सवालाख भोजन का प्रभु था (१९-२०)। अनेक प्रकार के योद्धाओं के और हाथी घोड़ों के अन्न-पान आदि उसके पास थे उसके कोठारों में धान्य का संग्रह था (२३-२४)। उसके ५०० मन सोना और करोड़ों

१ देखो Early Chauhan Dynasties.

का भय था। कहने का तात्पर्य यह है कि तत्सामयिक राजा दुर्गों में इन सब सामग्री को तैयार रखते। दुर्ग को अच्छी तरह सज्जित रखना तो उस समय राजपूतों के लिए सर्वथा आवश्यक था ही। यही मध्यकालीन राजपूतों के स्वातन्त्र्य संग्राम के साधन और प्रतीक थे। इन्हीं के सामने से मुसल्मानी सेनाओं को हताश होकर अनेक बार पीछे लौटना पड़ता था। जब तक जल और धान्य की कमी न होती, दुर्गस्थ सेना प्रायः लड़नी ही रहती। कई बार रात में सहसा दुर्ग से निकल कर ये शत्रु पर आक्रमण करते (७९)। शत्रु को चिढ़ाने के लिए कंगूरों पर छोटी पताकाएं लगाते, दरवाजों का शृङ्गार करते और बुर्ज-बुर्ज पर निशान बजाते। गाना बजाना भी होता। दोनों ओर से बाण छूटते। मगरिबी नाम के यन्त्रों से नीचे की सेना पर गोले बरसाए जाते। ढेंकलियों से भी पत्थर फेंके जाते। नलियारों का भी हम्मीरायण और हम्मीर महाकाव्य में वर्णन है। (११३-१८७)

खजाइनुलफ़ुतुह पत्थर बरसाने वाले यन्त्रों में से इरादा, मंजनीक और मगरिबों के नाम हैं। जिस प्रकार के पत्थर फेंके जाते थे, उन्हें कई वर्ष पूर्व मैंने चित्तौड़ में देखा था। शायद अब भी वे अपने स्थान पर हों। दुर्ग से राल मिले तेल, जलते हुए बाण, और दूसरी आग लगाने वाली वस्तुओं का भी प्रयोग होता। खजाइनुलफ़ुतुह में रणथंभोर के घेरे के वर्णन से स्पष्ट है कि मुसल्मानी सिपाहियों को कदम कदम पर आग में से बढ़ना पड़ा था। ऊपर से पायकों ने बाणों की वर्षा की। अन्ततः मुसल्मानों को हताश होकर वापस लौटना पड़ा।

दुर्ग लेने के उपायों को भी हम हम्मीरायण में पाते हैं। गढ़ को इतनी बुरी तरह से घेरा जाता कि उसमें से कुछ न आ जा सके :—

पड़ गाढ़उ विग्गह सुरताणि, को सक्की न सकइ विधि ठाणि।

मांडो मांहि गढ़ लखकोडि, पातिसाह नवि जाए छोडि ॥२११॥

ऐसी अवस्था में दुर्ग में प्रायः अन्न की कमी पड़ जाती और उसे आत्मसमर्पण करना पड़ता। अन्दर के लोगों में से किसी को लालच देकर फोड़ लेना दूसरा साधन था। राजपूतों के अनेक दुर्गों को इसी साधन के प्रयोग से मुसल्मानों ने प्रायशः हस्तगत किया था। सुरंग लगा कर रणथंभोर लेने के प्रयत्न का हम्मीर महाकाव्य में वर्णन है। पाशीब या सीबा बना कर रणथंभोर को हस्तगत करने की भी कोशिश की गई थी। पाशीब बनाने में लकड़ियां डाल-डाल कर एक ऊँची बुर्ज तैयार की जाती और जब उसकी ऊँचाई प्रायः दुर्ग की ऊंचाई तक पहुंच जाती तो उस पर मगरिबियां रख कर दुर्ग के अन्दर के भागों पर गोलाबारी की जाती। बालू की बोरियों से भी पाशीब तैयार हो सकता था। हम्मीरायण (१९८-२००) और खजाइनुलफुतूह के अस्पष्ट वर्णनों से प्रतीत होता है कि अलाउद्दीन ने कुछ ऐसा ही प्रयत्न किया था, किन्तु वह कृतकार्य न हुआ। हम्मीरायण ने अलावदीन से बालू बरजाने पर पाटी का रिक्त होना लिखा है (२०२), किन्तु खजाइनुलफुतूह ने मुसल्मानी सेना को रोकने का श्रेय वीर दुर्गस्थ राजपूतों को ही दिया गया है। उनके अग्निबाणों में से हो कर जाना आग में से गुजरना था। साथ ही ऊपर से पत्थरों की वर्षा और मगरिबियों की निरन्तर मार भी थी।

मेंढ नालि वहइ घीगुलि, सुभट राय मनि मूकइ रलि।

चरइ मर्दंगण आवटइ अपार, आहुणि छइ ओलिखि गिलि मार ॥१८०॥

(देखो खजाइनुलफुतूह, जर्नल ऑफ इण्डियन हिस्ट्री ८, पृ० ३६१-३६२)

इसी तरह बर्नी ने भी इस उपाय के निष्फल होने का निर्देश किया है। दुर्गमग्न होने पर हथियार न डालना, राजपूतों की विशेषता थी। इसी कारण से शत्रु यथाशक्ति अन्य उपायों द्वारा ही दुर्ग को हस्तगत करने का प्रयत्न करते। दुर्ग में सीधा घुसना तो सर्प के मुँह में हाथ डालना था। *

सामाजिक जीवन

हम्मीरायण आदि काव्यों के आधार पर तात्कालिक सामाजिक जीवन के विषय में बहुत कुछ कहा जा सकता है। संक्षेप में ही ब्राह्मणों के प्रति आदर, महाजनों की दृढ़ आर्थिक स्थिति, वीरों का धर्मगत भेद होने पर भी परस्पर सौहार्द, वेश्या प्रथा का पर्याप्त प्रचार, नाट्य नृत्य संगीतादि में जनता की रुचि और दानशीलता आदि कुछ ऐसे विषय हैं जिनका हमें इस काव्य से अच्छा ज्ञान होता है। विशेष रूप से नाल्ह भाट का चरित पठनीय है। चारण और भाट मध्यकाल में प्रायः वही महत्त्व रखते हैं जो सामन्त और सरदार। चौदहवीं शताब्दी के महान् कवि पण्डित ज्योतिरीश्वर के वर्णरत्नाकर का निम्नलिखित भाटों का वर्णन इतना सजीव और मध्यकालीन स्थिति का परिचायक है कि पाठकों के समक्ष उसे उपस्थित करना हम उचित समझते हैं, वर्णन निम्नलिखित है :—

अथ भाट वर्णना—मारपरिकली परिहने। सारु सोनाक टाट चारि परिहने। खड़नीक पाग एक माथा बन्धने। सो न सूंघीक कराओ एक। देवगिरिआ पटेओला एक फाण्ड बन्धने। साँपि ओपि, बाद्धि, नीकि सोना

---

* गड़गज आदि कुछ अन्य यन्त्रों की परिभाषा के लिए आगे दिये मुसलमानी तवारीखों के अवतरण देखें।

इस उद्धरण में भाट की वेश-भूषा, विद्या, व्यवहारादि सभीका वर्णन है। उसके बहुमूल्य वस्त्र, आभूषण और आयुध उच्चपद के अनुरूप है। उसका शास्त्रीय ज्ञान इतना प्रगाढ़ है कि बड़े बड़े पण्डितों और कवियों के ज्ञान को मात करता है। वह सर्वभाषाविज्ञ, अष्ट-व्याकरण पारग, अष्टादश कोष व्युत्पन्न, अनेक अलङ्कार विज्ञ, एवं बहुत ग्रन्थ कृताभ्यास है। वह कवि भी है और दाता भी। अनेक व्यक्ति उसके पीछे पीछे चलते हैं। अर्वाचीन भाटों से परिचित व्यक्ति मध्यकालीन भाटों के महत्त्व को कठिनता से ही समझ पाते हैं। किन्तु वर्णरत्नाकर का वर्णन पढ़ने वाला व्यक्ति आसानी से ही चन्द, मोल्हण (कान्हड़ दे प्रबन्ध), मोल्हा और नाल्ह (हम्मीरायण) आदि के व्यक्तित्व और प्रभाव को समझ सकता है। पृथ्वीराज विजय का पृथ्वीभट भी इसी श्रेणी का है।

हम्मीरायण के कुछ शब्द

हम्मीरायण के ३२६ छन्दों में पर्याप्त अध्येय सामग्री है। किन्तु हम उनमें से कुछ ऐसे ही शब्दों पर यहां विचार करेंगे जिनका अर्थ या तो विवादग्रस्त है या जिनके अर्थ पर विवाद की संभावना है।

ऊलग, ऊलगाणा—इन शब्दों का इस काव्य में अनेकशः प्रयोग है। विशेषतः (सैनिक) सेवा के अर्थ में ऊलग शब्द का प्रयोग हुआ है। 'ऊलगाणा' ऊलग करने वाले के लिए प्रयुक्त है। हम्मीर की अनेक मोटोभा धणी (मुकुटधर सरदार) 'ऊलग करते थे (१९,२८९) महिमासाहि और उसका भाई भलुखान को ऊलगते थे (४४,४५) 'ऊलगाणा' शब्द ३३वें पद्य में इन्हीं दोनों भाइयों के

लिए प्रयुक्त है। हम अन्यत्र भी इन शब्दों का यही अर्थ प्रदर्शित कर चुके हैं। इस शब्द के प्रयोग का बहुत सुन्दर उदाहरण हम्मीरायण का यह दोहा है:—

रणथाणा रायह सदा, उरण हुइ दरबार।
चाटई धणी ठाकुर तणी, सारह दोहिली वार ॥१८१॥

गुडी—यह शब्द छोटी पताका या पट्टी के अर्थ में प्रयुक्त है। (१२४)[1] बहुत सम्भव है कि इसका मूल किसी द्रविड़ भाषा से लिया गया हो।

ग्रास—सामन्ती बोलचाल में इस शब्द का प्रयोग बहुत अधिक है। योद्धाओं की आजीविका के लिए प्रदत्त जागीर और नकद द्रव्य आदि दोनों ही ग्रास के अन्तर्गत हैं (देखो २१,५०,५१,५२,१६०, २२४ आदि)

असपति (८८)—यह अश्वपति शब्द का अपभ्रष्ट रूप है। सर्वप्रथम यह शब्द केवल उत्तर पश्चिमी भारत और अफगानिस्तान के मुसलमान राजाओं के लिए प्रयुक्त हुआ था। इसका कारण शायद इनकी बलशालिनी अश्वारोही सेना रही हो। किन्तु परवर्ती काल में दिल्ली, गुजरात आदि के सुल्तानों के लिए यह शब्द प्रयुक्त होने लगा। हम्मीरायण का प्रयोग इसी दूसरी प्रकार का उदाहरण है।

आलमशाह (८४, ८५, ८८, ९१, १२०, १७५ आदि)—यह शब्द व्यक्तिवाचक सा प्रतीत होता है। किन्तु वास्तव में यह चक्रवर्ती के अर्थ में प्रयुक्त है।

---

१ देखें वरदा वर्ष ४ के अङ्क में 'गुडी उछली' पर हमारा टिप्पण।

आरी सीरा तोरण (१३५) उत्सव के समय तोरण खड़े करने की परिपाटी चिरकाल से भारत में चली आई है। अन्य ग्रन्थों में तलिया तोरण का वर्णन है। आरीसारी तोरण भी सम्भवतः तलिया तोरण ही है।

पवाडउ (२१०, २६३)—पवाड़ा शब्द के मूलार्थ के विषय में पर्याप्त मतभेद है। मरुभारती, वर्ष, अङ्क में हमने इसका प्राचीन अर्थ 'युद्ध' या ऐसा ही कोई वीरकार्य मानने का सुझाव दिया है। हम्मीरायण सोलहवीं शताब्दी की कृति है। किन्तु इसमें भी पवाडउ के उसी प्राचीन अर्थ की झलक है। २९३ वीं चउपई इस प्रकार है:—

राय पवाडउ कीयउ भलउ, आपण ही सार्‌यउ जै गलउ ॥

(राजा ने अच्छा 'पवाड़ा' किया। उसने अपने आप ही अपना गला काटा)

पवाड़े के युद्ध या युद्ध के सन्निकट अर्थ को ध्यान में रखते हुए हमने उसे 'प्रपातक' से व्युत्पन्न करने का भी सुझाव दिया था। किन्तु 'प्रवाद' शब्द भी लगातार हमारे ध्यान में रहा है। प्रवाद से मिलता-जुलता शब्द 'भट्टवाद' (वीरत्व की ख्याति) प्राचीन राजस्थानी और गुजराती में प्रचलित रहा है, जिसका अपभ्रष्ट रूप भटवाउ अनेक ग्रन्थों में मिलता है। 'भटवाडउ' शब्द की भी गवेषणा की; किन्तु उसकी कहीं प्राप्ति न हुई।

जमहर—इसके लिये आजकल जौहर शब्द प्रचलित हो चुका है। डा० वसुदेवशरण जी अग्रवाल ने जौहर को जतुगृह से व्युत्पन्न माना जो भाषाशास्त्र की दृष्टि से सर्वथा ठीक है (जतुगृह ∠ जउगृह ∠ जउघर ∠

जउहर <जौहर)। किन्तु कान्हडदे प्रबन्ध में पद्मनाभ ने और हम्मीरायण में (२६२, २६३, २७२, २७९) भाण्डउ व्यास ने जमहर शब्द का प्रयोग किया है जो स्पष्टतः यमगृह का अपभ्रष्ट रूप है। जमहर शब्द ही यदि ठीक हो तो आधुनिक जौहर तक का परिवर्तन शायद कुछ इस प्रकार से निर्दिष्ट किया जा सकता है। यमगृह < जमगृह < जमघर < जमहर < जंवहर < जौंहर < जौहर। अचलदास खीची री वचनिका में जउहर शब्द प्रयुक्त है। अचलदास द्वारा गिनाए हुए 'जउहर' जोगा ओनाहन चीतौर के रोल्ह, और रणथंभोर के हम्मीर के स्थानों में हुए थे। वचनिका की अपेक्षाकृत एक नवीन प्रति में 'जौहर' शब्द प्रयुक्त है। उसमें कुछ अन्य जौहर गिनाए गए हैं, जैसे सिवियाणें में सोमसातल के घर, जैसलमेर में दूदा के घर, जालणोर में करमचन्द चहुआण के घर, मिरक टपरी के गहलोतों के घर, जालोर में कान्हडदे के घर। वचनिका की अन्य प्रतियों में जुहर, जमहर और जिमहर शब्द भी प्रयुक्त हैं जो हम्मीरायण और कान्हडदे के जमहर के सन्निकट हैं।[1]

परघड, परिघउ—(२१०, २११, २१६, २१७)—यह शब्द परिग्रह का अपभ्रष्ट रूप प्रतीत होता है जिसका अर्थ नौकर-चाकर, सहायक या सेना किया जा सकता है। राउताल और रणमल ने अलाउद्दीन से मिलकर यह निश्चय किया कि वे रणथंभोर से सेना को निकाल लाएँगे (परिघउ ले आवी सा मिली, २१०)। आकर उन्होंने हम्मीर से प्रार्थना की कि वह कृपाकर उन्हें 'परघउ' (सेना) दे जिससे वे कटक में घसि,

---

१ देखो सादूल राजस्थान रिसर्च इन्स्टीट्यूट द्वारा प्रकाशित संस्करण 'अचलदास खींचीरी वचनिका'

क्रीड़ा करें और तुर्कों को 'पातला' (दुर्बल) कर दें (२३७)। हम्मीर ने उन्हें सवालाख 'परिघउ' (सेना) दी (२३८)।

समाध्यउ, समाघ्यो (३१६, ३१९)—यह शब्द साधारु के प्रद्युम्न-चरित में समदिउ (१८४) के रूप में प्रयुक्त है। संस्कृत में इसका अर्थ समाहित शब्द से किया जा सकता है। इन सब प्रसगों में इसका अर्थ 'प्रसन्न होकर' किया जा सकता है।

कणहलउ (४५) :—महिमासाहि ने अपने विषय में कहा है.

"अह्मनइ मान हुतउ एतलउ, घरि बइठा लहता कणहलउ"

इससे अनुमान किया जा सकता है कि इसका अर्थ भोजनादि से है। हम्मीर के सामन्तों के विषय में कवि ने कहा है :—

ते नवि कोणइ करइ जुहार, घरि बइठा खाई भडार (२२)।

यहाँ भण्डार से मतलब सम्भवतः अन्न भडार का होगा, और यही अर्थ शायद 'कणहलक' से अभिप्रेत है।

नवलखि - यह शब्द चउपइ ९ और १७२ में है। रणथम्भोर दुर्ग की चढ़ाई में यह पहला दरवाजा है। इसी के पास नुसरतखां मारा गया। हम ऊपर डा० माताप्रसाद के नौलखा शब्द के अर्थों का विवेचन कर चुके हैं।

हेडाउ (६८) इस शब्द पर भी हम ऊपर कुछ विचार कर चुके हैं। अभी और उदाहरण अपेक्षित हैं।

वीटी (६७, ७१)—यह निश्चित है कि इसका अर्थ घोड़ी नहीं है। प्रसंग से लूटना या घेरना अर्थ हो सकता है। कान्हड़दे प्रबन्ध में बीटी शब्द प्रयुक्त है।

डीलइ (९६), डीलउ (१००), डील (१९०) :—डील का अर्थ शरीर है। डीलइ स्वयं के अर्थ में प्रयुक्त है। डीलउ = डील ही

धड़वड़ (१३५) = धबड़पट

हम्मीर सम्बन्धी अन्य साहित्य और प्राचीन उल्लेख

हम्मीर विषयक साहित्य हम्मीरमहाकाव्य और हम्मीरायण तक ही सीमित नहीं है। हम्मीर का जीवनोत्सर्ग एक महान् आदर्श के अनुसार में हुआ था। जब कभी ऐसे अवसर उपस्थित हुए, जनता उसे याद करने से न भूली। रणमल्ल छन्द में एक राठौर वीर के युद्ध का कीर्तन है। किन्तु कवि श्रीधर काव्य के आरम्भ में ही हम्मीर का स्मरण करता है। रणमल्ल उपमेय तो हम्मीर उपमान है:—

हम्मीरेण त्वरितं चरितं सुरत्राण फौज संहरणम्।
कुरुते इदानीमेको बलीयस्त्वेव रणमल्लः ॥ ३ ॥

(हम्मीर ने शीघ्र ही सुल्तान की फौज का संहार किया। अब वही अकेला श्रेष्ठ वीर रणमल्ल करता है।)

अचलदास खीची री वचनिका का रचयिता शिवदास भी हम्मीर को भूल पाता ही नहीं। जब सुल्तान की फौज चलती है तो लोग पूछते हैं कि "बादशाह किसके विरुद्ध चढ़ रहा है। अब तो कोई मानव बादशाह नहीं है। हठीला राव हम्मीर भी अस्त हो चुका है" (१०४)। अन्यत्र हम्मीर की तरह अचलदास भी कलियुग को बदलने वाले और आदर्शों के लिए सर्वोत्तम त्याग के रूप में चित्रित हैं। (१०-१५) सिंहासन पर बैठा अचलदास मानव लोक और हम्मीर से भी बढ़कर दिखाई पड़ता था (१५८)। अपनी रानियों के सामने जौहर के आदर्श को उपस्थित

करता हुआ अचलेश्वर कहता है, "कल ही के दिन तो रणथम्भोर में राज हम्मीरदेव के घर में जौहर हुआ था। उन जौहरों में जो हुआ वही तुम पूरी कर दिखाओ (२१.९)।" काव्य के अन्त में भी फिर शिवदास ने हम्मीर का स्मरण किया है। सातल, सोम, हम्मीर और कान्हड़दे ने जिस तरह जौहर जलाया, उसी तरह रणक्षेत्र में पहुँचकर चौहान (अचलदास) ने अपने आदिम कुलमार्ग को उज्ज्वल किया (२७)"।

कान्हड़दे प्रबन्ध में पद्मनाभ हम्मीर का स्मरण करना न भूला। जब अलाउद्दीन की सेना गढ़रोध छोड़कर जाने लगी तो हम्मीर का पदानुगमन करने की इच्छा से वीर कान्हड़दे भी कहता है।

तुम्ह वीनवूँ आदि योगिनी, पाछा कटक आणि तूं अनी।
हमीररायनी परि आदरूं, नाम अह्मारउ उपरि करउं॥

वर्णनों में प्राकृत पैङ्गलम् के हम्मीर और जाजा विषयक पद्य भी पठनीय हैं। इनके विषय में डा० माताप्रसाद गुप्त ने लिखा है, "इन छन्दों में वास्तविक ऐतिहासिकता नहीं मिलती है। उदाहरणार्थ एक छन्द में कहा गया है कि हम्मीर ने खुरासान की विजय की थी, जिसमें उसने खुरासान के शासक से ओल (जमानत) में उसके किसी आत्मीय को ले लिया था। किन्तु हम्मीर का खुरासान पर आक्रमण करना ही इतिहास-सम्मत नहीं है।" किन्तु क्या वास्तव में इस उदाहरणार्थ प्रस्तुत पद्य में खुरासान की विजय का वर्णन है? पद्य यह है:—

ढोल्ला मारिय ढिल्ली महं मुच्छिय मेच्छ सरीर।
पुर जज्जला मंतिवर चलिय वीर हम्मीर।
चलिअ वीर हम्मीर पाअ भर मेइणि कंपइ।
दिगमगणह अंधार धूलि सूरह रह झंपिअ।

डिगमगगइ धधार भाण सुरताणह ओल्हा।
दरमरि दमसि विराज पारभ ढिल्ली मह ढोल्का॥

यहाँ पाँचवीं पंक्ति में 'सुरताण' शब्द को देखते ही, यह परिणाम निकालना ठीक न था कि कवि के मतानुसार हम्मीर ने खुरासान पर विजय प्राप्त की थी और उस देश के शासक को 'ओल्ह' में ले आया। यहाँ प्रसंग दिल्ली या दिल्ली राज्य पर आक्रमण का है, खुरासान पर किसी चढ़ाई का नहीं। इसलिए देखने की आवश्यकता तो यह थी कि सुरताण का कोई दूसरा अर्थ है या नहीं। डिंगलकोश को आप उठाकर देखें या किसी वृद्ध चारण को पूछें तो आपको ज्ञात होगा कि यहाँ सुरताण शब्द मुसलमान के अर्थ में प्रयुक्त है। कविराजा मुरारिदान ने मुसलमान शब्द के ये पर्यायवाची शब्द दिए हैं:—

हींदू म्लेच्छ मलेच्छ ही तुरक मीर मिंढ जवनाम।
सुगत असुर बीबा मियां रोजायत सुरताण॥ ५७२॥
कलमा जवन मसीत (मसीद) खुरासान खर खान,
यवना आसुर (फेर सब मानहु) मुसलमान॥ ५७४॥

पृथ्वीराज के प्रसिद्ध पद्य में भी सुरताण इसी अर्थ में प्रयुक्त है:—

घर रहसी, रहसी धरम खप जासी सुरताण।
अमर विसम्भर ऊपरां, राखौ नहचौ राण॥

पद्य के प्रसंग और डिंगलकोश के इस अवतरण से स्पष्ट है कि 'सुरताण' का अर्थ दिल्ली का कोई मुसलमान ही हो सकता है। इसके खुरासान तक पहुँचने की आवश्यकता नहीं है।

हम्मीर के विजय के कुछ अन्य पद्य भी प्राकृतपैंगलम् में हैं। इन में

हम्मीर अपनी प्रेयसी से म्लेच्छों के विरुद्ध रणाङ्गण में जाने की अनुमति चाहता है। दूसरे में म्लेच्छों के विरुद्ध हम्मीर के प्रयाण का वर्णन है। तीसरा पद्य जज्जल विषयक है। एक पद्य में हम्मीर की मलय, चोलपति, गूर्जर, मालव और खुरसाण पर विजय का वर्णन है। यह खुरसाण भी भारत देशीय कोई मुसलमान राजा है। छठे पद्य में सेना के प्रयाण का बहुत ही सजीव वर्णन है। सातवें पद्य में बीभत्स रणस्थली में विचरते हुए हम्मीर का वर्णन है।

इन पद्यों में पर्याप्त अतिरञ्जना है। किन्तु इस अतिरञ्जना के आधार पर इनके समय पर कुछ कहना असम्भव है। इतिहास में ऐसे उदाहरणों की कमी नहीं है जब कवि समसामयिक होते हुए भी अतिरञ्जना करता है। वाक्पति का 'गौडवहो' ऐसी ही कृति है। नरवर्मन् द्वारा लक्ष्मवर्मन् की विजय का वर्णन रघुवंश के दिग्विजय की याद दिलाता है। गौड, चोड़, बंग, अंग, गूर्जर, मलय, चोल, पाण्ड्य, कीर, मोटादि की भर्ती जिस आसानी से होती है वह अनेक शिलालेखों में दर्शनीय है। भाषा की दृष्टि से प्राकृतपैङ्गलम् के पद्यों को शायद सन् १४०० के आसपास रखना ठीक हो।

शार्ङ्गधर का हम्मीरविषयक उल्लेख और वर्णन भी पर्याप्त प्राचीन हैं। ग्रन्थ के आरम्भ में ही अपने वंश के वर्णन के प्रसङ्ग में शार्ङ्गधर ने लिखा है कि "पहले शाकम्भरी (सांभर) देश में श्रीमान् हम्मीर राजा चाहुवाण वंश में उत्पन्न हुआ, वह शौर्य में अर्जुन के समान ख्यात था। परोपकार के व्यसन में निष्ठ, पुरन्दर के गुरु (बृहस्पति) के समान, राघवदेव नाम का द्विजश्रेष्ठ उसके सभ्यों में मुख्य था"। शार्ङ्गधर

दिग्गमगगइ अधार आण खुरसाणक ओला।
दरमरि दमसि विपक्ख मारम दिल्ली महँ ढोला॥

यहाँ पाँचवी पंक्ति में 'खुरसाण' शब्द को देखते ही, यह परिणाम निकालना ठीक न था कि कवि के मतानुसार हम्मीर ने खुरासान पर विजय प्राप्त की थी और उस देश के शासक को 'ओल' में ले आया। यहाँ प्रसंग दिल्ली या दिल्ली राज्य पर आक्रमण का है, खुरासान पर किसी चढ़ाई का नहीं। इसलिए देखने की आवश्यकता तो यह थी कि खुरासान का कोई दूसरा अर्थ है या नहीं। डिंगलकोष को आप उठाकर देखते या किसी वृद्ध चारण को पूछते तो आपको ज्ञात होता कि यहाँ खुरसान शब्द मुसलमान के अर्थ में प्रयुक्त है। कविराजा मुरारिदान ने मुसलमान शब्द के ये पर्यायवाची शब्द दिए हैं:—

रोद खद खदकी तुरक मीर मेछ कलमाण।
मुगल असुर बीबा मियाँ रोजायत खुरसाण॥ ५:७३॥
दरस यवन मसमीट (कह) खुरासान अर खान,
नगधा आसुर (फेर यव मानहु) मुसल्मान॥९.१४॥

पृथ्वीराज के प्रसिद्ध पद्य में भी खुरसाण इसी अर्थ में प्रयुक्त है:—

पर रहसी, रहसी धरम खप जासी खुरसाण।
अमर विसम्भर ऊपरां, राखो नहचो राण॥

पद्य के प्रसंग और डिंगलकोष के इस अवतरण से स्पष्ट है कि 'खुर-साण' का अर्थ दिल्ली का कोई मुसलमान ही हो सकता है। इसके खुरासान तक पहुँचने की आवश्यकता नहीं है।

हम्मीर के विजय के कुछ अन्य पद्य भी प्राकृतपैङ्गलम् में हैं। एक में

हम्मीर अपनी प्रेयसी से म्लेच्छों के विरुद्ध रणाङ्गण में जाने की अनुमति चाहता है। दूसरे में म्लेच्छों के विरुद्ध हम्मीर के प्रयाण का वर्णन है। तीसरा पद्य जज्जल विषयक है। एक पद्य में हम्मीर की मलय, चोलपति, गुर्जर, मालव और खुरसाण पर विजय का वर्णन है। यह खुरसाण भी भारत देशीय कोई मुसलमान राजा है। छठे पद्य में सेना के प्रयाण का बहुत ही सजीव वर्णन है। सातवें पद्य में बीभत्स रणस्थली में विचरते हुए हम्मीर का वर्णन है।

इन पद्यों में पर्याप्त अतिरञ्जना है। किन्तु इस अतिरञ्जना के आधार पर इनके समय पर कुछ कहना असम्भव है। इतिहास में ऐसे उदाहरणों की कमी नहीं है जब कवि समसामयिक होते हुए भी अतिरञ्जना करता है। वाक्पति का 'गौडवहो' ऐसी ही कृति है। नरवर्मन् द्वारा लक्ष्मवर्मन की विजय का वर्णन रघुवंश के दिग्विजय की याद दिलाता है। गौड, चोड़, वंग, अंग, गुर्जर, मलय, चोल, पाण्ड्य, कीर, भोटादि की भर्ती जिस आसानी से होती है वह अनेक शिलालेखों में दर्शनीय है। भाषा की दृष्टि से प्राकृतपैङ्गलम् के पद्यों को शायद सन् १४०० के आसपास रखना ठीक हो।

शार्ङ्गधर का हम्मीरविषयक उल्लेख और वर्णन भी पर्याप्त प्राचीन है। ग्रन्थ के आरम्भ में ही अपने वंश के वर्णन के प्रसङ्ग में शार्ङ्गधर ने लिखा है कि "पहले शाकम्भरी (साँभर) देश में श्रीमान् हम्मीर राजा चाहुवाण वंश में उत्पन्न हुआ, वह शौर्य में अर्जुन के समान ख्यात था। परोपकार के व्यसन में निष्ठ, पुरन्दर के गुरु (बृहस्पति) के समान, राघवदेव नाम का द्विजश्रेष्ठ उसके सभ्यों में मुख्य था"। शार्ङ्गधर

इस राघवदेव का पौत्र था, और जिस विद्वान् को नयचन्द्रसूरि ने भी 'षड्भाषा-कविचक्र-शक्र' और 'अखिल-प्रामाणिकाग्रेसर' कहा है उसके लिए उसके पौत्र के हृदय में कुछ अभिमान होना स्वाभाविक ही है। साथ ही नयचन्द्र के उल्लेख से यह भी सम्भावना होती है कि हम्मीर की सभा में अनेक षड्भाषाकवियों और तार्किकों का मण्डल था जिनमें मुख्य राघवदेव था। पद्धति का १२५७ वाँ श्लोक भी हम्मीरपरक है। कवि अज्ञात है। हम्मीर की सेनाके प्रयाण को उद्दिष्ट कर वह कहता है, 'हे चक्र (चकवाक!) चक्री (चकवी!) के विरह ज्वर से तू कातर मत हो। रे कमल तू संकुचित न हो। यह रात्रि नहीं है। हम्मीर भूप के घोड़ों की टाप से विदीर्ण भूमि की धूलि के समूहों से यह दिन में ही अन्धकार हो गया है।"

हम्मीर-विषयक अन्य प्राचीन रचना विद्यापति की पुरुष-परीक्षा है। राजस्थान से बहुत दूर रहने पर भी कवि को हम्मीर विषयक अनेक तथ्य ज्ञात थे। उसका अदीन अलाउद्दीन और महिमासाह मुहम्मदशाह है। अलाउद्दीन और हम्मीर के सन्देश और प्रतिसन्देश भी इतिहास सम्मत तथ्य हैं। मन्त्रियों के नाम रायमल्ल और रामपाल हैं जो रनमल और रतिपाल के विकृत स्वरूप से प्रतीत होते हैं। जाजदेव (जाजा) आदि योद्धाओं और महिमासाहि के अन्त तक हम्मीर का साथ देने की कथा भी पुरुष-परीक्षा में है। किन्तु जाजा के लिये इसमें 'योध' शब्द प्रयुक्त होने से यह अनुमान करना कि जाजा किसी उच्चपद पर प्रतिष्ठित न था कुछ विशेष तर्कानुगत प्रतीत नहीं होता। योद्धा होना तो उस से उच्च पदस्थ राजपूत के लिए भूषण है, दूषण नहीं। जोधपुर के राज्य के संस्थापक का नाम केवल जोधा मात्र था।

मल्ल और खेम के कवित्तों में तो जाजा का इतना महत्त्व है कि हम्मीर मुहम्मदशाह से कहता है कि जब तक रणथंभोर का गढ़, आजा बड़गूजर और उसका बन्धु वीरम रहेंगे, तब तक वह उसको त्याग न करेगा। खेम के ११ वें कवित्त में वह 'वड राउत' है, और ऐसा ही निर्देश सम्भवतः मल्ल के त्रुटित कवित्त में भी रहा होगा।

पुरुष परीक्षा में जौहर का भी वर्णन है। किन्तु कथा इतनी संक्षिप्त है कि उसमें हम्मीर विषयक बहुत-सी बातें छुट गई हैं। लेखक का लक्ष्य केवल हम्मीर की दयावीरता सिद्ध करना था। इसके लिए जितनी सामग्री उसने प्रयुक्त की है वह पर्याप्त है।

इससे अग्रिम कृति हम्मीर हठाले के कवित्त हैं जिनकी मूँधड़ा राजरूप ने संवत् १७९८ में देशनोक में नकल की। कर्ता "कविमल्ल' (कवित्त ३,६) या 'कवि माल' (कवित्त ५) है और इस छोटी सी २१ कवित्तों की कृति में वीर रस की अच्छी परिपुष्टि हुई है। पहले कवित्त में 'महिमा मुगल' शरण की प्रार्थना करता है। जाजा और वीरम के महत्त्व को प्रदर्शित करते हुए द्वितीय कवित्त में हम्मीर की उक्ति हम अभी दे चुके हैं। तीसरे कवित्त में बादशाह की ओर से राजकुमारी के सुल्तान से विवाह, धारू वारू नर्तकियों के समर्पण, और हाथी, घोड़ों और द्रव्य आदि की मांग है। चौथे कवित्त में हम्मीर का दर्पपूर्ण उत्तर है। उसकी मांग अलाउद्दीन से भी बढ़कर है। वह गजनी माँगता है, उसके भाई अलीखान (उलूगखां) से घास कटवाना चाहता है, उससे 'मरहठी नारी' माँगता है, और यह भी चाहता है कि बादशाह अनेक अन्य बादशाहों के साथ आकर उसकी सेवा करे। पाँचवें कवित्त में अलाउद्दीन का दूत

इतिहास की दृष्टि से इस कृति का कुछ महत्त्व है। महिमासाहि का शरण में आना, धारू की उड्डानसिंह के हाथ मृत्यु, हम्मीर और अलाउद्दीन के दूत का कथोपकथन, रणमल का विश्वासघातादि ऐसी सामग्री है जो अन्यत्र भी मिलती है। विशेष ध्यान देने योग्य बातों में जाजा का महत्त्व है। हम्मीर को उस पर बड़ा भरोसा है। जाति से इन कवित्तों के अनुसार वह बड़गूजर है (कवित्त २) दूहे २ में वह 'परदेसी पाहुणों' के रूप में अभिहित है (पृ० ४९, दूहा २); किन्तु वह हम्मीर का विश्वस्त 'स्वामिधर्मी' सेवक है। (१६) उसके पिता का नाम वैजल है (१७) और उसके एवं राव के मरने पर ही गढ़ का पतन होता है। कवित्त में जाजा को 'बड़गूजर', हम्मीरायण में 'देवड़ा', हम्मीर महाकाव्य में 'चाहमान' और भाट खेम की कृति में फिर बड़गूजर के रूप में देखकर जाजा की जाति को निश्चित करना कठिन पड़ता है। किन्तु इनमें सबसे प्राचीन कृति हम्मीर महाकाव्य है; और उसीका कथन सम्भवतः सबसे अधिक विश्वस्त है[1]। युद्ध को बारह वर्ष तक चलाना (२१) अशुद्ध है। हम्मीर के स्वर्ग प्रयाण के लिए श्रावण मास, पंचमी तिथि और शनिवार ठीक हो सकते हैं। किन्तु 'उपीठर अगहनै' अशुद्ध है (२०)। जो कवित्त का पृथ्वीराज हम्मीर महाकाव्य के भोजदेव का भाई हो तो हम्मीर-महाकाव्य की भोज की प्रतिशोध कथा कल्पित नहीं है।[2] लिखमसि छाहड़देव और चन्दसूर के विषय में कुछ और शोध की आवश्यकता है।

भाट खेम की रचना "राजा हम्मीरदे कवित्त" (पृ० ६०-६६) की

१. इसी प्रस्तावना में ऊपर हमारा जाजा-विषयक विमर्श पढ़ें।
२. डा० माताप्रसाद गुप्त कथा को कल्पित मानते हैं (देखें हिन्दुस्तानी १९६१, पृ० ६-७)

प्रति का लेखन-काल संवत् १७०६ है। इसलिए कवित्त की रचना इस संवत् से परतर नहीं हो सकती।

इसके प्रथम कवित्त में मंगोल की शरणागति और दूसरे में शरण-प्रदान का वर्णन है। इसके बाद अलाउद्दीन के दूत मोलण और हम्मीर का वार्तालाप है। इसमें मोलण अलाउद्दीन की सामर्थ्य का बखान करता है। हम्मीर उससे गजनी, उल्लगखाँ, नसरतखाँ, मरहठी नारी, ठट्टा, तिलंग आदि का माँग करता है। (३-७) उसके बाद अलाउद्दीन के घेरे (९) उद्धानसिंह के हाथ धारू की मृत्यु (११) अलाउद्दीन के छत्र कटने (१२-१४), इसके बाद और युद्ध के आरम्भ होने का वर्णन है। साथ ही गद्य-भाग में यह सूचना भी है, "जाजा बड़गूजर प्राहुणा होकर आया था। राजा हमीर ने उसे अपनी बेटी देवलदे विवाही थी। वह मोड़ बांधे ही काम आया। राणी देवलदे तालाव में डूबकर मर गई। किन्तु कवित्त में फिर वही कथानक चालू रहता है। हम्मीर जाजा को परदेसी पाहुणा कहते हुए जाने के लिए कहता है, किन्तु जाजा इन्कार करता है (दूहा २)। पन्द्रहवें कवित्त में हम्मीर कहता है कि चाहे राणा रायपाल, चाहे बाहड, भोजदेव, रावतभोज, रंतौ (रतिपाल), बीरमदे, रावत जाजा, चन्दसूर और सभी देवी देवता भी शत्रु से मिल जाएँ तो भी वह अपने वचन का त्याग न करेगा (१५)। उसके बाद उसने अपूर्व युद्ध किया। सम्वत् १३५३, माघ सुदी एकादशी मंगल के दिन अलाउद्दीन ने रणथम्भोर लिया और मध्याह्न के समय हम्मीर ने अपना सिर सतप्रोल दरवाजे पर महादेव को चढ़ाया।

इन कवित्तों का स्वतन्त्र मूल्य विशेष नहीं है 'भाटरीम की कृति भी

हम इन्हें कहें या न कहें इसमें भी हमें सन्देह है, क्योंकि यह प्रायः 'रणथंभोर रै राणै हमीर हठालै रा कवित्त' का शब्दानुवाद या भावानुवाद मात्र है। कहीं कहीं मल्ल की कृति त्रुटित या अस्पष्ट है। उसकी पूर्ति और समझ में यह रचना अवश्य सहायक है। दोनों काव्यों के पहले दो कवित्त कुछ शब्द भेद होने पर भी वास्तव में एक ही हैं। मल्ल के तीसरे कवित्त को खेम ने पाँचवाँ बना दिया है। चौथे कवित्त के स्थान पर खेम के आठवें कवित्त हैं। किन्तु कुछ नाम मल्ल के कवित्त से अधिक शुद्ध हैं। अलीखान से उलगो नाम उल्लगखान के अधिक सन्निकट है। साथ ही नुसरतखाँ 'धटा' और 'तिलंग' के नाम बढ़ा दिए गए हैं। खेम का सातवाँ कवित्त मल्ल के पाँचवें कवित्त का, और नवाँ कवित्त मल्ल के ग्यारहवें कवित्त का और दसवाँ कवित्त मल्ल के आठवें कवित्तका रूपान्तर है। मल्ल का बारहवाँ कवित्त खेमका ग्यारहवाँ है। बारहवें कवित्त में मल्ल के कवित्त की सामान्य छाया ही आ सकी है। खेम का बारहवाँ पद्य प्रायः नवीन है; किन्तु चौदहवाँ पद्य फिर मल्ल के पन्द्रहवें पद्य का रूपान्तर है। 'बात' खेम भाट की या तो निजी कृति है या इसे किसी अन्य भाट ने जोड़ दी है। बात के बहुमूल्य होने में ही हमें अत्यधिक सन्देह है इसे देवलदेवी का पति बनाकर तो खेम ने कल्पना की पराकाष्ठा कर डाली है। हम्मीर महाकाव्य का कथन तो इसका विरुद्ध है ही; यह अन्य प्राचीन और नवीनकृतियों से भी असमर्थित है। खेम का पन्द्रहवाँ पद्य मल्ल के नवें पद्य का रूपान्तर है; किन्तु कुछ फेरफार सहित। इसका बारह मल्ल का छारह है। रायपाल, वीरमदेव और रतन जाजा आदि के नाम इसमें अधिक हैं।

खेम का सोलहवाँ पद्य उसकी कृति है। रणथंभोर के वर्णन का

समय भी उसका निजी ही नहीं, सर्वथा अशुद्ध भी है। हम्मीर के रणथंभोर के दरवाजे पर आकर 'कमल-पूजा' की कथा अब भी प्रसिद्ध है। प्राचीन पारम्परिक कथा से इसका विरोध है।

नैणसी ने गढ़ के पतन की दो तिथियाँ दी हैं, सम्वत् १३५२ श्रावण बदी ५ (नैणसी की ख्यात, भाग १, पृ० १६०) और दूसरी संवत् १३५८ (भाग दूसरा, पृ० ४८३)। इनमें दूसरा संवत् ठीक है।

महेशकृत 'हम्मीर रासो' की दो प्रतियाँ श्री अगरचन्दजी नाहटा के संग्रह में हैं और कुछ प्रतियाँ अन्यत्र भी हैं। 'भाषा डिंगल से प्रभावित राजस्थानी है।" इस कृति की कुछ उल्लेख्य विशेषताएं निम्न-लिखित हैं।

(१) महिमासाहि को अलाउद्दीन की किसी बेगम से अनुचित सम्बन्ध के कारण निकाला जाता है। गाभरू बादशाह की सेवा में रहता है।

(२) छाणगढ़ का रणधीर हम्मीर की सहायता करता है। इसलिए रणथम्भोर को लेने से पहले बादशाह छणगढ़ लेता है।

(३) नर्तकी को गाभरू गिराता है।

(४) सुर्जन कोठारी के मिल जाने से अलाउद्दीन को ज्ञात होता है कि दुर्ग में धान्य नहीं है।

(५) बादशाह सेतुबन्ध जाकर भगवान् शिव का पूजन कर समुद्र में कूद कर अपने प्राणों का त्याग करता है।

इस कथा में कल्पना अधिक और ऐतिहासिक तथ्य कम है।

जोधराज कृत हम्मीर-रासो प्रकाशित रचना है। इसके बारे में

इतना ही कहना पर्याप्त है कि यह प्रायः महेश के हम्मीर-रासो का रूपान्तर है। इसी प्रकार चन्द्रशेखर वाजपेयी का 'हम्मीर हठ' भी प्रकाशित है। इतिहास की दृष्टि से इसका महत्त्व भी विशेष नहीं है।

ग्वाल कवि का 'हम्मीर हठ सं० १८८३ की कृति है। यह चन्द्रशेखर के 'हम्मीर-हठ' से बहुत कुछ मिलती-जुलती है।[1]

"भाण्डउ की हम्मीरायण के अतिरिक्त एक 'बृहद् हम्मीरायण' भी जिसका सम्पादन श्री अगरचन्द नाहटा कर रहे हैं। श्री नाहटा की सूचना के अनुसार 'हम्मीरायण की दो प्रतियों में से एक प्रति तो पूर्ण है और दूसरी प्रति में केवल २४८ पद्य हैं, जबकि पूरी प्रति में अन्तिम पद्य संख्या १३७३ है। ऐसा प्रतीत होता कि अधूरी प्रति इस पूर्ण प्रति से ही नकल की जा रही थी जो पूरी नहीं हुई।" मूल प्रति सं० १७८४ की है। भाषा हिन्दी है, और किसी अंश तक थान की भाषा से मिलती है।

कविता का आरम्भ सरस्वती, गजानन, चतुर्भुज आदि को प्रणाम कर किया गया है। लक्ष्य वही है जो किसी वीरगाथा का होना चाहिए—

सांभल रूप हमीर को, सांभल सुन है बात।
सुरापन हुवै चौगनो, सूरां सदा सुहात॥

प्रति के अन्त में सेना की संख्या है। 'अन्तेवरी', निशान, रथ, मुकुटबन्ध राजा, सोना रूपा का भण्डार, पट्टण, पुर के गढ़, रथ आदि की भी संख्याएँ हैं जो अतिशयोक्ति पूर्ण हैं।

इस ग्रंथ की समीक्षा हम यथास्थल अन्यत्र करेंगे।

---

१ देखें श्री विश्वनाथप्रसाद मिश्र—'ग्वाल कवि', धीरेन्द्र वर्मा विशेषांक हिन्दी अनुशीलन, पृ० २११.

राजस्थान पुरातत्त्व मन्दिर सं० ४९०२ पर एक ग्रन्थ का आरम्भ 'श्रीगनेसाय नमः' हमीराइन लीपतै शब्दों से होता है। किन्तु इसका आरंभ गणेशवन्दन है। उसके बाद सरस्वती की आराधना कवित्त है, जिसमें कृति का नाम 'हमीररासो' है। अन्तिम कवित्त में, जिसकी संख्या २८५ है, फिर पुस्तक 'हमीराइन' ग्रंथ के नाम से निर्दिष्ट है। समस्त ग्रन्थ देखने पर कुछ निश्चित रूप से लिखना सम्भव है। आरम्भ दूसरी हमीरायण से कुछ भिन्न है।

आगरे के श्री उदयशङ्कर शास्त्री के पास एक कृति है जिसका नाम "पातसाह अलावदीन चहुवांन हमीर की वचनका भट्ट मोहिल कृत है।" किन्तु कृति के अन्दर कवि का नाम मल्ल है जो हम्मीर के कवित्तों के कर्ता मल्ल से भिन्न तथा पर्याप्त अर्वाचीन है।

इस ग्रंथ का आरम्भ गणपति की स्तुति से है। रणथम्भोर के दुर्ग का भी अच्छा वर्णन है (७-१४)। इसके बाद वचनिका में हम्मीर-विषयक एक विचित्र कथा है। हम्मीर बादशाह का 'राजपूत' है, किन्तु उसे पूरे हाथ से सलाम न कर एक अंगुली दिखाता है। इसलिए उसे लोग बांका हमीर कहते थे।

इस वैर का कारण बताने के लिए कवि ने सुल्तान के पूर्वजन्म की वार्ता दी है। सोमनाथ पट्टण में दो अनाथ ब्राह्मण बालकों ने जिनके नाम भलैया और कनैया थे, बारह वर्ष तक बिना किसी वृत्ति के गौएं चराईं। फिर बारह वर्ष उन्होंने तीर्थयात्रा की और अनेक तीर्थों से सोमनाथ पर चढ़ाने के लिए जल ग्रहण किया। किन्तु शिव ने पण्डा भेजकर कहलाया कि यदि वे उस पर जल चढ़ायेंगे तो मन्दिर गिर पड़ेगा और शिवलिंग भग्न होगा।

इससे दुःखी होकर दोनों काशी गए और काशी-करोत लेकर उन्होंने प्राण छोड़े। अन्तिम समय में अलैया ने बादशाह बनकर गोवध और हम्मीर के मन की प्रार्थना की और कनैया ने उनकी रक्षा के लिए हम्मीरसिंह सोनिगरा के घर में अवतार की।

आगे की कथा मुझे प्राप्त नहीं है। किन्तु इतने से ही अनुमान लगाया जा सकता है कि इस ग्रंथ में विशेष ऐतिहासिकता नहीं है। यह केवल जन मनोरंजन के लिए घड़ी हुई बात है जिसके तत्त्व अनेक स्थलों से संगृहीत हैं।

संस्कृत काव्यों में '*हम्मीर महाकाव्य*' के अतिरिक्त सुर्जन चरित में हम्मीर की कथा है। यह जैत्रसिंह का पुत्र (११-७) और विविध वीर था (११-८)। आसमुद्रान्त भूमि को विजित कर उसने तुरुष्कों पर आक्रमण किया और आसानी से दिल्ली जीत ली (११-१५-१६)। चम्बल में स्नान कर और मृत्युञ्जय भगवान् शिव का अर्चन कर उसने तुलादान दिया (११-४२-४६)। शुभ मुहूर्त में उसने 'कोटियज्ञ' यज्ञ का आरम्भ किया (११-५८)। इस अवसर को उपयुक्त समझकर अलाउद्दीन रणथम्भोर के लिए रवाना हुआ (११-६४)। उसका भाई उल्लुखान भी ५०,००० सवारों सहित चला (११-६५), और जगरपुर में उसने डेरे डाले। हम्मीर के सेनापति रण (रंग) मल्ल ने उल्लुखान को हराया (११-६९) इससे क्रुद्ध होकर अलाउद्दीन ने रणथम्भोर को आ घेरा (११-७१)। हम्मीर यज्ञ की समाप्ति पर रणथम्भोर वापिस आया (११-७४)।

अलाउद्दीन का दूत सन्देश लेकर उसके पास पहुँचा (१२-१)। उसने कहा, बादशाह को राज्य करते सात वर्ष बीत चुके हैं। तुमने न कर

द्वारा और न सेवा द्वारा उसे प्रसन्न किया है। तुमने बादशाह का बिगाड़ करने वाले महिमासाहि आदि को अपना सेनापति नियुक्त किया है। और कहने से क्या लाभ ? तुमने जगरा तक को लूटा जहाँ उसके भाई के सामन्तों का निवेश था। महिमासाहि आदि को पिंजरे में डालकर नज़र करो। सात साल का कर दो। अपने हाथी बादशाह को दो। सौ नर्तकी भी अर्पण करो। इतना करने से तुम्हारे प्राणों की रक्षा होगी और तुम्हारा राज्य समृद्ध होगा (१२-८-२०)

हम्मीर ने इसका समुचित उत्तर दिया (१२-२३-२८)। किन्तु धीरे-धीरे दुर्ग की आन्तरिक स्थिति को हम्मीर ने बिगड़ते देखा। उसकी बहुत सी सेना शत्रु से जा मिली। किसी ने धन के लोभ से और किसी ने भय से अलाउद्दीन की नौकरी स्वीकार की। कई चिर-निरोध की यंत्रणा से बाहर निकल गए। ऐसी स्थिति में हम्मीर ने युद्ध का ही निश्चय किया (१२-४५-४७) राणियों ने जौहर किया (१२-५५) और हम्मीर ने अपूर्व युद्ध (१२-५८-७६) युद्ध में धराशायी होकर उसने अनुपम कीर्ति रूपी शरीर की प्राप्ति की (१२-७७)

इस काव्य का रचयिता चन्द्रशेखर कवि अकबर का समकालीन था और उसने सुर्जन हाडा के बार बार कहने पर सुर्जन चरित की रचना की थी। काव्य में एकाध बात अतिरञ्जित है। उदाहरण के लिए हम्मीर ने कभी दिल्ली पर अधिकार नहीं किया। किन्तु अधिकतर इसके कथन इतिहास सम्मत हैं।

मुसलमानी साहित्य

हम्मीर विषयक इतिहास का दूसरा पक्ष मुसलमानी इतिहासकारों[१] ने

प्रस्तुत किया है। समसामयिक लेखक होने के कारण उनके कथन में पर्याप्त सत्य की मात्रा है। माना कि पूर्वाग्रह वश उन्होंने अनेक बातें छिपाई हैं। किन्तु ऐसी बातें भी हमें उनसे प्राप्य हैं जिनके सम्यक् ज्ञान के बिना हम्मीर के जीवन को समझना कठिन है।

अमीर खुसरो—हम सबसे पहले अमीर खुसरो की रचनाओं को लेते हैं जिनके इतिहास ग्रन्थों की रचना सन् १२९१ से १३२० के बीच में हुई है। दिवलरानी में (जिसकी रचना सन् १३१६ की है) अमीर खुसरो ने लिखा है :—[1]

"देहली की विजय के उपरान्त जब सिन्ध और पहाड़ों तथा दरियाओं के प्रदेश सुल्तान के अधीन हो गए तो उसने निश्चय किया कि गुजरात का राय भी उसके अधीन हो जाय। उसने उलुगखाँ को आदेश दिया कि वह उस प्रदेश पर आक्रमण करे। उलुगखाने मुअज्जम भाइन की ओर रवाना हुआ। रणथम्भोर पर उसने बड़ी तेजी से रक्तपात प्रारम्भ कर दिया। वहाँ का राव हमदाराय (हम्मीरदेव) राय पिथौरा के वंश से था। दस हजार सवार देहली से २ सप्ताह में धावा मारकर वहाँ पहुँचे थे। वहाँ की चहारदीवारी ३ फरसंग[2] के घेरे में थी और पत्थर की बनी हुई थी। (६४-६५) सुल्तान भी युद्ध के लिए वहाँ पहुँच गया। किन्तु उलुगखाँ को किले पर आक्रमण करने का आदेश देकर स्वयं चित्तौड़ पर अपना अधिकार जमा लिया"।

1. खल्जी कालीन भारत, पृ० १७१।
2. फरसंग तीन मील के बराबर होता था।

अलाउद्दीन और हम्मीर के संघर्ष का इससे अधिक विस्तृत विवरण खुसरो के ग्रन्थ 'खजाइनुलफूतुह' में है जिसकी रचना उसने सन् १३११-१२ में की। भाषा अत्यन्त आलङ्कारिक है। खुसरो ने लिखा है, "जब भगवान् के छाये का आसमानी चिन्ह रणथम्बोर पहाड़ी पर पहुँचा तब अत्यधिक ऊँचा किला, जिसकी अट्टालिकाएँ नक्षत्रों से बात करती थीं घेर लिया गया। हिन्दुओं ने किले की दसों अट्टारियों पर आग लगा दी, किन्तु अभी तक मुसलमानों के पास इस अग्नि को बुझाने के लिए कोई सामग्री एकत्रित न हुई थी। थैलों में मिट्टी भर भर कर पाशेब[1] तैयार किया गया। कुछ अभागे नव मुसलमान जो कि इससे पूर्व मुगल थे हिन्दुओं से मिल गये थे। रजब से जीकाद (मार्च से जुलाई) तक विजयी सेना किले को घेरे रही। किले से बाणों की वर्षा के कारण पक्षी भी न उड़ सकते थे। इस कारण शाहीबाज़ भी वहाँ तक न पहुँच सकते थे। किले में अकाल पड़ गया। एक दाना चावल दो दाना सोना देकर भी प्राप्त नहीं हो सकता था। नव रोज के पश्चात् सूर्य रणथम्बोर की पहाड़ियों पर तेजी से चमकने लगा। राय को संसार में रक्षा का कोई भी स्थान न दिखाई पड़ता था। उसने किले में आग जलवा कर अपनी स्त्रियों को आग में जलवा दिया। तत्पश्चात् अपने दो एक साथियों के साथ पाशेब तक पहुंचा किन्तु उसे भगा दिया गया। इस प्रकार मंगलवार ३ जीकाद ७०० हिजरी (१० जुलाई, १३०१ ई०) को किले पर विजय प्राप्त हो गई। झायन जो इससे पूर्व बहुत आबाद था और काफिरों का निवास स्थान था, मुसलमानों

१ "मिट्टी का मचान जो किले की दीवारों की ऊँचाई के बराबर बनाया जाता था। इस पर आगे और पत्थर फेंकनेवाली मशीनें रखी जाती थीं।

"का नया नगर बन गया। सर्व प्रथम बाहिर देव के मन्दिर का विनाश कर दिया गया। इसके उपरान्त कुफ्र के घरों का विनाश कर दिया गया। बहुत से मजबूत मन्दिर जिन्हें कयामत का बिगुल भी न हिला सकता था, इस्लाम के पवन के चलने से भूमि पर सो गए।"[१]

अलाउद्दीन से संघर्ष १३०१ में हुआ। उससे लगभग १० वर्ष पूर्व जलालुद्दीन से हम्मीर का संघर्ष हुआ था। इसका अच्छा विवरण खुसरो ने सन् १२९१ में ही रचित मिफ्ताहुल फुतूह नाम के ग्रंथ में दिया है। हम्मीर की पूरी जीवनी के लिए यह अंश भी उपयोगी है इसलिए हम उसे भी यहाँ उद्धृत कर रहे हैं।

"(व्यवहारों से) दो सप्ताह यात्रा करके सुल्तान रणथंभोर की पहाड़ियों के निकट पहुँच गया। तुर्कों ने देहातों का विनाश प्रारम्भ कर दिया। अमिम दल के सवार भेजे जाने लगे और हिन्दुओं की हत्या होने लगी। सुल्तान स्वयं झायन से चार परसंग की दूरी पर रहा। कुछ सवार शत्रुओं के विषय में जानकारी प्राप्त करने के लिये भेजे गये। (२६) ने पहाड़ियों में शिकारियों की भांति शत्रुओं की खोज करने लगे। इसी बीच में उन्हें पांच सौ हिन्दू सवार दृष्टिगोचर हुए, दोनों सेनाओं में युद्ध हो गया। हिन्दू "मार-मार" का नारा लगाते थे। एक ही धावे में ७० हिन्दुओं की हत्या कर दी गई। वे लोग पराजित होकर भाग गये। शाही सेना विजय प्राप्त करके अपने शिविर की ओर वापस हो गई और सुल्तान तक यह समाचार पहुँचा दिया गया। इस प्रारम्भिक विजय से सुल्तान का बल और बढ़ गया। दूसरे दिन एक हजार वीर सैनिक भेजे गए...सेना ने झायन

१ खलजी कालीन भारत पृ० १५९-६०

दो फरसंग की दूरी पर था, किन्तु बीच में बड़ी कठिन पहाड़ियाँ थीं। शाही सेना एक ही धावे में पहाड़ियों में प्रविष्ट हो गई। उसके वहाँ पहुँच जाने से झायन में भी हलचल मच गई। राय को जब सूचना मिली तो उसके हाथ-पैर फूल गए। उसने साहिनी को बुलाया जो हिन्दू नहीं, अपितु लोहे का पहाड़ था और उसके अधीन चालीस हजार सैनिक थे जो मालवा तथा गुजरात तक धावे मार चुके थे। (२७-२८) उससे युद्ध करने के लिये कहा। उसने दस हजार सैनिक एकत्रित किये। वे लोग झायन से शीघ्रातिशीघ्र चल खड़े हुए। तुर्क धनुर्धारियों ने बाणों की वर्षा प्रारम्भ कर दी। (७९) घमसान युद्ध होने लगा। साहिनी भाग गया। एक ही धावे में हजारों रावत मारे गए। तुर्कों की सेना का केवल एक खासादार मारा गया। झायन में कोलाहल मच गया। रातों रात राय और उसके पीछे बहुत से हिन्दू झायन से रणथम्बोर की पहाड़ियों की ओर भाग गए। (३०) शाही सैनिक विजय प्राप्त करके रणभूमि से सुल्तान की सेवा में उपस्थित हो गए। बन्दी रावतों को पेश किया गया। जब लूट की धन सम्पत्ति पेश की गई तो सुल्तान बड़ा प्रसन्न हुआ।...

तीसरे दिन दोपहर में सुल्तान झायन पहुँचा और राय के महल में उतरा। महल की सजावट और कारीगरी देखकर वह चकित रह गया। वह महल हिन्दुओं का स्वर्ग ज्ञात होता था। चूने की दीवारें आइने के समान थीं। उसमें चन्दन की लकड़ियाँ लगी थीं। बादशाह कुछ समय तक उस महल में रहकर बड़ा प्रसन्न हुआ। वहाँ से निकल कर उसने मन्दिरों और उद्यानों की सैर की। मूर्तियों को देखकर वह आश्चर्य में पड़ गया। उस दिन तो वह मूर्तियों को देखकर वापस हो गया। दूसरे दिन

उसने सोने की मूर्तियाँ पत्थर से तुड़वा डालीं। महल, किला तथा मन्दिर तुड़वा डाले गये। लकड़ी के खम्भों को जलवा दिया गया। (३२) झायन की नींव इस तरह खोद डाली गई कि सैनिक धन सम्पत्ति द्वारा मालामाल हो गये। मन्दिरों से आवाज आने लगी कि शायद कोई अन्य महमूद जीवित हो गया। दो पीतल की मूर्तियाँ जिनमें से प्रत्येक एक हजार मन के लगभग थी तुड़वा डाली गईं और उनके टुकड़ों को लोगों को दे दिया गया कि वे (देहली) लौटकर उन्हें मस्जिद के द्वार पर फेंक दें। तत्पश्चात दो सेनाएँ दो सरदारों की अधीनता में भेजी गईं। एक सेना का सरदार मलिक खुर्रम था और दूसरी सेना का सरदार महमूद सर जानदार था। (३३) झायन से भागकर कुछ काफिर पहाड़ी के दामन में छिप गये थे। मलिक खुर्रम सूचना पाते ही वहाँ पहुँच गया और अत्यधिक लोगों को बन्दी बना लिया। असंख्य पशु भी प्राप्त हुए। मलिक दासों को लेकर सुल्तान की सेवा में उपस्थित हुआ। सर जानदार ने चंबल तथा कुंवारी नदी पार करके मालवा की सीमा पर धावा मारा और वहाँ बहुत लूट मार की। सुल्तान ने झायन से प्रस्थान किया।[1] जलालुद्दीन के समय के संघर्ष का कुछ वर्णन अमीर खुसरो के मुफ्ताह नामे में भी है। जिसका रचना काल सन् ११२० है। गुमटीसान पर विजय के बाद सुल्तानशाह के भाषण को सुनकर लोगों ने कहा, "हे अमीर, तू अपने गुणों को दूसरों के नाम से क्यों बनाता है। हम लोगों को तेरे विषय में पूर्ण जानकारी है, जिस समय बादशाह (जलालुद्दीन खल्जी) ने रणथम्भोर को घेर लिया और अपनी सेना के चारों ओर एक घेरा तैयार कर दिया तो उस समय तक

---

१ खल्जी कालीन भारत, पृष्ठ १५३-५४

रणथम्भोर की एक चुनी हुई सेना ने उस घेरे पर धावा बोल दिया। इससे बादशाह की सेना में कोलाहल मच गया। उस समय बादशाह ने तुझे भी आदेश दिया और तू ने ही अपनी वीरता तथा परिश्रम से आक्रमण-कारियों को पराजित किया। इस विजय के फलस्वरूप बादशाह ने तुम्हें विशेष रूप से सम्मानित किया।"[१]

अमीर खुसरो की रचनाओं में से उद्धृत ऊपर के अवतरणों में हम्मीर विषयक अनेक तथ्य हैं। किन्तु ये पुस्तकें तत्कालीन सुल्तानों को प्रसन्न करते और उनसे धन बटोरने के लिए लिखी गई थीं। इसलिए इनमें एक भी कटु सत्य न आने पाया है। विवरण एकांगी है और इसे पर्याप्त साव-धानी से प्रयुक्त न करने पर कुछ असत्य के प्रचार की सम्भावना है।

एसामी :—एसामी ने 'फुतूहुस्सलातीन' की रचना सन् १३५० में की। उसके इतिहास में कई ऐसे तथ्य हैं जो अमीर खुसरो और नयचन्द्र की रचनाओं की अनुपूर्ति करते हैं।

सुल्तान जलालुद्दीन के बारे में उसने लिखा है कि "सुल्तान ने शिकार के नियम से झायन की ओर प्रस्थान किया। झायन पहुँचकर सुल्तान के आदेशानुसार सेना ने किले को टुकड़े-टुकड़े कर दिया। मन्दिरों का विध्वंस तथा हिन्दुओं का विनाश कर दिया।"[२]

अलाउद्दीन के भाई उलुगखां ने गुजरात की विजय के बाद वापस लौटते समय उलुगखां ने बलात् सरदारों लूट में से सुल्तान का हिस्सा वसूल कर लिया। "कमीज़ी मुहम्मदशाह, कामरू, यलचक़ तथा बर्क़ जो

---

१ खलजी कालीन भारत, पृ० १९२
२ ,, ,, ,, पृ० १५५-५६

जिआउद्दीन बरनी—जियाउद्दीन बरनी का जन्म सन् १२८५ में हुआ। उसने तारीखे फीरोज़शाही की समाप्ति सन् १३५७ में की जब उसकी आयु ७२ वर्ष की थी। उसके इतिहास में भी हम्मीर सम्बन्धी अनेक उपयोगी सूचनाएँ हैं। उनमें से मुख्य ये हैं :—

(१) 'सन् ६८९ हिजरी (१२९० ई०) में सुल्तान जलालुद्दीन ने रणथम्भोर पर चढ़ाई की।...झायन पहुँच कर उसे अपने अधिकार में कर लिया। वहाँ के मन्दिरों को कलुषित कर डाला। ...रणथम्भोर का राय, राजकुमारों, मुकद्दमों तथा प्रतिष्ठित व्यक्तियों एवं उनके परिवार सहित अपने किले में बन्द हो गया। सुल्तान की इच्छा थी कि रणथम्भोर पर अधिकार जमा लिया जाय। किले को घेर लेने का आदेश दे दिया गया। मग़रबी[1] तैयार की गईं। साबात एवं गरगज बनाए गये। किले पर अधिकार जमाने का प्रयत्न आरम्भ हो गया। अभी यह तैयारियाँ हो रही थीं कि सुल्तान झायन से सवार हो कर रणथम्भोर पहुँचा। किले का निरीक्षण करके चिन्ता में पड़ गया। सायंकाल फिर झायन लौट गया। दूसरे दिन राज्य के पदाधिकारियों तथा सरदारों को बुलवा भेजा। उसने कहा कि मेरी इच्छा है कि किले पर अधिकार जमा लूँ। कल जब मैंने किले के निरीक्षण करने के उपरान्त सोच-विचार किया तो मेरी समझ में यह आया कि यह किला उस समय तक विजय नहीं हो सकता जब तक मुसलमानों का बहुत बड़ा दस्ता इस किले को प्राप्त

१—इसका अर्थ तोप भी बताया गया है, किन्तु सम्भव है कि इसके द्वारा आग तथा शीघ्र जलने वाले पदार्थ फेंके जाते हों (खलजी कालीन भारत, ३)।

करने के लिये अपने प्राण न त्याग दे और किले पर विजय प्राप्त करने के लिये न्यौछावर न हो जाय। साबातों के नीचे, पाशेब बनाने तथा गरगच लगाने में अपनी जान की बलि न दे दें। ...यह कहकर किले को विजय करने के विचार त्याग दिये और दूसरे दिन कूच करता हुआ सुरक्षित तथा बिना किसी हानि के अपनी राजधानी में पहुँच गया।"

(२) अलाउलमुल्क की राय से सहमत होकर अलाउद्दीन ने विश्वविजय के स्थान पर सर्व प्रथम भारत के हिन्दू राज्यों को जीतने का निश्चय किया। 'सर्वप्रथम अलाउद्दीन ने रणथम्भोर पर विजय प्राप्त करना आवश्यक समझा, कारण कि वह देहली के निकट था और देहली के पिथौराराय का नाती हमीरदेव उस किले का स्वामी था। बयाना की अक्ता के स्वामी उलुगखाँ को उसे विजय करने के लिए भेजा। नुसरतखाँ को जो उस वर्ष कड़े का मुक्ता था, आदेश भेजा कि कड़े की समस्त सेना तथा हिन्दुस्तान की सब अक्ताओं की सेनाओं को लेकर रणथम्भोर की ओर प्रस्थान करे और रणथम्भोर की विजय में उलगखाँ को सहायता प्रदान करे। उलुगखाँ और नुसरतखाँ ने झायन पर अधिकार जमा लिया। रणथम्भोर का किला घेर लिया और किला जीतने में लग गए। एक दिन नुसरतखाँ किले के निकट पाशेब बंधवाने तथा गरगच लगवाने में तल्लीन था, किले के भीतर से मगरबी पत्थर फेंके जा रहे थे। अचानक एक पत्थर नुसरतखाँ को लगा और वह घायल हो गया। दो तीन दिन उपरान्त उसकी मृत्यु हो गई। यह समाचार अलाउद्दीन को मिला तो वह राजसी ठाठ से शहर से बाहर निकल कर रणथम्भोर की तरफ रवाना हुआ।"

तिलपत में अलाउद्दीन के भतीजे अकत खाँ ने उसकी हत्या करने का प्रयत्न किया। 'अकतखाँ के उपद्रव को शान्त करने के पश्चात् अलाउद्दीन लगातार कूच करता हुआ रणथम्भोर की ओर रवाना हुआ और वहाँ पहुँचकर डेरे डाल दिये।...

"इससे पूर्व किले को घेर रखा गया था। सुल्तान के पहुँचने के उपरान्त इसमें और तेजी हो गई। शहर के चारों ओर से मोर्चे लगाई गई। उनके थैले बना बना कर सेना में बाँट दिये गये। थैलों में बालू भरी गयी और वे खन्दकों (खाई) में डाल दिये गये। पाशेब बांधे गये। गरगच लगाये गये। किलेवालों ने मगरबी पत्थरों द्वारा पाशेबों को हानि पहुँचानी प्रारम्भ कर दी। वे किले के ऊपर से आग फेंकते थे और लोग दोनों ओर से मारे जाते थे।"

इसी बीच में अलाउद्दीन को बदायूँ और अवध में उसके भानजों के विद्रोह की सूचना मिली। अपने अमीरों को उनके विरुद्ध भेजकर सुल्तान ने उन्हें गिरफ्तार कर लिया। दिल्ली में मौला हाजी ने विद्रोह किया। किन्तु वह भी बड़े राजभक्त सरदारों ने समाप्त कर दिया। दिल्ली के सब समाचार अलाउद्दीन को मिले। "किन्तु उसने रणथम्भोर का किला जीतने का दृढ़ संकल्प कर लिया था। अतः वह अपने स्थान से न हिला और न देहली की ओर प्रस्थान किया। जिसकी सेना भी किले की विरुद्ध में लड़ी हुई थी, वह तंग भी तंग परेशान हो चुकी थी किन्तु सुल्तान अलाउद्दीन के भय और डर से कोई व्यक्ति अथवा सवार न तो देहली की ओर प्रस्थान कर सकता और न किसी अन्य ओर।"

"सुल्तान अलाउद्दीन ने हाजी मौला के विद्रोह के उपरान्त भी

परिश्रम तथा रक्तपात के पश्चात् रणथम्भोर के किले पर अपना अधिकार जमा लिया। राय हम्मीरदेव तथा उन नव मुसलमानों को जो कि गुजरात के विद्रोह के उपरान्त भाग कर उसकी शरण में पहुँच गए थे, हत्या करा दी। रणथम्भोर तथा उस स्थान के आस पास के विलायत (प्रदेश) एवं वहाँ का सब कुछ उलुगखाँ के सुपुर्द कर दिया गया[१]।

अहमद बिन अब्दुल्लाह सरहिन्दी—इस लेखक की तारीखे मुबारकशाही में भी हम्मीर पर आक्रमण का वर्णन है। इसके अनुसार हम्मीर के पास १२,००० सवार, अगणित प्यादे तथा प्रसिद्ध हाथी थे[२]।

फरिश्ता :—फरिश्ता ने अपनी तवारीख 'तारीखे फरिश्ता' की रचना सन् १६०६-१६०७ में की। उसका निम्नलिखित वर्णन भी कुछ नवीन तथ्यों से युक्त है :—

"नुसरतखाँ की मृत्यु के बाद हम्मीरदेव ने दो लाख सवारों और पैदलों के साथ गढ़ से निकल कर युद्ध किया। उलुगखाँ घेरा उठाकर झाइन वापस गया और वहाँ से सब हाल बादशाह को लिखा। जब गढ़रोध एक साल तक या दूसरे कथन के अनुसार तीन साल तक चल चुका था, बादशाह ने चारों ओर से सेना एकत्रित की और उन्हें थैले बाँटे। हर एक ने अपना थैला भरा और उसे खाई में फेंका,

---

१—खलजीकालीन भारत, पृ० २२-२३, ५९-६५,

२— ,, ,, पृ० २२३-२२४।

जिसका नाम 'रन' था। इस तरह (गढ़ की) दिवार तक ऊँचाई बनने पर घिरे हुए आदमियों को हराकर उन्होंने किला ले लिया। हम्मीरदेव अपने आश्रित भाइयों के साथ मारा गया। मुहम्मद शाह के नेतृत्व में कई लोगों ने विद्रोह किया था और जालोर से रणथम्भोर भाग आए थे। वे अधिकांश में मारे गए। मीर मुहम्मद शाह स्वयं घायल होकर पड़ा हुआ था। जब सुल्तान की नजर उस पर पड़ी तो उसने दयाभाव से उससे पूछा, "मैं तुम्हारी मरहमपट्टी करवाऊँ और तुम्हें इस खतरनाक हालत से बचा लूँ तो भविष्य में तुम मेरे से कैसा व्यवहार करोगे?" उसने उत्तर दिया, "मैं स्वस्थ हुआ तो तुम्हें मार कर मैं हम्मीरदेव के पुत्र को गद्दीनशीन करूँगा।" क्रोधाविष्ट होकर सुल्तान ने उसे हाथी के पैरों के नीचे कुचलवा दिया, किन्तु फौरन ही मुहम्मदशाह की हिम्मत और स्वामिभक्ति का स्मरण कर उसके मृत शरीर को अच्छी तरह दफनवा दिया। इसके अतिरिक्त उसने उन आदमियों को भी मरवा दिया...जिन्होंने राजा को छोड़ दिया था, जैसे राजा के वजीर रणमल आदि। उसने कहा, "अपने स्वामी के प्रति इनका ऐसा व्यवहार रहा है तो मेरे प्रति सच्चे कैसे हो सकते हैं?"

बरनी के वर्णन से अमीर खुसरो की कुछ अन्य भूल या भी त्रुटियाँ दूर की जा सकती हैं। जलालुद्दीन ने न खुशी से रणथंभोर छोड़ा और न झाइन। वह इसके लिए विवश हुआ था। हम्मीर के

१—तारीखे फीरोजशाही, इलियट और डाउसन हिस्ट्री, भाग ३, पृ० १७५. पर आधारित पत्रिका के अंग्रेजी में अनूदित अवतरण का हिन्दी अनुवाद।

अलाउद्दीन को भी आसानी से दुर्ग नहीं दिया, उसने अन्त तक अलाउद्दीन का सामना किया और अनेक बार उसके प्रयत्नों को विफल किया। और इसामी का वर्णन तो और भी अधिक उपयोगी है। उसने चारों मुगल बन्धुओं के नाम दिए हैं। नयचन्द्र ने महिमासाहि को काम्बोज कुलान्वय बनाया है, क्योंकि उसका नाम कमीज़ी मुहम्मदशाह था। नयचन्द्र का गामरूक वास्तव में कामरू है, और बिचर और तिचर वास्तव में यलचक तथा बर्क हैं। इनमें से इसामी के कथनानुसार यलचक और बर्क कर्ण के पास चले गए थे। किन्तु यह सम्भव है कि वहाँ अपने को सुरक्षित न समझ कर वे रणथमोर चले आए हों। उसने उलुगखाँ और हम्मीर को दूत द्वारा उत्तर और प्रत्युत्तर भी दिया है। इसमें हम्मीर के वास्तविक चरित की अच्छी झलक है। उलुगखाँ और अलाउद्दीन के दुर्ग को हस्तगत करने के प्रयत्नों का भी इसमें विशद वर्णन है। जौहर का और हम्मीर की वीर मृत्यु का भी इसामी ने समुचित रूप में उल्लेख किया है। फरिश्ता के वर्णन में भी कुछ ऐसी बातें हैं जो अन्य मुसल्मानी तवारीखों में नहीं हैं।

शिलालेख

हम्मीर के दो तिथियुक्त शिलालेख मिले हैं, एक सम्वत् १३४५ का और दूसरा संवत् १३४९ का। पहले में रणथम्भोर शाखा के तीन राजाओं के नाम हैं, वाग्भट, जैत्रसिंह और हम्मीर। जैत्रसिंह ने मण्डप के राजा जयसिंह को त्रस्त किया, कूर्मराज और कर्करालगिरि के राजा को मारा। झम्पाइघाटे में उसने मालवे के राजा के सैकड़ों वीर योद्धाओं को

पराजित किया। और रणथम्भोर में कैद में डाला। उसका पुत्र हम्मीर था। हम्मीर ने अर्जुन को हराकर मालवे से उसकी यशः श्री छीन ली। उसका मन्त्रिमुख्य कटारिया जातीय कायस्थ नरपति था। प्रशस्ति लेखक हम्मीर का पौराणिक बीजादित्य था। दूसरे की तिथि माघ शुक्ला षष्ठी है।

बलवन का शिलालेख सन् १२८८ (सं॰ १३४५) की राजनीतिक और धार्मिक स्थिति को समझने के लिए विशेषरूप से उपयोगी है। उसके मूल पाठ का ऐतिहासिक भाग निम्नलिखित है :—

ॐ "शंवो लम्बोदरो देयादेककालं कलत्रयोः।
बुद्धिः सिद्धयोः स्तन-स्पर्श-हेलोरिव चतुर्भुजः ॥ १ ॥

दद्रु-श्लीपद-कुष्ठ-दुष्टवपुषामाधि विनिघ्नन्नृणां
कारुण्येन समीहितं वितनुतां देवः कपालीश्वरः।
वामे यस्य चकास्ति चर्मनटिनी पृष्ठे च मन्दाकिनी
निर्यत्-केतुमुखापगा-जलभृद्ं कुंडं प्रसिद्धं पुरः ॥ २ ॥

यदंतिके धाराकृतां पुलकोटि विमुक्तिदः।
श्मनादिपादपोयापि दृश्यते किल शाल्मलिः ॥ ३ ॥

चाहमान-नरेन्द्राणां वंशो विजयतामयम्।
उपायुज्यन यद्ंडः कलौ गोवृष रक्षने ॥ ४ ॥

कलिकाल केसरि-कुल-प्रसभद्-गोपक-रक्षणैदक्षाः।
अभवन्-विजित-विपक्षा पृथिवीराजादयो भूपाः ॥ ५ ॥
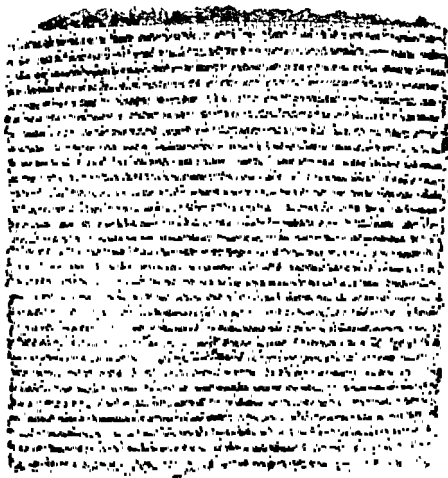
हम्मीर कालीन शिलालेख (सं० १३४५)

तद्वंशे राजानो मानव इव वैधवा बभूवांसः।
वाग्भट देव-प्रमुखाः जन-कुमुदोल्लासनैक-सद्भावाः ॥ ६ ॥

ततोभ्युदयमासाद्य जैत्रसिंह-रवि-र्न्नवः।
अपि मंडप-मध्यस्थं जयसिंहमतीतपत् ॥ ७ ॥

कूर्म्म-क्षितीश-कमठी कठिनोरुकंठ-
पीठी-विलुंठन-कठोर-कुठारधारः ॥
यः कर्क्करालगिरि पालक पाल पालि-
-खेलत्-कराल-करवाल-करो विरेजे ॥ ८ ॥

येन झंपाइथा-घट्टे मालवेश-भटाःशतं।
बद्ध्वा रणस्तमपुरे क्षिप्ता नीताश्च दासताम् ॥ ९ ॥

तस्मिन् सुवर्ण-धन-दान-निदान-पुण्य-
पण्यैः पुरंदर-पुरी-तिलकायमाने।
साम्राज्यमाज्य-परितोषितहव्यवाहो
हंमीर-भूपतिरविन्दत भूतधात्र्याः ॥

यः कोटिहोम-द्वितयं चकार
श्रेणीं गजानां पुनरानिनाय।
निर्ज्जित्य येनार्जुनमाजि मूर्ध्नि
श्रीम्मालवस्योज्जगृहे हठेन ॥ ११ ॥

रणस्तंमपुरे दुर्गे वेश्म पुष्पक संज्ञकं।
तिसृभिर्भूमिभिर्युक्तं यः कांचनमचीकरत् ॥ १२ ॥

इसके बाद में मथुरा-पुरी-विनिर्गत कटारिया कायस्थों के एक वंश का वर्णन है। उसकी वंशावली निम्नलिखित है :—
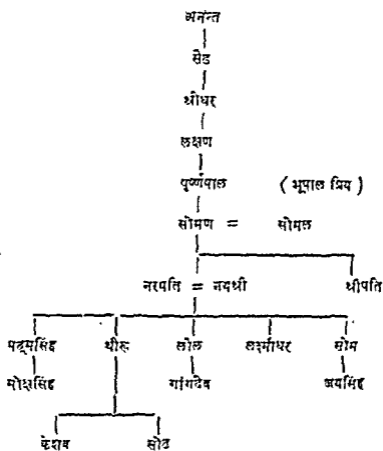
नरपति जैत्रसिंह और हम्मीर का मंत्रि-मुख्य था। उसका कुल धीर स्वामिनी और महादेव (सूर्य) का पूजक था। उसने रणथंभोर में चार मन्दिर और पिप्पलघाट में वापी बनाई। सिद्धपुरी, कुरुक्षेत्र और गोदावरी पर एक-एक सहस्र गाय ब्राह्मणों को दीं। नरपति की पत्नी ने एक ही दिन

स्नान करके ताम्र, कांस्य आदि वस्तुओं की दश तुला दीं। गुरु के सिंहराशिस्थ होने पर उसने सुवर्णशृङ्ग वाली सौ गौ ब्राह्मणों को दीं। उनका पुत्र सूर्यमन्त्र के सार का ज्ञाता था। लोल त्रिपुरा का पूजक था। लक्ष्मीधर विविधदेशीय लिपियों और अनेक विद्याओं को जानता था और राजा के यहाँ उसका मान था। सोम धनी था और विद्वान् भी।

श्रीहम्मीर के पौराणिक नृपामात्य वैजादित्य ने इस प्रशस्ति की रचना की।

अग्रिम पंक्तियों में इन्हीं सब इतिहास के साधनों के आधार पर हम हम्मीर के जीवन की इतिहासानुमत जीवनी प्रस्तुत कर रहे हैं। 'सत्य ही आनन्द है",—ऐसा पूर्ण विश्वास रखते हुए हम आशा रखते हैं कि हम्मीर-विषयक साहित्य के प्रेमी इस इतिवृत्त से भी कुछ आनन्द की प्राप्ति करेंगे।

हम्मीर

भारतीय संस्कृति और स्वतन्त्रता के लिए युद्ध करना सदा से चौहान जाति का कर्तव्य रहा है। पृथ्वीराज और हम्मीर के वंशजों में अब भी आदर्श विशेष की प्रतिष्ठा के लिए अपने प्राणों को उत्सर्ग करने वाले पूर्वजों के प्रति सम्मान है; अब भी अनेक चौहान हृदयों में यह प्रबल उत्कण्ठा है कि अपने महान् पूर्वजों की तरह वे भी अपनी मातृभूमि की सेवा करें। कहा जाता है कि म्लेच्छों से देश की रक्षा करने के लिए आदि चाहमान का जन्म हुआ था। यह पुरानी कथा है। किन्तु ऐतिहासिक काल में उनकी म्लेच्छ-विरोधी सेवाओं के अनेक प्रमाण हैं। आठवीं शताब्दी में जब अरब लोग सिन्ध को जीतकर चारों ओर अग्रसर होने लगे तो अनेक राजपूत

नदी पर लाखेरी के स्टेशन से ठीक दस मील दक्षिण की ओर है) जैत्रसिंह ने मालवे के अनेक सैनिकों को पकड़ा। सम्भव है कि मालवा वालों ने जैत्रसिंह के अनेक छोटे-मोटे आक्रमणों के उत्तर में कुछ सेना भेजी हो, या उस घाटी द्वारा रणथम्मोर के राज्य पर आक्रमण करने का प्रयत्न किया हो। उस समय जयसिंह तृतीय धारा का शासक था; किन्तु सम्भव है कि मण्डप को ही इसने अपना मुख्य आवास स्थान बनाया हो। डा०डी०सी० सरकार के मतानुसार इसका दूसरा नाम जयवर्मा भी था[1]। इसका एक दान पत्र वि० सं० १३१७, ज्ये० सुदी ११ का मंडपदुर्ग (मांडू) से दिया हुआ मिला है (एपिग्राफिया इण्डिका, ९, १२०-३)

सन् १२५९ में दिल्ली के सुल्तान नासिरुद्दीन ने रणथम्मोर को हस्तगत करने का प्रयत्न किया। किन्तु उसके सिर पर भी असफलता का ही सेहरा बंधा[2]।

जैत्रसिंह के तीन पुत्र थे, सुरत्राण, वीरम और हम्मीर। सुरत्राण इनमें ज्येष्ठ था, किन्तु हम्मीर सबसे योग्य। अतः जैत्रसिंह ने अपने जीवनकाल में ही वि० सं० १३३९ (सन् १२८३) माघ शु० पूर्णिमा, रविवार के दिन हम्मीर का राज्याभिषेक किया[3]। इसके बाद भी जैत्रसिंह सम्भवतः तीन वर्ष और जीवित रहा।

हम्मीर के राज्य के आरम्भिक काल में राजनैतिक स्थिति बहुत कुछ उसके अनुकूल थी। सन् १२८६ में बल्बन की मृत्यु के बाद लगभग चार

---

१. परमारवंश दर्पण, पृ० ९ टिप्पण १४

२. अर्ली चौहान डिनेस्टीज, पृ० १०५-१०६

३. हम्मीर महाकाव्य ७, ५३-५९

साल तक दिल्ली में कोई ऐसा शासक न था जो हम्मीर की बढ़ती शक्ति को रोकता। मालवे का पड़ोसी राज्य भी अवनति की ओर अग्रसर हो रहा था। शायद वह दो भागों में भी विभक्त हो चुका हो, जिसमें एक की राजधानी शायद मंडप में और दूसरे की अन्यत्र हो। वास्तव में देवपाल की मृत्यु के बाद ही स्थिति खराब हो चली थी। मालवे का अमात्य गोगदेव आधे मालवे का स्वामी बन बैठा था; अवशिष्ट भाग में भी कुछ शान्ति न थी। गुजरात में सारङ्गदेव का राज्य था। किन्तु गुजरात के भी समृद्धि के दिन बीत चुके थे। चित्तौड़ में महाराजकुल समरसिंह राज्य कर रहा था जो शक्तिहीन तो नहीं, किन्तु जिगीषु राजा न था।

अमीरखुसरो अपने ग्रन्थ मिफ़्ताहुलफुतूह में, जिसकी रचना सन् १२९१ में हुई थी, हम्मीर के एक साहनी का जिक्र किया है जिसने मालवा और गुजरात तक धावे किए थे[१]। इससे स्पष्ट है कि हम्मीर की दिग्विजय सन् १२९१ से पूर्व हो चुकी थी, और ऐसा ही अनुमान हम हम्मीर के वि० सं० १३४५ (सन् १२८८) से शिलालेख से भी कर सकते हैं।

हम्मीर विजय महाकाव्य में इस दिग्विजय का वर्णन निम्नलिखित है[२] :-

"कोई कहते थे कि इसकी सेना में हाथी अधिक हैं, कोई घोड़े, कोई इसके पैदलों के और कोई उसके रथों के प्राचुर्य की बातें करता था। क्रम से पृथ्वी को पार करता हुआ वह भीमरसपुर पहुंचा। वहाँ शत्रुत्व धारण करने वाले अर्जुनराजा को अपनी तलवार से कूटकर उसने अपना आज्ञाकारी

१, ऊपर उद्धरण देखें।

२. हम्मीर महाकाव्य, ९, १४-४८, प्रशंसात्मक विशेषण और इतिहास की दृष्टि से असार्थक वर्णनों का अनुवाद हमने नहीं किया है।

बनाया। फिर मण्डलकृत दुर्ग से कर लेकर वह शीघ्र ही धारा पहुँचा, वहाँ परमार वंश में प्रौढ़ राजा भोज को, जो दूसरे भोज की तरह था, उसने म्लान किया। तदनन्तर उसने अवंति (उज्जयिनी) पर आक्रमण किया और शिप्रा में स्नान कर महाकाल का अर्चन किया। वहाँ से लौटकर उसने चित्रकूट को कूटा और आबू पहुँचकर वहाँ अपने तम्बू लगाए। "पहाड़ पर चढ़कर विमलवसही में उसने श्रीऋषभदेव को प्रणाम किया। वस्तुपाल के मन्दिर को देखकर वह विस्मित हुआ। अर्बुदा को उसने भक्ति समेत प्रणाम किया और वशिष्ठाश्रम में आराम कर और मन्दाकिनी में स्नानकर उसने भगवान् अचलेश्वर का पूजन किया। वहाँ अर्बुदेश्वर ने उसे सर्वस्व अर्पण किया। वहाँ से उतर कर वर्धनपुर को निर्धन और चङ्गा को रत्नरहित कर वह अजमेर होता हुआ पुष्कर पहुँचा और स्नान किया। उसके बाद शाकम्भरी, महाराष्ट्र और खंडिल्ल को उसने निष्प्रभ किया। ककराला में त्रिभुवनाद्रि के स्वामी ने उसे मान दिया। इस प्रकार सर्वत्र विजय करता हुआ वह रणथंभोर लौटा[१]।"

इन सब विजित स्थानों की पहचान कुछ कठिन है। पहला स्थान भीमरस है जिसका स्वामी अर्जुन था। यह अर्जुन सम्भवतः मालवे का राजा अर्जुन होगा, जिसे हराकर हम्मीर ने बलात् उसके हाथी छीन लिए थे[२]। इस विजय के फलस्वरूप चम्बल से लगता हुआ मालव राज्य का कुछ भाग भी हम्मीर के हाथ लगा होगा। दूसरा विजित स्थान मण्डलकृत है। यह सम्भवतः माण्डू है। हम्मीर के पिता ने उसके राजा जयसिंह को तंग किया था। हम्मीर ने उस नगर से कर वसूल किया। हम्मीर महाकाव्य में इसके

१. सर्ग ९ श्लोक १३—५१।

आगे बढ़कर हम्मीर द्वारा धाराधीश भोज द्वितीय की पराजय का वर्णन है। किन्तु सं० १३४५ के हम्मीर के शिलालेख में इस विजय का उल्लेख नहीं है। इसलिये या तो यह विजय वि० सं० १३४५ के बाद हुई होगी। या नयचन्द्र के वर्णन में कुछ अत्युक्ति है। धारा के बाद हम्मीर का प्रयाण उत्तर की ओर है। उसने उज्जयिनी पर आक्रमण किया। वहाँ से मुड़कर उसने चित्रकूट पर छापा मारा। नयचन्द्र का यह कथन सत्य माना जाय तो महारावल समरसिंह को भी हम्मीर के हाथ पराजित होना पड़ा था। चित्तोड़ से हम्मीर आबू पहुंचा। उस समय अर्बुदेश्वर सम्भवतः प्रतापसिंह परमार रहा हो। वर्धनपुर बदनौर है और चङ्गा इसी नाम का मेरों का दुर्ग। उसके बाद पुष्कर में स्नान कर साँभर पहुँचना कठिन न था। महाराष्ट्र सम्भवतः मरोठ है, जो साँभर से कुछ अधिक दूरी पर नहीं है और खंडिल्ल खंडेला है।

नयचन्द्र ने इस सब विजयों को एक साथ रख दिया है। किन्तु अधिक सम्भव यह प्रतीत होता है कि संवत् १३४५ (सन् १२८८) से पूर्व दो दिग्विजय हो चुकी थीं। इस संवत् के ऊपर उद्धृत शिलालेख के ग्यारहवें श्लोक में हमीर के दो कोटि होमों का और बारहवें श्लोक में काञ्चन विनिर्मित तीन भूमि से समायुक्त पुष्पक संज्ञक नाम के प्रासाद का वर्णन है। इनमें से एक एक कोटि होम एक एक दिग्जय के बाद हुआ होगा। शिलालेख से यह भी निश्चित है कि उस समय तक यह प्रयाण मुख्यतः मालवे के विरुद्ध ही हुए थे। मरोठ, खण्डिल्ल आदि पर प्रयाण सम्भवतः सन् १२८८ ई० के बाद की घटनाएँ हैं। किन्तु इन दिग्जयों के होने की सम्भावना अवश्य है क्योंकि सन् १२९१ में निमिन अपने ग्रंथ 'मिफ्ताहुछफुतूह' में

अमीर खुसरो ने हम्मीर के गुजरात तक के आक्रमणों का उल्लेख किया है।

इन प्रयाणों से हम्मीर को प्रचुर धन की प्राप्ति हुई। उसकी कीर्ति भी दिग्दिगन्त में फैली। ब्राह्मणों और गरीबों को भी धन की प्राप्ति हुई। किन्तु अन्ततः उसे इस नीति से विशेष लाभ हुआ या नहीं—यह संदिग्ध है। ये प्रयाण यदि किसी मुसल्मानी प्रान्त या राज्य पर होते तो देश को अधिक लाभ होता।

किन्तु हम्मीर मुसल्मानों पर आक्रमण करता या न करता उनसे उनका संघर्ष अवश्यम्भावी था। सन् १२९० ई० में गुलाम वंश का अन्त हुआ और जलालुद्दीन खल्जी दिल्ली का सुल्तान बना। विशेष युद्ध प्रिय न होने पर भी उसने रणथम्भोर पर आक्रमण करना आवश्यक समझा। पृथ्वीराज के किसी वंशज की बढ़ती हुई शक्ति दिल्ली के मुसल्मानी साम्राज्य के लिए असह्य थी।

हम ऊपर इस आक्रमण के तत्सामयिक वर्णन को उद्धृत कर चुके हैं। उस आक्रमण की मुख्य घटनाएँ ये थीं :—

(१) रणथम्भोर की पहाड़ियों के निकट पहुँच कर तुर्कों ने गाँवों को नष्ट करना शुरू कर दिया। हिन्दुओं के ५०० सवारों से उनकी मुठभेड़ हो गई। इसमें इनकी विजय हुई। (*मिफ्ताहुल फुतूह*)

(२) दूसरे दिन मुसल्मानी सेना झायन की कठिन घाटी में प्रविष्ट हो गई। हम्मीर के साहनी ने, जिसने मालवे और गुजरात तक धावे मारे थे, इन पर आक्रमण किया किन्तु वह पराजित हुआ। झायन मुसल्मान के हाथ आया (वही)

(३) तीसरे दिन जलालुद्दीन झायन के राजमहल में उतरा और चौथे दिन उसने झायन के मन्दिरों को नष्ट भ्रष्ट किया। मन्दिर, महल, किला सब उसने तुड़वा डाले (वही)

(४) यहां से बढ़ कर रणथम्भोर को घेर लिया गया और अनेक यंत्र लगाए गए। अन्दर से निकल कर हम्मीर ने सेना पर ऐसा आक्रमण किया कि लोगों के हाथ पैर फूल गए। केवल तुगलक खान ने कुछ स्थिति समाली। किन्तु जलालुद्दीन ने रणथम्भोर लेने का विचार सर्वथा छोड़ दिया और झायन से "दूसरे दिन कूच करता हुआ तथा विना किसी हानि के अपनी राजधानी पहुँच गया" (तुगलकनामा और तारीखे फिरोजशाही)

हम्मीर महाकाव्य में जलालुद्दीन के समय के इस संघर्ष का वर्णन नहीं है। उसके अनुसार दिग्विजय के बाद पुरोहित विश्वरूप के कहने पर हम्मीर ने काशीवासी एवं अन्य विद्वान् ब्राह्मणों की सहायता से कोटियज्ञ आरम्भ किया। उसने मारि का निवारण और सातों व्यसनों का वर्जन किया। कारागारों से उसने कैदी छोड़े और अनेक प्रकार के दान दिए। फिर पुरोहित के कहने पर उसने एक महीने का व्रत ग्रहण किया। इसी बीच में अलाउद्दीन ने इसे अच्छा अवसर समझ कर उल्लूखान (उलुगखां) को रणथम्भोर के विरुद्ध भेजा। (घाटी के) अन्दर प्रवेश करने में असमर्थ होकर वह वर्णासा (बनास) नदी के किनारे ठहरा। उसने गांव जलाए, फसल नष्ट की। हम्मीर उस समय मौनव्रत में था, इसलिए धर्मसिंह के कहने से सेनानी भीमसिंह ने मुस्लिम फौज पर आक्रमण किया, और उसे हराकर वापस लौटने लगा। उसके बाकी साथी विजय की खुशी में

आगे बढ़ गये। भीमसिंह ने जब घाटी में प्रवेश किया तो मुसल्मानों से छीने हुए वाद्य उसने बजा डाले। इसे अपनी जय का संकेत समझ कर चारों ओर से मुसल्मानी सैनिक आ जुटे, और अपने परिमित साथियों के साथ मुसल्मानों के विरुद्ध युद्ध करता हुआ भीमसिंह मारा गया। उसके बाद "शकेन्द्र" भी शीघ्रता से अपने शिविर में पहुँचा और क्षत्रियों से डरता हुआ अपने नगर को लौट गया। धर्मसिंह को अंधेपन और कायरता के लिए निन्दित करते हुए, हम्मीर ने मौनव्रत के अन्त में धर्मसिंह को वास्तव में शरीर से अन्धा और पुंस्त्वहीन कर दिया और उसके स्थान पर खड्गग्राही (खांडाधर) भोज को नियुक्त किया[1]।"

हम्मीर महाकाव्य की इस कथा का मुसल्मानी तवारीखों में अलाउद्दीन के रणथम्भोर पर आक्रमणों के वर्णन से तुलना करने पर प्रतीत होता है कि भीमसिंह की मृत्यु वास्तव में अलाउद्दीन के विरुद्ध नहीं, अपितु जलालुद्दीन के विरुद्ध लड़कर हुई थी। यही 'सेनानी भीमसिंह' मिफ्ताहुल फुतूह का 'साहणी' था, जो 'हिन्दू नहीं अपितु लोहे का पहाड़ था' और जिसके अधीन ४०,००० सैनिकों ने मालवे और गुजरात तक धावे मारे थे, झायन की कठिन घाटी में इसी का मुसल्मानों से युद्ध हुआ था। तुग़लक नामे और फिरोजशाही के वर्णनों से यह भी सिद्ध है कि अन्ततः इस आक्रमण में जलालुद्दीन को कुछ सफलता ही न मिली; उसे वहां से सुरक्षित बचकर निकलने में भी आशंका होने लगी। और जिस प्रताप के बारे में बरनी कह सका कि झायन से दूसरे दिन कूच करता हुआ तथा बिना किसी हानि के सुल्तान अपनी राजधानी पहुँच गया, उसीके बारे में नयचन्द्र ने

---

१ सर्ग ९, श्लोक ७६-१८८.

यह कहने में कुछ अत्युक्ति न की है कि 'शकेन्द्र शीघ्रता से अपने शिविर में पहुँचा और क्षत्रियों से डरता हुआ अपनी पुरी को लौट गया।"

अलाउद्दीन के बादशाह होने पर स्थिति फिर बदली। दक्षिण की लूट का अपार धन उसके पास था; उसके पास न सेनाकी कमी थी और न सेनापतियों की। उसकी इच्छा भी यही थी कि समस्त भारत को जीत लिया जाय। इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए उसने सन् १२९८ में गुजरात पर आक्रमण कर सोमनाथ के मन्दिर को नष्ट कर दिया। समस्त हिन्दू संसार क्षुब्ध हुआ, किन्तु कोई इसका प्रतीकार न कर सका। सेना अपनी लूट लेकर दिल्ली लौटती समय थिराणा गांव के निकट पहुँची, तो उसमें कुछ हलचल मची। मुसल्मानी नियम के अनुसार लूट का कुछ भाग लूटनेवाले को मिलता है और कुछ राज्य को; किन्तु इस अभियान में बहुत सा लूट का सामान, विशेष कर मोती जवाहरात आदि वस्तुएं सैनिकों ने छिपा ली थीं। सुल्तानी सेना के सेनापति उलुगखां ने सब को लूट का माल वापस करने करने के लिए जब विवश किया तो कमीज़ो मुहम्मद शाह, कामरू, यलचक तथा बर्क, जो पहले मुग़ल थे, उलुगखां को मारने के लिए तैयार हो गए। रात को वे उलुगखां के तम्बू में जा घुसे, किन्तु भाग्यवशात् उलुगखां अपने सोने के स्थान पर न था। वह चुपके से नुसरतखां के पास पहुँचा। नुसरतखां से पराजित होके विद्रोही वहां से भागे[१]। एसामी के कथनानुसार यलचक और बर्क गुजरात के राय कर्ण बघेला के पास भागे और मुहम्मदशाह तथा कामरू ने रणथम्भोर में शरण ग्रहण की।

---

१. ऊपर दिए फ़ुतूहुस्सलातीन और तारीखे फ़िरोज़शाही के अवतरण देखें।

किन्तु नयचन्द्र के कथनानुसार ये चारों ही रणथम्भोर में थे, और उसने इनके नाम महिमासाहि, गर्भरूक, तिचर और वैचर के रूप में दिए। बहुत सम्भव है कि राय कर्ण की शरण में अपने को सुरक्षित न पाकर ये कुछ समय बाद रणथम्भोर आ गए हों।

मुहम्मदशाह की रणथम्भोर पहुँच कर शरणदान की प्रार्थना सभी हम्मीर विषयक काव्यों में वर्तमान है। हम्मीर ने उसे शरण ही नहीं दी, उसे अपने भाई की तरह रखा। चाहे कार्य नीति-सम्मत रहा हो या असम्मत हिन्दू संसार ने हम्मीर के इस आदर्श त्याग को नहीं भुलाया है। वह उसी के कारण अमर हैं। राजनैतिक दृष्टि से भी कार्य कुछ बुरा न था। अला-उद्दीन से युद्ध तो अवश्यम्भावी था। आज एक राज्य की तो कल दूसरे की बारी थी। ऐसी अवस्था में शत्रु के शत्रुओं से मैत्री नीतिपूर्ण थी। अनीतिपूर्ण तो शायद इससे पूर्व के हम्मीर के कार्य थे जिनकी वजह से सभी आसपास के राजा उससे सशङ्कित हो उठे होंगे। अपने लगभग अठारह वर्ष के राज्य में उसने राज्य की सीमा बढ़ाई, अनेक कोटि यज्ञ किए। और ब्राह्मणों को बहुत दान दिया। किन्तु उसकी सामान्य प्रजा को उसकी नीति से शायद ही कुछ विशेष लाभ हुआ हो। उसकी सैन्य-संख्या बहुत बड़ी थी, और राज्य के निजी साधन बहुत कम। जबतक धन दूसरे राज्यों की लूट से आता रहा, सैन्यभार कुछ विशेष दुःखदायी न था। किन्तु जब लुटेरों की संख्या बढ़ गई, मुसल्मानी आक्रमणों की बाढ़ा से हम्मीर के लिए अपने ही राज्य में रहना आवश्यक हो गया और कोटि मखादि के व्यय से कोश बहुत कुछ रिक्त हो गया, इसके सिवाय उपाय ही क्या था कि वह प्रजा पर नित्य नवीन कर लगाए। दिल्ली में अलाउद्दीन को भी आर्थिक

आर्थिक समस्याओं का सामना करना पड़ा था, किन्तु उसमें स्वयं वह बौद्धिक शक्ति थी जो सैनिक ही नहीं, आर्थिक समस्याओं को सुलझा सके। हम्मीर को आर्थिक समस्याएं सुलझाने के लिए मंत्रियों का सहारा लेना पड़ा।

उसके मन्त्रियों में धर्मसिंह अर्थ चिन्तन में कुशल था। किन्तु उसे हटाकर हम्मीर ने यह कार्य खाँडाधर भोज को दिया था, और भोज तो कोरा खांडाधर ही निकला। न वह पर्याप्त धन ही एकत्रित कर सका, और न वह कुछ व्ययादि ही का हिसाब किताब रख सका। अतः विवश होकर हम्मीर ने अर्थचिन्तन का कार्य धर्मसिंह को सौंपा। खांडाधर भोजदेव से भी उसने इतना दुर्व्यवहार किया कि वह अपने भाई पृथ्वीसिंह समेत अलाउद्दीन की सेवा में पहुँच गया।[१] हम्मीर ने उसके स्थान पर रतिपाल को दण्डनायक का पद दिया।

नयचन्द्र के कथनानुसार धर्मसिंह ने प्रतिशोध की इच्छा से प्रजा को पीड़ित किया था, नए नए उपाय निकाले थे जिनसे कोश में धन आ सके। किन्तु इस नीति के लिए स्वयं हम्मीर भी उत्तरदायी था ही; उसे धनकी अत्यधिक आवश्यकता न होती तो धर्मसिंह को प्रजा को करोत्पीडित करने का अवसर ही कहाँ से मिलता? भोजदेव को भी रणथम्भोर से निकालना भूल थी। भीमसिंह की मृत्यु के बाद रणथंभोर के विशिष्ट सेनापतियों में से भोज भी एक था; और जिस व्यक्ति

१—खांडाधर भोजदेव के लिए मरु भारती, ८, १, पृ० ११३ पर हमारा लेख पढ़ें। कविमल्ल के कवित्त ९ और १० (हम्मीरायण, पृष्ठ ४७), और सेन का कवित्त १५ भी भोज और पृथ्वीराज के लिए द्रष्टव्य हैं। हम्मीरहाकाव्य में सब प्रसङ्ग देखें, सर्ग ८, श्लोक १६७-१८८

को हम्मीर ने यह पद दिया, वह तो अन्ततः कृतघ्न सिद्ध हुआ। हम इसे हम्मीर की भूल कहें; या दैव ही उसके प्रतिकूल था ?

सन् १२९८ में हम्मीर ने मुहम्मदशाह को शरण दी थी। उसके बाद लगभग दो वर्ष तक अलाउद्दीन ने कुछ न कहा। उत्तर-पश्चिम से मुगलों के भयंकर आक्रमणों के कारण उसीकी जानको आ बनी थी। अब इन से कुछ छुट्टी मिली तो उसने अपनी भारतीय नीति के सूत्रों को फिर सम्भाला। जिन राज्यों के रहते दिल्ली का सार्वभौमत्व स्थापित नहीं हो सकता था उनमें से रणथंभोर एक था। मुहम्मदशाह आदि को शरण देकर हम्मीर ने अब एक और अक्षम्य अपराध किया था। उसका राज्य दिल्ली के बहुत निकट भी था।

सुल्तान की पहली चढ़ाई मानों हम्मीर के सत्त्व को जाँचने के लिए हुई। एक बड़ी सेना हिन्दुवाट आ पहुंची। किन्तु इससे पूर्व कि वह आगे बढ़े हम्मीर के सेनापतियों ने उसे आ घेरा। पूर्व से भीरम, पश्चिम से मुहम्मदशाह, आग्नेय से रतिपाल, वायव्य से तिचर (दलपक), ईशान से रणमल्ल, नैर्ऋत से वैचर (वर्क), जाजदेव ने दक्षिण और उत्तर से गर्भरूक (कामरू) ने मुसलमानी फौज पर आक्रमण किया। मुसलमान बुरी तरह से हारे। अनेक मुसलमान स्त्रियाँ रतिपाल के हाथ आईं। रतिपाल ने राजा की ख्याति के लिए उनसे गांव-गांव में छाछ बिकवाई हम्मीर रतिपाल से इतना प्रसन्न हुआ कि उसने 'यह मेरा मस्त हाथी है कहकर उसके पैरों में सोना की सांकली डाली और दूसरों को भी वस्त्रादि देकर सम्मानित किया।'[१] उस समय किसे ध्यान था कि रणमल्ल, रतिपाल आदि स्वामीद्रोही सिद्ध होंगे !

१—हम्मीरमहाकाव्य, १०, ३१-६३।

इसी विजय के बाद मुहम्मदशाह आदि ने जगरापर आक्रमण किया जो उस समय भोज की जागीर में थी। भोज वहाँ न था। किन्तु उन्होंने जगरा को लूटा, और भोज के भाई पीथसिंह को सकुटुम्ब पकड़ कर रणथंभोर ले गये। भोज रोना-धोता दिल्ली के दरबार में पहुंचा।[1]

अब अलाउद्दीन के लिए स्थिति असह्य हो चली थी। उसने बयाना के अक्ता के स्वामी उलुगखाँ को रणथम्भोर जीतने की आज्ञा दी और कड़े के मुक्ता नुसरतखाँ को भी आज्ञा हुई कि वह कड़े की समस्त सेना तथा हिन्दुस्तान की सब फ़ौजों को लेकर उलुगखाँ की सहायता करे। जितनी बड़ी सेना का प्रयोग अलाउद्दीन कर रहा था उससे हम्मीर की शक्ति का कुछ अनुमान लगाया जा सकता है। कोई अन्य राजा होता तो अधीनता स्वीकार कर लेता किन्तु हम्मीर तो मानों भिन्न भिन्न सामग्री से ही बना था।

इस बार छल से या बल से मुसल्मानी सेना ने झाइन की घाटी पार कर ली और झाइन पर भी अधिकार जमा लिया। नयचन्द्र के कथनानुसार सन्धि की बातचीत के बहाने उलूगखाँ और नुसरत ऐसा कर सके;[2] किन्तु तथ्य शायद यह हो कि मुसल्मानी सेना की संख्या इस बार इतनी अधिक थी कि राजपूतों ने उसका सामना करना उचित न समझा। ऐसी स्थिति में अपने सब साधनों को समूहित कर गढ़रोध सहना सम्भवतः अधिक हितकर था। साथ ही यह भी तथ्य है कि उलुग

१—वही, पृ० १०, ६४-८८

२—वही, ११, १९-२४,

नुसरतखान की मृत्यु से अलाउद्दीन को निश्चय हो गया कि उसका स्वयं रणथम्भोर पहुँचना अत्यन्त आवश्यक था। एसामी ने नुसरतखाँ की मृत्यु का बिना वर्णन किए ही लिखा है कि उलुगखाँ ने सुल्तान से सहायता की प्रार्थना की।[1] बरनीके कथनानुसार ज्योंही अलाउद्दीन को नुसरतखाँ की मृत्यु का समाचार मिला, वह दिल्ली से रणथम्भोर के लिए रवाना हो गया। यही बात हमें हम्मीर महाकाव्य से भी ज्ञात है।

अलाउद्दीन की यात्रा निरापद सिद्ध न हुई। तिलपत के निकट उसके भतीजे अकतखाँ ने उसे कत्ल कर 'राज्य प्राप्त' करने का प्रयत्न किया, किन्तु अलाउद्दीन के सौभाग्य और अकतखाँ की मूर्खता से यह प्रयत्न सफल न हुआ। जब सुल्तान घेरा डाले पड़ा था अवध और बदायूं में उसके भानजों ने विद्रोह किये और दिल्ली में मौला हाजी ने। किन्तु अलाउद्दीन रणथम्भोर के सामने से न हटा।[2] यह दो हठीलों का युद्ध था। अन्तर केवल इतना ही था कि एक सीधा वीरधर्मा राजपूत था, और दूसरा भारत का सब से कुटिल शासक जिसने अपने चचा तक को राज्य के लिए मार डाला, और जो राज्यवृद्धि के लिए कुटिल से कुटिल उपायों का अवलम्बन करने के लिए उद्यत था।

हम्मीर महाकाव्य में लिखा है कि जब अलाउद्दीन रणथम्भोर पहुँचा तो हम्मीर ने उसका अच्छा स्वागत किया। दुर्ग के ऊपर प्रतिगृह पर धूर्ने बंधवा कर उसने यह घोषित किया कि सुल्तान के आने से

१—देखें फुतूहुस्सलातीन का अवतरण।

२—तारीखे फिरोजशाही का अवतरण देखें।

उसके कार्यभार में उतनी ही वृद्धि हुई थी जितनी अनेक वस्तुओं से भरे शकट में कुछ शूर्प रखने से।[1] किन्तु और कुछ हुआ या न हुआ युद्ध में एक नवीन तीव्रता आ गई। रात दिन युद्ध होने लगा। प्रत्येक दिशा में चलते फिरते ऊँचे-ऊँचे मचान (गरगच) तैयार किए गए। शाही सेना जो कोई युक्ति करती राय उसकी काट कर देता।[2] पहाड़ के निकट सुरंग लगाई, और खाई को पूलियों और लकड़ी के टुकड़ों से भर दिया। जब ये दोनों साधन तैयार हो गए तो अलाउद्दीन ने हमले की आज्ञा दी। किन्तु चौहानों ने खाई की लकड़ियां अग्नि गोलों से जला डाली और लाक्षायुक्त तेल सुरंग में फेंका जिससे सुरंग में घुसे सैनिक भुन गए और वह सुरंग उन्हीं के शरीरों से भर गई।[3] इस प्रकार एक वर्ष बीत गया और दुर्ग को कोई हानि न पहुँची।[4] अमीर खुसरो ने यही बात अपनी काव्यमयी शैली में कही है, 'हिन्दुओं ने किले की दसों अट्टारियों में आग लगा दी, किन्तु अभी तक मुसल्मानों

१—सर्ग १२, १-४।

२—देखें फुतूहस्सलातीन का अवतरण और हम्मीरमहाकाव्य; सर्ग १३: श्लोक ४८

३—हम्मीरमहाकाव्य, १३, ४७।

४—देखें फुतूहुस्सलातीन का अवतरण।

इसी के आस पास हम्मीर काव्यों में नर्तिका धारादेवी के मरण की कथा है। इसके लिए पाठक वर्ग हम्मीर काव्य और हम्मीरायण का तुलनात्मक विवेचन देखें। इतिहास की दृष्टि से इस घटना का—चाहे यह सत्य हो या असत्य—विशेष महत्त्व नहीं है।

के पास इस अग्नि को बुझाने के लिए कोई सामग्री एकत्रित न हुई थी (खजाइनुलफ़ुतूह)"।

अब अलाउद्दीन को एक नई युक्ति सूझी। उसने समस्त सैनिकों को आदेश दिया कि वे चमड़े और कपड़े के थैले बनाकर उनमें मिट्टी भर दें और उन थैलों द्वारा खाई को पाट दें।[1] हर एक ने अपना थैला भरा और खाई में फेंका जिसका नाम रिण था। इस तरह खाई को पाट कर अलाउद्दीन ने उस पर पाशेब और गरगच तैयार करवाए। किले पर आक्रमण के साधन अन्ततः तैयार हो गए।[2] इसी बात को हम्मीरायण ने मनोरञ्जक रूप में कहा है:—

"पहिलउ रिण पूरउ लाकडे, देई आग बाल्यउ तिय भटे।
कटक महुनइ हुयउ फुरमाण, थेलू नखाउ सिपि ठाणि ॥ १९८ ॥
सुयण तणी थांभइ पोटली, मीर मलिक थेलू आणइ भरी।
न करइ कोईं झूझ गड़थाल, थेलू आणइ सहि पोटली ॥ १९९ ॥
छडइ मासि सपूरण भरयउ, ते देखि लोक मनि डरयउ।
कोसीसइ जाइ पहुता हाथ, तुरका तणो सपीठइ पाथ ॥ २०० ॥
राय हम्मीर चिंतातुर हूयउ, रिण पूरयउ दुर्ग हिव गयउ ॥ २०१ ॥

पहले रिण को उन्होंने लकड़ियों से भरा, किन्तु भटों ने उन्हें आग से जला डाला। तब सब सेना को आज्ञा हुई कि वे उस स्थान पर बालू डालें। अपनी सुथनों की पोटलियाँ बनाकर मीर और मलिक उन्हें भर-भर कर लाने लगे। गड़थालों से सबने युद्ध करना छोड़ दिया। जब सिर्फ

१. फुतूहुस्सलातीन का अवतरण देखें।

२. तारीखेफरिश्ता का अवतरण देखें।

पोटलियाँ में बालू लाये। छठे महीने वह सब भर गया। तब यह देखकर सब लोग मन में डरे। कंगूरों तक अब तुर्कों के हाथ पहुँचने लगे। तुर्कों की इच्छा अब पूरी होगी। राय हम्मीर को अब यह चिन्ता हुई। रिण भर गई है। अब दुर्ग हाथ से गया।

हम्मीरायण ने इस विपद् से बचने का एक अधिदैविक कारण दिया है। "गढ़के देवता ने परमार्थ जानकर चाबी लाकर हम्मीर को दी जब राय ने छोटा फाटक खोला तो देव-माया से उसी समय पानी बहा। पानी से बालू बह गया, और वह झोल फिर खाली हो गया (२०२)। किन्तु वास्तविक प्रतिकार तो दुर्गस्थ वीरों का साहस था। बरनी ने लिखा है कि जब खाई को भरकर पाशेब और गरगच लगाए गए तो किले वालों ने मगरबी पत्थरों से पाशेबों को हानि पहुँचानी प्रारम्भ कर दी। वे किले के ऊपर से आग फेंकते थे और लोग दोनों ओर से मारे जाते थे।[१] खज़ाइनुल फुतूह ने भी लिखा है कि रजब से ज़ीकाद (मार्च से जुलाई) तक मुसलमानी सेना किले को घेरे रही। "किले से बाणों की वर्षा होने के कारण पक्षी भी न उड़ सकते थे। इस कारण शाही बाज भी वहाँ तक न पहुँच सकते थे।"[२]

इसके बाद दुर्ग के जाने की कथा हमें विभिन्न रूपों में प्राप्त है। एसामी के कथनानुसार किले पर आक्रमण का मार्ग तैयार होने पर भी दो तीन सप्ताह तक घोर युद्ध होता रहा। उसके बाद हम्मीर ने जौहर किया और किले से मुहम्मदशाह एवं कामरू के साथ निकल कर युद्ध करना हुआ

---

१. तारीखेफिरोजशाही का अवतरण देखें।

२. खज़ाइनुलफुतूह का अवतरण देखें।

मारा गया।[1] खजाइनुल फुतूह ने किले में दुर्भिक्ष को इसका कारण बताया है। "किले में अकाल पड़ गया। एक दाना चावल दो दाना सोना देकर भी नहीं प्राप्त हो सकता था," और चापलूसी की तरंग में लिख मारा है कि जब जौहर कर हम्मीर अपने दो एक साथियों के साथ पाशेब तक पहुँचा तो उसे भगा दिया गया"।[2] दुर्ग का पतन ३ जीकाद ७०० हिज्री (१० जुलाई, १३०१) के दिन हुआ। बर्नी के अनुसार 'सुल्तान अलाउद्दीन ने हाजी मौला के विद्रोह के उपरान्त बड़े परिश्रम तथा रक्तपात के पश्चात रणथंभोर के किले पर अपना अधिकार जमा लिया। राय हमीरदेव तथा उन मुसल्मानों को जो कि गुजरात के विद्रोह के उपरान्त भाग कर उसकी शरण में पहुँच गए थे हत्या करा दी।"[3] फरिश्ता के कथनानुसार जब रेत में फेंकी हुई बोरियों की ऊंचाई जब गढ़ की ऊँचाई तक पहुँच गई तो घिरे हुए आदमियों को हराकर मुसलमानों ने दुर्ग ले लिया। हम्मीरदेव अपने आत्मिआइयों के साथ मारा गया।[4]

हिन्दू ऐतिह्य साधनों में से हम्मीरमहाकाव्य के अनुसार वास्तव में दुर्ग में दुर्भिक्ष न था, किन्तु कोठारी जाहड़ ने इस इच्छा से कि सन्धि हो जाय, शठ मूढ़ यह सूचना दी कि अन्न नहीं है। उधर रतिपाल अलाउद्दीन से जा मिला। शत्रु-शिविर से लौटने पर हम्मीर को और भड़काने के लिए उसने कहा "सुल्तान आपकी पुत्री को माँगता है और कहता है कि यदि

१. फुतूहुस्सलातीन का अवतरण देखें।

२. खजाइनुल फुतूह का अवतरण देखें।

३. तारीखेफिरोजशाही का अवतरण देखें।

४. तारीखेफरिश्ता का अवतरण देखें।

उस मूर्ख ने पुत्री न दी तो मैं उसकी पत्नियों तक को छीन लूंगा।" रानियों के कहने से देवलदेवी आत्मसमर्पण के लिए तैयार भी हुई, किन्तु हम्मीर के लिए यह अपमान असह्य और अस्वीकरणीय था। दुर्ग का शासक बनने का इच्छुक रतिपाल तो चाहता ही यह था। उसने रणमल्ल को भी राजा के विरुद्ध कर दिया। दोनों गढ़ से उतरकर शत्रु से जा मिले। इस सार्वत्रिक कृतघ्नता को देखकर हम्मीर ने मुहम्मदशाह को कहीं सुरक्षित स्थान पर जाने के लिए कहा। मुहम्मदशाह ने किस प्रकार अपने कुटुम्ब का अन्त कर यह बीभत्स दृश्य हम्मीर को दिखाया इसका उल्लेख हम ऊपर कर चुके हैं (देखें हम्मीर महाकाव्य का सार)। हम्मीर ने अब जौहर किया। उसकी पुत्री और रानियां जौहर की चिता में जल मरीं। उसने तमाम धन पद्मसर में फिंकवा दिया। जाजा ने हाथी मार डाले। उसके बाद जाजा को अभिषिक्त कर हम्मीर अपने साथियों सहित बाहर निकला। भयकर युद्ध करने के बाद उसने स्वयं अपना[1] गला काट डाला।

सुर्जन चरित में जौहर और हम्मीर के अन्तिम युद्ध का वर्णन है। साथ ही उसमें यह स्पष्ट संकेत है कि जनता दीर्घकालीन गढ़रोध से ऊब चली थी और बहुत से लोग शत्रु से जा मिले थे।[2] पुरुष परीक्षा में भी रायमल्ल और रामपाल (रतिपाल और रणमल्ल) का विद्रोह वर्णित है। साथ ही यह भी उसने लिखा है कि वे अदीनराज (अलाउद्दीन) से मिले और उससे कहा "अदीनराज, आपको कहीं न जाना चाहिये। दुर्ग में अकाल पड़ गया है। हम दोनों दुर्ग के मर्मज्ञ हैं। कल या परसों आपको

१. देखें हम्मीर महाकाव्य, सर्ग १३, ९९-२२५

२. ऊपर दिया सुर्जन चरित का सार देखें।

दुर्ग दिखवा देंगे।" इस पर हम्मीर ने जाजा और मुहम्मदशाह आदि को अन्यत्र किसी सुरक्षित स्थान में पहुँचाने का वचन दिया। किन्तु वे इसके लिए राजी न हुए।

"भटैरंगीकृतं युद्धं, स्त्रीभिरिष्टो हुताशनः।
राज्ञो हम्मीरदेवस्य परार्थं जीवमुज्झतः॥

"जब राजा हम्मीरदेव दूसरों के लिए प्राण देने के लिए उद्यत हुआ तो योद्धाओं ने युद्ध अङ्गीकृत किया, स्त्रियों ने अग्नि।" राजा युद्ध में लड़ता हुआ मारा गया।[१]

हम्मीरायण में रणमल्ल और रतिपाल के अलाउद्दीन से मिलने, महिमा शाह की कथा फैलाने, जौहर और हम्मीर के अन्तिम युद्ध आदि का वर्णन है।[२] मल्ल के चौदहवें पद्य में सम्भवतः अलाउद्दीन के सुरंग लगा कर दुर्ग का एक भाग तोड़ने का उल्लेख है। साथ ही इन कवितों में रणमल्ल के द्रोह, जाजा के अद्वितीय युद्ध और जौहर का भी निर्देश है।[३]

इन सब अवतरणों के तुलन से कुछ बातें स्पष्ट हैं।

१. घेरे से दुर्ग की स्थिति विषम हो चली थी, तो भी हम्मीर ने लगातार युद्ध किया और मुसलमानों को गरगचों तथा पाशेबों के प्रयोग से गढ़ न लेने दिया।

२. दुर्ग में दुर्भिक्ष की स्थिति वास्तव में उत्पन्न हो गई थी। उधर बरनी आदि के कथनानुसार मुस्लिम फौज घेरे से तंग हो चुकी थी। अतः

१. देखें हम्मीरायण, परिशिष्ट ३।

२. हम्मीरायण की कथा का सार देखें।

३. पद्यों का सार या हम्मीरायण के परिशिष्ट ३ में दे कवित्त देखें।

उद्दीन को आन्तरिक स्थिति का पता न चलता तो दुर्गस्थ लोगों को आशा थी कि सुल्तान घेरा उठा लेगा।

३. इस स्थिति में सुल्तान ने कूटनीति का प्रयोग किया। उसने रतिपाल, रणमल्ल आदि को फोड़ लिया। इसके फलस्वरूप उसे दुर्ग का आन्तरिक हाल ही ज्ञात न हुआ, बहुत से दुर्गस्थ सैनिक भी उससे आ मिले।

४. हम्मीर ने जौहर की अग्नि में अपने कुटुम्ब को भस्मसात् कर दुर्ग के द्वार खोल दिए और युद्ध के बाद अपने हाथों ही अपने प्राण दिए।

५. दुर्ग का पतन १० जुलाई, १३०१ के दिन हुआ।

हम्मीर के अन्तिम युद्ध का पूरा वर्णन हिन्दू काव्यों में ही है। हम्मीर महाकाव्य के अनुसार उसके साथ में नौ वीर थे। वीरम, सिंह, टाक गङ्गाधर, राजद, चारों मुगल भाई, और क्षेत्रसिंह परमार। वीरम के दिवंगत और मुहम्मदशाह के मूर्च्छित होने पर हम्मीर आगे बढ़ा। अन्ततः बहुत घायल हो जाने पर उसने, इस इच्छा से कि वह बन्दी न हो, स्वयं अपना कण्ठच्छेद किया।[1] हम्मीरायण की कथा हम ऊपर दे चुके हैं। उसके अनुसार भी हम्मीर ने स्वयं अपना गला काटा था। हम्मीर महाकाव्य के अनुसार हम्मीर की मृत्यु के बाद भी जाजा ने दो दिन तक दुर्ग के लिए युद्ध किया।[2] मुहम्मदशाह के व्यवहार की नयचन्द्र और फरिश्ता दोनों ने प्रशंसा की है। सुल्तान के यह पूछने पर कि यदि वह

१. सर्ग १३, १९९-२०५

२. सर्ग १४. १६. जाजा के लिए इसी प्रस्तावना में तद्विषयक विमर्श और इण्डियन 'हिस्टॉरिकल-क्वार्टरली' १९४९. पृष्ठ २९२-२९५ पर हमारा जाजा पर लेख पढ़ें।

वाड़ी वृक्ष्य नहीं कामणा, अंब जंबीरज केतकि तणा;
जाई बेउल चंपक महमहइ, देखी नगर लोक गहगहइ; ८
कोटि जिसो हुवइ इंद्र विमाण, च्यारि पोलि तिणि कोटि प्रधान;
पोलि चंढि नवलखीज होइ, चउरासी चहुटा नितु जोई; ९
वाण्या वंभण निवसइ घणा, लाख एक छइ हाटा तणा;
वर्णावर्ण लोक तिहं वहू, जाति प्रजा निवसइ छइ सहू; १०
सिखरबद्ध दस सहस प्रसाद, ऊंचा सुरगिरि स्युं लइ वाद;
सोवन कलस दंड झलहलइ, ऊपरि थकी धजा लहलहइ; ११
दानसाळ तिणि नगरी घणी, कोटीध्वज विवहारया नणी;
वंभण वेद भणइ सुविचार, वंदीजण नितु करै कइ वार; १२
तिणि नयरी उछव अपार, मंगल च्यारि दीयइ घर नारि;
जती व्रती तिह निवसइ घणा, तपी तपोधन नहि कामणा; १३
गढ मट मंदिर पोलि पगार, वास नगर नव जोयण वार;
चंपक वरण सरीसा गात्र, धारू वारू पे छइ पात्र; १४
घणउं वखाण किसु हिव करउ, अलकापती नी ऊपम धरउ;
तिणि नयरी विलास अपार, वेस वसइ सहस दस वार; १५
त्रैलोक्यमंदिर राय आवास, सीला ऊला धवलहर पासि;
भूखी पोलि अछइ तिणि कोटि, तिण नइ थंभ विचइ छइ ग्रोटि; १७
चहुयाण जयतिगदे पुत्र, राज करै सहु आणी सूत्र,
मालउ राजा थइठउ राजु, वंधव वीरमदे जुवराजु; १८

१४ वन, १८ राजि

सवा लाख साहण दलधणी, ऊलग करइ मोडोधा धणी;
गयवर घरि गुडइ सइ पंच, घोड़ा सहस एक सइ पंच; १६
सवा लाख साहण दल मिलइ, त्रिणि लाख पायल दल मिलइ;
सात छत्र धरावइ सीस, सवालाख संभरि नउ ईस; २०
जे कुलवंत भला छइ सूर, तिहनइ द्यइ ग्रास तणा सवि पूर;
वेला आई सारइ काम, तिहनइ कदे नहीं अपमान; २१
ते नवि कीणही करइ जुहार, घरि बइठा ग्याई भंडार;
झूझ माहि ते न गिणइ आढ, करतारा स्युं मांडइ वाद; २२
रिण खाखर पाखर घरि घणी, सवि सामहणी सुहड़ा तणी;
अंगा टोप रिगावलि तणा, पार न लाभइ घरि छइ घणा; २३
संग्रहणी कीधा कोठार, धान तणा मोटा अंबार;
घीव तेल री वावडि जिसी, जीमतां नहीं कदे खूटिसी; २४
मोटा राय तणी कुंयरी, परणी पांचसइ अंतेउरी;
रूपि करी नइ अति अभिराम, पटराणी हांसलदे नाम; २५
वरांगणा सहस इक जाणि, कंदर्प तणी जिसी हुइ खाणि; .
दासी सहस पंचसै घरइं, सवि छाम्प तिहां संचरइ; २६
द्रव्य तणी नहीं कामणा, सहस पंच मण सोना तणा;
चहत्तर कोड़ि गरथ घरि होइ, पाखर पार न जाणइ कोइ; २७
सूर्य वंसि माहि चंद्र समान, रणमल रायपाल बेऊ प्रधान;
अरधी बुंदी त्यांनइ ग्रास, घणउ परिवार अछइ तिहि पासि; २८

२१ द, आ; २८ त्यनइ

अति दाता नरणाई सोई, रिणि अभंग सो राजा होई:
न करइ कोई अन्याई रीति, राज करइ पूरवली रीति: २६
सूर वीर बहुत गुण धीर, वहय वीरमदे राय हमीर:
छत्रीवट खड्ग तणइ परमाणि, राज करइ रणथंभि चहुवाण: ३०
मोटउ राउ राजि विधि बहु, तिणि थानकि निवसइ छइ सहु:
करउ लील लोकातिहा सदा, तिणि नगरी दुख नहीं एकदा: ३१
चतुरंग लिखिमी निवसइ तिहां, दुख नही तिहि नयरी जिहां:
डंड डोर नवि लीजइ माल, तिणि नयरी दुख नहीं एक रसाल: ३२
तिणि अवसरि उलगाणा बेउ, रिणथंभोरि तिहं पहुता बेउ:
महिमासाहि गाभरू मीरि, ते आव्या संभल्या हमीरि: ३३
तिहि मीरा नउ वडो प्रमाण, चूकइ नही ते मेल्हइ बाण:
तिहरा प्राक्रम पार को लहइ, खडग छत्रीसी नी उपम सहइ: ३४
सवा लाखरी निगणि धरइ, जोड मोल कुणही नवि करइ:
तीर लहइ सहस दीनार, मेल्हइ तीर जाइ पर पारि: ३५
नरि लागाइ मरइ जइ कोई, सर ना मोल परोजन होई:
घाइल हुइ लहै नर सोई, पछि पीडा तिणि पाटइ होई: ३६
बेऊ सूर नइ बेऊ रणधीर, अति दाता महिमासाह मीर:
थाटी माहि उतारा कीया, त्याण त्याग रो सनुरा हुआ: ३७
गढ ऊपरि मोकली अरदासि, बेऊ मीर आव्या तुम्ह पासि:
मोटो राय सुणी रणथंभि, म्हे आव्या भारइ उडंभि: ३८

३० सीभ्रीवट ३२ कदा (किहां) ३३ बेउ मीर गाभरू
३६ घाईल ३७ हमीर, उतारा

मनमांहि चमक्यउ राउ चहुवाण, भला सूर बेऊ पठाण;
ते लेवा मोकल्या प्रधान, राय हमीर दीयइ बहु मान; ३६
चरणे लागि रह्या सिरनामि, देइ बाह ऊठाड्या ताम;
तुम्ह प्राक्रम अम्हे संभल्या, भलु हुवउ ते दरसण मिल्या; ४०

॥ दूहा ॥

राय कहइ कारणि कवणि, आव्या एणइ ठामि;
कइ सुरताणि जि मोकल्या, कइ तुम्हि घर कइ कामि; ४१
न सुरताणि जि मोकल्या, न म्हे घर कइ कामि;
कटक विणास घणउ करी, सरणइ आव्या सामि; ४२
घणा देस अम्हे फिर्या, राखण कोइ न समत्थ;
सवालाख संभरि धणी, भंजि अम्हारी अवत्थ; ४३
अलुखान जि मंगीयउ, अम्ह तीरइ पंचाध;
घणा दिवस म्हे ऊलग्या, जेऊ न दीधउ आध; ४४

॥ चउपई ॥

अम्हनइ मान हुतउ एतलउ, घरि बइठा लहता कणहलउ;
पातिसाह नइ करता सलाम, कटकि ऊलगता अलुखान; ४५
इणि वचनि दूहविया स्वामि, कालु मलिक मारयउ तिणि ठामि;
कटक मांहि कुलांहल कीया, जग देखत इहां आवीया; ४६
अम्ह अपराध सहु इम कहीया, राखि राखि इम बोलइ मीया;
सरणाई तु कहियइ लोक, राखि अम्हां कि बिरद करि फोक; ४७
अम्हे ऊलगिस्यां थारा पाय, किसी विमासणि म करिसि राय;
मन मांहि कूड़ कपट म न जाणि, अम्ह तुम्ह साखि दिउ रहमाण; ४८

४५ करतउ ४७ करा

ए वृतांत राय संभली, मनि हरख्यउ संभरिनउ धणी;
त्यांह नइ वाह दीयइ हम्मीर, महिमासाह तु म्हारउ वीर; ४६
अंतर किसी वात मत करउ, कुणही थकी रखे तुम्ह डरउ;
तिहनइ राय दियइ घर ठाम, ग्रास घणउ वलि अधिकउ मान; ५०

॥ वस्तु ॥

राय पभणइ राय पभणइ सुणउ तुम्हि मीर;
महिमासाह गाभरू तुम्हे सरणइ आव्या अम्हारइ,
वांह वोल तिहनइ दियउ ग्राम घणु नित को दिवाडउ;
कवि 'भांडउ' कहइ इसिउं हरख धरी मन मांहि,
रिणथंभुर वसिया जि ते मीर नइ महिमासाहि ५१

॥ चउपई ॥

विहु लाख सदा ते लहइ, वीजा ग्रास पार को लहइ;
सूरा नइ छइ सगलइ ठाम, विण साहस नवि सीझइ काम; ५२
जेह वात लोके संभली, गयउ महाजन राउल गुनि मिली;
पातल पाल्हण जाल्ह(ण) मिल्या, कोल्ह वील्हण देल्हणमिल्या; ५३
तोल्हण मोल्हण लियाहसी, आसड पारड नइ पदमसी;
धांधउ धूंघउ नइ धरमसी, वीसल वीरम नाइ तेजसी; ५४
वस्तु वीरम भणइ इम जोडि, प्रथमउ पूनउ पीथल तेड़ि;
वीरू धीरू सेतल सीम, भोटउ सादउ दादउ भीम; ५५

४६ हमीर ५० कोसी, ५१ वस्या ५२ पे ५५ पुउ

फेलउ मेलउ वेलउ साह, नयणउ नरवद नरसी साह;
सरणाई अनरथ नउ मूल, राल्यां होसी माथा सूल ; ५६
महाजन समझाई राई, कइ जि मिलिवा करउ उपाई;
आसण वयसण दीधा मान, तिहां दिवाड़इ फूल फल पान; ५७
नगर लोक महाजन सहू, किणि कारणि मिलि आयउ वहू;
इणि नगरी दुख नहीं कुणइ, लील करइ चहुआणा तणइ ; ५८
तइं कीधउ अपरीछ्यउ काम, मीरां नइ वलि दीधा गाम;
ढीली थका जे आव्या मीर, राखण जुगतउ नहीं हमीर; ५६

॥ दूहा ॥

अलावदीन तणइ घरइ, कीधउ एऊ विणास;
तिणि राखण जुगतउ नहीं, इम बोलइ 'भांडउ' व्यास; ६०
विष वेली ऊगंतड़ी, नहे न खूटी जे (होइ) ;
इणिवेली जे फल लागिस्यइ, देखइलउ सहूवइ कोइ ; ६१

॥ चउपई ॥

इणि वेली जे फल लागिसइं, थोड़ा दिन मांहि ते दीसिसइं;
तिहरा किसा हुस्यइ परिपाक, स्वादि जिस्या हुस्यइ ते राख; ६२
तिय कथनइ राई कानि नविदीयउ, सीख देई महाजन घरिगयउ;
तेय पूठइ जे वाहर हुती, अलूखांन करइ वीनति; ६३
रिणथंभोरि हमीरदे राउ, सरणे राख्या महिमासाह;
तेह न मानइ कुणही आण, तेहना गढ नउ घणउ पराण; ६४

---

६२ लागिसी ६३ तय

अलुखानि कोप मनि धरयउ, मीर मलिक सहु सायइ करयउ;
भला अपार नइ तेजी तुरी, त्रिहु लाखइ पटीवाधरी; ६५
चडद चडउ भला जे मीर, ऊठउ घोड़े घाहु जीण;
पहिरया जरद टोप जिण साल, घोड़ चडया लेइ करवाल; ६६
अलुखान चडिउ जिणवार, देस माहि को न लहइ सार,
कटक तणी नहीं का वात, करनदी वीटी आधी राति; ६७
हेड़ाऊ जाजउ देवड़उ, घोडा ले आयु पीकणउ;
सोचति तियरी उतरी जिहां, तिसइ करमदी वीटी निहां; ६८
जाजउ बाहर चडयउ जिणवार, पंच सहस लीधा तोषार;
कटक विणास कीयउ अति घणउ, जोउ प्राक्रम प्राहुणा तणउ; ६९
सोचति लेइ जाजउ गढि गयउ, राय हम्मीर तणइ भेटियउ,
राति तणउ कहीयउ विरतंत, जाजइ लीधउ बहु वइ वित; ७०
अलुखान पासरणउ करयउ, हीरापुर घाटउ उतरयउ;
सुधि न लाधी कुणही गामि, छाडणि सूती वींटी रानि; ७१
अलुखानि बंदि अति कीया, सहस चउरासी माणस लीया,
वाली नगर दाही अहिठाण, तिणि नयरी म्यान दिया मिलाण; ७२
देस मांहि भगाणउ पडयउ, रणथंभवरि नह कोई डगयउ;
हाटे वइठा हसइ वाणिया, पेखि तणा पन्द चोपड सया [गिया] ७३
देखी दल चमक्यउ चउहाण, हम्मीरदे इम बोलइ राण;
तउ हुंउ जयतिगदे पूत, मारी असुर दल ओपुं सूत; ७४

६५ पलुंखानां, धरइ ७० हमीर, भेटियइ ७१ सोवड ७२ राम
७४ हमीरदे, पुत्र, मारो

सुहड़ भला जे तेजी सूर, ते तेडाव्या राय हमीर;
लहता ग्रास अम्हारइ घणा, हिव अंतर दाखउ आपणा; ७५

सहु मिल्यउ पालउ परिवार, सवा लाख मिलिया भूभकार;
वाजित्र तणी नहीं कामणा, वाजइ ढोल सीरहली तणा; ७६

सुभटे लीया सबल सन्नाह, त्यां सुभटां मनि अति उच्छाह;
घणा दीह लगु रामति रम्या, तुरक देस हेलां निगम्या; ७७
गुड्या गयवर हयवर पाखर्या, घणा दीह लगु बांध्या चर्या;
जातीवंत हुता तोषार, त्यांरी पुंठि हुवा असवार; ७८
महिमासाह गाभरू मीर, साथइ ले ऊतर्यउ हमीर;
रातीवाह कटक माहि दीयउ, अलुखान तव भाजी गयउ; ७९

कटक घणउ कीयो खराब, मार्या मीर मलिक मूलाजाद;
देस के घणा मार्यारि पठाण, सहँस बत्रीस लीया केकाण; ८०

अलुखान जइ भागो जाय, कोटी सूयार ति लूटी राय;
रणथंभवरि वधावउ करइ, ते गृरिख मनि हरख जि धरइ; ८१
अलुखान देस माहि गयउ, कटक सहू एकट्टउ कियउ;
पातसाह नइ गइ पुकार, घणउ कटक मार्यउ खुंदकार; ८२
बीजा सहु मानइ थारी आण, एक न मानइ हमीरदे चहुआण;
जउरि न मानइ थारी आण, पातसाही थारी अप्रमाण; ८३
गउ पुकार सुणी सुरताणि, आलमसाह जपय गहमाण;
खुदाइ खुदाइ करी मन माहि, दाढी हाथ चालइ पतिसाह; ८४

७५ तेजि सुर ८२ गयो, कीयो

पुरहमाण तु खूद कार, आपि अल्ह आपि करतार;
आलमसाह तणइ अवतारि, कलिजुगि अवतरीयो मोरारि; ८५

॥ दूहा ॥

खुन घणउ सुरताण नउ, कीधउ महिमासाहि;
तइ सरणाई हमीरदे, राख्या महिमासाह; ८६
रणथंभवर तणउ धणी, जेऊ न मानइ आण;
सांभरि इयरइ वयसणउ, थारउ किसउ प्रमाण; ८७

॥ वस्तु ॥

ताम असपति ताम असपति धरइ बहु कोप;
अलावदीन कहइ इस्युं सहू मीर वेगा हकारउ;
पातसाह फुरमाण दइ वेगि वेगि कोठी भराऊ;
खान खोजा मलिक्ज अछइ तेह म लाउ वार;
आलमसाह रणथंभ नइ वेगि हुयउ असवार; ८८

॥ दूहा ॥

मोहि मूछ बोलइं इसउ, लिखउ लिखउ फुरमाण;
नहू कटक मिलि आविगो, जे मानइ म्हारी आण; ८९
तिणि अवसरि अलावदीन, कीध प्रजाम्या इंस;
रणथंभवर लेइ करीं, राउ हूं घरि आवीसु; ९०

९० कोच न प्रजम्या

॥ चउपई ॥

आलमसाह हुवउ असवार, जाणे गढ लेसी करतार;
तियरा दल नवि लाभै पार, छायो सूर हुवउ घोरंधार; ९१
नीसाणे घाव घण वल्या, वाजइ ढोल ति पितलि गल्या;
त्रंबक डाक वुक अति घणा, रिण काहल लागइ वाजणा; ९२
ढीली थकउ चाल्यु सुरताण, सेपनाग टलटलीया ताम;
डुंगर गुड़इ समुद्र झलहलइ, त्रिभुवन कोलाहल ऊछलइ; ९४
इंद्रासणि जाइ लागी खेह, इंद्र जोवइ तिहां न्यान धरेवि;
अलावदीन आपइ सुरताण, रणथंभवरि जाई दीयउ पयाण; ९५
लोक कहइ कुण करसी काम, इन्द्र तणउ सहु लेसी ठाम;
असी गढ अलुखान ज लीया, डीलइ साहिब कणि कोटनविगया; ९६
इय आगलि नवि मांडइ कोई, माणस किसुं देव जइ होई;
रिणथंभवर तणी कुण वात, आगलि मेर न हुइ कांइसात; ९७
चउदह सहस माता उम्मत्ता, ते गुड़िया गयवर संजुत्ता;
पाणीपंथा भला तोपार, चार लाख मिलिया असवार; ९८
मुहिमद मीर मोटा पठाण, वे ऊमटी आव्या खुरसाण,
मुगल काफर ते अतिघणा, मलिक मीर मीया नह मणा; ९९
सतर खान मिलिया तिणीवार, बहत्तरि ऊंवरा भला झूझार;
पातसाह रा डीलज जिसा, तीयरा नाम कहुं हिव किसा; १००
काफर माफर जाफरखान, खोजी मोजी रोजी नाम;
निसरतखान निकुंज निरोज, ताजखान री जमली फोज; १०१

९९ उमता

जिहर मलिक बीजुलीखान, सेख सरीसा मोटा नाम;
अल्हू मल्हू चल्हू गऊ, घणा कटक स्यउं आव्या तेऊ; १०२
मांजी गालिम महिला खान, खूनी मुनी ज्ञानी नाम;
सिहदल मलिक हसवा हसेव, मालद नगदल अलखं असेव; १०३
हाजी काल्हू ऊंवरा वड़ा, पाहड़ प्रेम तिहांरा धड़ा;
सुवलिक रुकयदीन वेऊ, ततारखान फौज नहि तेऊ १०४
अहमद महमद महवी कीया, आलफखान पछवाण ज हूवा;
फौरउपरि कीधउ मुगीस, दाफर फिरइ फेर निसदीम; १०५
राणो राणि हिंदु मिल्या घणा, दल आव्या देस देसह तणा;
'भाडउ' कहइ घणवउ किसउ, पातिसाह दल चक्रवत्ति जिसउ; १०६
काली पाखर काला टोप, लोह तणा ते दीसइ टोप;
घोड़े चड्या ते आइय लेउ, जाणे जम ना सेवक तेउ; १०७
कटक तणी गाडी संजती, पांच लाख चालइ पालखी;
राजवाहण वहिल चकडोल, धूजी धरा पडिउ हलोल; १०८
मोथी भोई भील अति घणा, मूई सूनार तणी नहि मणा;
तंबोलीय मालीय कलाल, नाचणि मोची नड लोहार; १०९
मोची घांची नट तेरमा, धोई टेट मायणगर घणा;
मड मेलार मेर म्हाटही, कादी पुरान पढइ कि घही; ११०
वाण्या वांभण बहुला मिल्या, वणकर सूत्रधार दलि भिल्या;
पन्हा पुरंट हबसी तिमा, मूदी देई नृत्य तिमा; १११

१०२ रूप हल्ल चल्ल १०७ जिम १०९ नई ११० रूपरी

कोठी अनइ घणा बाजारि, त्रिणि लाख गाडा कटक मझारि ;
पोठी ऊंट गादह वेसरा, तिहरी पूठि भरया अति भरथा ११२
पाखर जरद अनइ जीण साल, जल जंत्र नालि ढीकुली झमाल;
वर्णा वर्ण कटक मांहि सहु, जं जोईय तं लाभइ बहु; ११३
'भांडउ' कहइ कटक अनमानि, सवाकोड़ि मिलिउ माणस ताम;
खुर रवि खेह छायउ आभ, भूला न लहइ वेटउ बाप; ११४
जोयण च्यार पड़इ मिलाण, रूंख वृख न रहइ तिणि ठाणि;
समुद्र तणी वेलू हुइ जिसी, पातिसाह फोज हुइ तिसी; ११५
मनि चिंतवइ इसु सुरताण, जात समउ भांजिसु गढ ठाम;
संभरिवाल जीवतउ ग्रहउं, सहर वंदि ले ढीली करउं; ११६
सवालाख माहि दीधीवाह, लूभइ बंधइ माणस आह;
ढाहइ पोलि नगर प्राकार, देश माहि वलि फिर्या अपार; ११७

॥ दूहा ॥

पातिसाह आदेश द्यइ; संभलि अलुखान;
देस विणास किसउ करउ, गढि जाइ द्यउ रि मिलाण; ११८
ब्राही छइ रि खुदाइ की, जइरि विणासउ देस;
सीचाणा ज्यंउ झड़फ ल्यउ, रणथंभवर नरेस; ११९

॥ चौपई ॥

आलम साह नइ अलुखान, वेगि करि गढि आव्या ताम;
पातिसाह गढ दीठउ जिसइ, जोई द्रिष्ट विकासी तिसइ; १२०
सावंदलि आव्यउ सुरताण, फोज कीया मीर मलिक ने ग्यान;
हाल हाल करइ अपार, गढ पाखलि फिरीया असवार; १२१

---

११२ उट

नदी तणा जिसा हुइ पूरि, कटक तणा दीसइ कलूरि;
रुद्र घणा बाजइ नीसाण, गढरा लोक पडइ पराण; १२२
ढलकी ढाल फरहरी चांध, गढ पाखलि फिरीया वेढ;
धूजी धरा गढ कांपीयउ, शेषनाग तिहि माही रासीयो: १२३
गढ चांपी आपि सुरताण, मिलाणीरा हुवा फुरमाण;
घणा कटक अर मोटा खान, चहु पोलि हुआ मिलाण; १२४
पंच वर्ण तिहि देरा दीया, झलकइ कलस सोना रा तिहां;
सहु कटक उतारा लीया, पाखलि मालपुटा गढ कीया: १२५
पातिसाह दल दीठउ जिसइ, गढना लोक चिंतवइ तिसइ:
गढ ऊपाड़ी पाडिसी, कोसीसा उतारसी; १२६
गढ मांहि हूयउ धूंधाकार, सूरज तणी न लाधीसार;
काला कोट हाथिया तणा, गढ ऊपहरा दीसइ घणा; १२७
लोक सहु तिहि करइ विलाप, घणा देवला मांडइ जाप;
राय हमीर चिंत नवि धरइ, लोक सहु नइ सुनता करइ: १२८
कटक सहु मेल्हाणं हुयउ, सिंहासंभर भाजी गयउ:
दिम निर्मला भागउ अन्धार, ऊगयउ सूर न लागी वार, १२९
लोका नउ भउ भाजी गयउ, कटक नही म अचरिज भयउ:
लोकानइ उपनउ उच्छाह, पुनिहि ऊपरि हुयउ माप: १३०
घणइ हरखि ऊगयउ थी सूर, तउ गढ माहि वाज्या तिलूर;
राय हमीर पसायउ करउ, पातसाह देखी गोसइ: १३१
आज अम्हारउ जिमयउ प्रमाण, हू भलइ करनउ पहुपाना
रिणथंभउरि हठीलउ राय, मुक्त परि दीठी आवउ पतिसाह: १३२

१३१ हरख करउ   १३२ जीम्यउ

॥ वस्तु ॥

ताम राजा ताम राजा धरियउ उछाह;
गढ गाढउ सिणगारीउ भला सुभट नइ ग्रास अप्पइ;
हरख धरी हम्मीरदे घणउ मान मीरां समप्पइ;
मुझ गढ भलइज प्राहुणउ आव्यउ अलावदीन;
सफल दिवस हुउ मुझ तणउ जन्म आज धन धन्न; १३३

॥ चउपई ॥

रणथभोरि गुडी उछली कोसीसइ कोसीसइ भली;
तोरण ऊभवीया घर-बारि, मंगला (दियइ) चारि दियइ वर-नारि;१३४
च्यारि पोलि सिणगारी तिहां, आरीसारा तोरण जिहां;
ऊभ्या धइचइ चींध पताक, गुहिरा वाजइ त्रंबक ढाक, १३५
बुरजि बुरजि धरइं नीसाण, ढोल (तणइ) घाइ पड़इ अरि प्राण;
वाजइं वरगू नइ काहली, देव सहु जोवा आव्या मिली; १३६
सात छत्र धरावइ सीस, चमर ढलइ (ऊचइ) रणथंभोरा ईस,
पटहस्ती वयठउ चहुआण, नगर मांहि फिरि कीयो मंडाण; १३७

॥ दोहा ॥

आलम साह आव्या भणी, कीधा बहुत उछाह;
गढ गाढउ सिणगारीयउ, रिणथंभोरइ नाह; १३८
हमीरदे मनि हरखीया, दल देखी सुरताण;
आपणपउ धन मानतउ, बंदिण द्यइ अति दान, १३९

१३३ हमीरदे १३५ ऊसाध; चंध

नदी तणा जिसा हुइ पूरि, कटक तणा दीसइ कलूरि;
रुद्र घणा वाजइ नीसाण, गढरा लोक पडइ पराण; १२२
ढलकी ढाल फरहरी चांध, गट पाखलि फिरीया वेढ;
धूजी धरा गढ कांपीयउ, शेषनाग तिहि साही राखीयो; १२३
गढ चांपी आपि सुरताण, मिलाणीरा हुवा फुरमाण;
घणा कटक अर मोटा खान, चहु पोलि हुआ मिलाण; १२४
पंच वर्ण तिहि डेरा दीया, झलकइ कलस सोना रा तिहां;
सहु कटक उतारा लीया, पाखलि सातपुडा गट कीया; १२५
पातिसाह दल दीठउ जिसइ, गढना लोक चिंतवइ तिसइ;
गढ ऊपाडी पाडिसी, कोसीसा उतारसी; १२६
गढ मांहि हूयउ धूंधाकार, सूरज तणी न लाधीसार;
काला कोट हाथिया तणा, गढ ऊपहरा दीसइ घणा; १२७
लोक सहू तिहि करइ विलाप, घणा देवला मांडइ जाप;
राय हमीर चिंत नवि धरइ, लोक सहु नइ सुरता करइ; १२८
कटक सहु मेल्हाणे हुयउ, खेहाडंबर भाजी गयउ;
दिस निर्मला भागउ अन्धार, ऊग्यउ सूर न लागी वार; १२९
लोका नउ भउ भाजी गयउ, कटक नहीं ए अचरिज भयउ;
लोकानइ उपनउ उच्छाह, पुनिहि ऊपरि हुयउ भाव; १३०
घणइ हरखि ऊगइ थी सूर, नउ गढ मांहि पाखरा पूर;
राय हमीर वधावउ करइ, पातसाह देखी गोखइ; १३१
आज अम्हारउ जिग्यउ प्रमाण, हूं भलइ उपनउ परमाण;
रिणथंभवरि हउ होयउ राय, तुम्ह परि हीन्दी आव्यउ पतिसाह; १३२

---

१३१ हरख धरइ १३२ लीजइ

॥ वस्तु ॥

ताम राजा ताम राजा धरियउ उछाह;
गढ गाढउ सिणगारीउ भला सुभट नइ ग्रास अप्पइ;
हरख धरी हम्मीरदे घणउ मान मीरां समप्पइ;
मुझ गढ भलइज प्राहुणउ आव्यउ अलावदीन;
सफल दिवस हुउ मुझ तणउ जन्म आज धन धन्न; १३३

॥ चउपई ॥

रणथभोरि गुडी उछली कोसीसइ कोसीसइ भली;
तोरण ऊभवीया घर-बारि, मंगला (दियइ) चारि दियइ वर-नारि;१३४
च्यारि पोलि सिणगारी तिहां, आरीसारा तोरण जिहां;
ऊभ्या धइवड़ चींध पताक, गुहिरा वाजइ त्रंबक ढाक, १३५
बुरिज बुरिज धरइं नीसाण, ढोल (तणइ) घाइ पड़इ अरि प्राण;
वाजइं वरगू नइ काहली, देव सहु जोवा आव्या मिली; १३६
सात छत्र धरावइ सीस, चमर ढलइ (ऊचइ) रणथंभोरा ईस,
पटहस्ती वयठउ चहुआण, नगर मांहि फिरि कीयो मंडाण; १३७

॥ दोहा ॥

आलम साह आव्या भणी, कीधा बहुत उछाह;
गड गाढउ सिणगारीयउ, रिणथंभोरइ नाह; १३८
हमीरदे मनि हरखीया, दल देखी सुरताण;
आपणपउ धन मानतउ, बंदिण शइ अति दान, १३९

१३३ हमीरदे   १३५ ऊसाव; चंध

> बंदीजण आसीस द्यइ, जउति हुवउ चहुआण;
> न्हांतां वाल रखे खिसइ, तं हम्मीरदे राण; १४०
>
> नगर लोक सहु मिल्या, वधावइ चहुआण;
> गढ वधावइ अति घणउ, भरि भरि अंजिअयाण; १४१

॥ चउपई ॥

कहइ ऊंवरा मोटा ग्यान, एक वार मोकलउ प्रधान;
साची वात मानी सुरताणि, प्रधानां रउ जुगतउ जाणि; १४२
मोल्हउ भाट तेडाव्यउ सुरताणि, तेहनइ साहिब दे फुरमाण,
सम्भरिवाल तीरइ तुम्ह जाउ, पूछइ किसउ कहइ ते राउ; १४३
मोल्हउ भाट गढ माहि गयउ, राय हमीर तणइ भेटियउ;
राय हमीर ति मान्यउ घणउ, भाट नइ कीयउ प्राहुणउ; १४४
भाटइ आसीस ज दीध :—

> तु ब्रह्मा जयउ सदा, जयति दीयउ श्री सूरि
> हनु ईसर रिक्षा करउ, राम दीयउ रिधि पूरि १४५

॥ दोहा ॥

> भाट कहइ राजा निसुणि, इक कीरति अरु साहि;
> ते वरिया आवी निसुणि, किम्ही परिसि, कहि नाथ; १४६
>
> तूं वरि थेऊ घर तरणि, सयंवर मांडयउ सुरिताणि;
> भाट कहइ हम्मीरदे, भली गिणइ तें मानि; १४७

१४० हमीरदे   १४१ वधावइ

॥ चौपई ॥

राज कहइ वारहटा वली, कीरति-लाछि मांहि कुण भली ;
लाछइ गरथ घणउ आविसइ, कीरति देसि विदेसइ हुस्यइ ; १४८
'मोल्हउ' कहइ मोकल्यउ सुरताणि, कहइ सु सुणइ हमीरदे राण ;
'देवलदे' कुंवरी परणावि, 'वारू' 'वारू' साथि अलावि ; १४९
हाथी घण वे मागइ मीर, तुम्हनइ निहाल करइ हमीर ;
अधिका दे 'मांडव' 'ऊजेणि', सवालाख संभरि तउ केडि ; १५०

॥ दोहा ॥

च्यारि बोल आपी करी, भोगवि लाछि अणंत ;
'मोल्हउ' कहइ राजा निसुणि, कीरति दुहेली हुंति ; १५१
'मोल्हउ' कहइ विसहर करिसि, जइ इन नामिसि नाक ;
सरणाई आपिसि नहीं, कीरति होसी नाक ; १५२
कीरति मोल्हा ! वरिजि मइं, लाछी तुं ले जाइ ;
डाभ अग्रि जे रूपडइ, ते न आपउं पतिसाह ; १५३
जइ हारउं तउ हरि सरणि, जइ जीपउं तउ डाउ ;
राउ कहइ वारहट ! निसुणि, विहुं परि मोनइं लाह ; १५४

॥ चउपई ॥

घणइ महति भाट वउलावियउ, घरनउ भाट सांथिइं मोकल्यउ ;
मोल्हि जइ तिहि दीवी छाहि, घणउ मान दीधउ पतिसाहि ; १५५

---

१४३ तइ १४६ वीजो, ▷ मरु,-वरसि, १४७ मंड्यउ सुरतारा, हमीरदे, तोमानि
१५२ विसर करीस, जयरिन ▷ जइइन नाकि १५५ वउलाविवउ, साथि, नाहि

(गाथा)

रचिता मम समुद्रा निर्मिता जेन रवि शशि तारा।
अविगत अलख्य अनंतो रहमाणउ हरउ दुरियाइं ॥

॥ अथ छपद ॥

रे देवगिरि म म जाणि, जुरे जादव कि नरवइ
रे गुजरात म म जाणि, कर्ण चालुक न हुयउ
रे मंडोवर म म जाणि, जुनइं गाढम करि महियउ
रे जलालदीन म म जाणि, जुरे वेसासि जि महीयउ
रे अलावदीन! हम्मीर यहु, दिढ किमाड आडउ मरउ;
रिणथंभि दुर्ग लगांतड़ां, हिव जाणीयइ पदम्नरउ; १५६

॥ दोहा ॥

भाट कहइ मोल्हड किसउ, तूं भूलउ सुरिताण:
गढ रणथंभ हमीरदे, जीपिसि किण्हि विनाणि; १५७
नवि परणावउं डीकरी, नवि आपउ बेउ मीर;
हाथी गढ आपउं नहीं, इमउं कहइ हम्मीर; १५८
तुं साहिबा सुरताणसुं, करइ विग्रह निसदीस;
हमीरदे कहीयउ इमउ, नउइ न नामउ सीस; १५९
मड बरसां नु संचीयउ, धान चोपद गढ मांहि;
चहुयाण कहइ इमउ, रागनि करि पतिसाह; १६०

>१५६ हमीरदेउ, १५८ म मति, न > नवि कहीं, सुरत > इसउ
गाडिम, करि > कि

॥ चौपई ॥

भाट नइ तूठउ सुरिताण, घोड़ा अरथ दिवाड़इ ताम ;
भाट कहइ आगइ घरि घणा, उचित भंडार अछइ तुम्ह तणा ; १६१
देवां नइ नरवर तणा, उचित न होइ भंडार ;
नाल्ह न लइ कारणि कवणि, हुं तूठउ करतार ; १६२

॥ चौपई ॥

नाल्ह कहइ कारण सुरताण, तउ विग्रहि मरमी चहुयाण ;
भाट मरइ आगलि तिणिवार, इणि कारणि न लीयउ भंडार ; १६३

॥ दूहा ॥

नाल्ह कहइ साहिब सुणउ, ज दो मरइ चहुआण ;
भाट उचित मांगइ तदि, कहि गयउ निज ठाण ; १६४

राजकुली छत्तीस नइ, चीरी दइ चहुआण ;
या वेला छइ तुम्ह तणी, आवउ घणइ पराणि ; १६५

॥ अथ पद्धड़ी छन्द ॥

संदा चंदा दाहिमा जाणि; कछवाहा मेरा मुंकिआणं ;
चारहड घोडाणा अतिमूमार; वाघेला मिलिया तिह अपार ; १६६
माटिय गवड तुंवर असंख, सुभट सेल घाल्या हलंत ;
डाभिय डाढीय अति घणा हूण, डोडीयआण पवाणरूण ; १६७

---

१६४ ठाम, न्हाल, जदि, १६६ वरहड़ा

गुहिलउ गहिल गोहिल राय, परमार पधार्या अति उछाह ;
सोलंकी सिंधल घणउ मंडाणि, चंदेल खाइड़ा नइ चहुआण ; १६८

जाटा जादव महुउडा एव, सूरमा रणमल जाईं तेउ ;
राठवड़ मेवाड़ा निकुंद, छत्रीस कुली मीली आरम्भ ; १६६

हम्मीर राय हरखीय अपार, दीठा मिल्या अति झूझार ;
मंडलीक मउडउधा राणो राणि, सहुयमिलि आव्या तेणि ठामि ; १७०

रजपूतां नइ दीधा (अति) भला सनाह, अंगा रंगाउलि सगा ठाह ;
छत्रीस डंडाऊध लीय जाम, 'महिमासाह' उतर्या ताम ; १७१

मार्या मीर मलिक जाम, सगला दल माहि पड्यउ भंगाण ;
नवलखि मार्या निमरखान, थंबारव पड्यउ तेणि ठाणि ; १७२

'महिमासाहि' मार्या घणा मीर, गढ जाय जुहार्या हमीर ;
जग जयति हुउ चहुआण राय, कवि कहइ 'व्यास भंडउ' उछाह ; १७३

॥ दोहा ॥

कटक माहि हल हल हुई, हुउ दमामे घाउ ;
सुभट सनाह लेई भला, चढिउ आलम साह ; १७४

॥ चौपई ॥

आलमसाह चढ्यउ सुरताण, कटक सहु नइ हुया फुरमान ;
मोटा खान भारी ऊंबरा, तिनि गढि लागा पातीफेरा ; १७५

---

१७० हमीर, मोटोधा, ठामि

कनड़ा कुर्कट हवसी जेउ, कोसीसइ जइ वाज्या तेउ ;
मीर मलिक पठाण जि हुता, तिणि गढि चड्या घणा संजुता ; १७६
चउद सहस गयवर तिह गुड्या, मदि माता भाखरि जाइ अड्या ;
घंटा तणा हुवइ निनाद, गढना देव धरइ विषवाद ; १७७
सवालाख वाजा वाजीया, कायर तणा तिणि फाटइ हीया ;
लवे लवे करइ इआर, जाणे गढ लेसी तिणिवार १७८

॥ दोहा ॥

तिणि अवसरि हम्मीरदे, तेड्या सगला राइ ;
आजि भलउ कीलउ करउ, देखइ जिउं पातिसाह ; १७९
राजकुली छत्रीस नइ, मोटा राणो राणि ;
ते गढ हूता ऊतर्या, जम्ह करइ मंडाणि ; १८०
सूरा मनि उछाहइउ, कायर पड़इ पराण ;
वांका बोलजि वोलता, भाजि गया तिसि ठाण ; १८१
पछेवड़ी घुटी समी, हाटो माहि घसंति ;
लोह झबक्या देखि करि, गया ति कायर न्हासि ; १८२

॥ चौपई ॥

सात छत्र धरावय राइ, गयवर गुड्या आण्या तिणि ठाइ ;
आलम ऊभो देखइ पातिसाह, बेऊ सुभट भिड़इ तिणइ ठाई ; १८३
बिहु दल वाजइ जांगी ढोल, नीमाणे पड़इ हिलोल ;
बिहु दलि वाजइ रिणि काहली, कटक दउड़ि झालरि रमि भरी; १८४

२७६ हवसि जेव, सुत्तु २७९ हमीरदे, राव भाज

अति मीठी बाजइ मूहरी, तियरइ नादि वीर रसि चडीः
बिहु दलभाट करइ जयकार, सुभट भिड़इ न लाभइ पार; १८५

मयमत्त भयकइ (तिह्) करवाल, वाहइ सेल घणा अणियाल;
मींगणि घणा विछूटइ तीर, इम मेलइ भिड़इ तिम वीर; १८६

यंत्र नालि वहइ ढींकुली, सुभट राय मनि पूजइ रली;
मरइ मयंगल आवटइ अपार, आहुति लइ जोगिणि तिणि वार; १८७

गयवर पड़इ थिर हिणहिणइ, सुभट घणा रिणांगणि पड़इ;
लहता मास घणा जे जिहां, तेऊ उरसफल मांगइ तिहां; १८८

॥ दूहा ॥

उलगाणा खावइ मदा, ऊरण हुइ इकवार;
खाइं मणी ठाकुर तणी, सारइ दोहिली वार; १८९

ढील पड़इ लहता मदा, न्यामति पोढा मास;
गढि गो ग्रहि उरण करइ, त्यां सुरगापुरि वास; १९०

। चउपई ।

पातिसाहि दल भागी नाम, मार्या मीर मलिक बहु खान;
गढ (नइ) पूजा कीधी अति घणी, अपगि हुइ रिणथंभोरह धणीः १९१

मह कटक री कीधी सार, सयालाख मूटउ एकवार;
महु मलिक खान करइ सलाम, कटक सरावइ साहिब गुण काम; १९२

१८५ खिराइ, १८६ बार, १९० तिहां

प्राणइ गढ लीजइ नवि किमइ, कोई उपाय चिंतवउ तिमइ;
जइ रिणि पुरावइ खुंदकार, हेलां गढ लीजइ इक सार; १९३
रिण थंभ ऊपरि चड्यइ सुरताण, देखइ गढनउ सहु मंडाण;
सिंघासणि सउ बेठउ राउ, रिण हुंतउ जोवें पतिसाह; १९४
महिमासाह कहइ सुणि राउ, मो घातइ आयउ पतिसाह;
कहइति डील मारउ सुरताण, कहइति पाड़उ छत्र मंडाणि; १९५
राउ कहइ थारउ साचउ मीर, छत्र पाड़ि इसउ कहइ हमीर;
कहइ पठाण सुणि गोमरा, इणि जीवति किउ भूजिसि धरा; १९६
खांचि बाण तिण मेल्ह्यउ मीरि, सात छत्र तिणि पाड्या तीरि;
चिति चमकिउ आपु सुरताण, महिमासाह तणउ ए पराण; १९७
पहिलउ रिण पूरउ लाकड़े, देई आग बाल्यउ तिय भड़े;
कटक सहू नइ हुयउ फुरमाण, वेलू नखाउ तिणि ठाणि; १९८
सुथण तणी बांधइ पोटली, मीर मलिक वेलू आणइ भरी;
न करइ कोइ भूभ गढ वाल, वेलू आणइ सहि पोटली; १९९
छठइ मासि संपूरण भर्यउ, ते देखी लोक मनि डर्यउ;
कोसीसइ जाइ पहुता हाथ, तुरका तणी समी छइ बान्छ; २००
राय हमीर चिंतातुर हूयउ, रिण पूर्यउ दुर्ग हिव गयउ;
गढ देवति लही परमाथ, आणी कुंची दीधी हाथि; २०१
राय बारी उघाड़ी ताम, देव माया पाणी वहिया ताम;
वहि वेलू पाणी सुं गयउ, तेह कोल वलि टालउ थयउ; २०२

१९३ प्रारइ, हेलो १९४ देखी, सिंघसरि, हुंता, १९५ मिल १९६ पाठल, १९७ मेलउ १९९ भरी २०१ चिंतातुउ, २०२ हमीर

राउ आगलि नितु पालउ पड़इ, देखी पातसह धड़हड़इ;
धारू वारू नाचइ बेऊ, पुठि दिखालइ पातिसाह नइ तेउ; २०३
कोई कटक मांहि भलउ मीर, नाचणि मारइ मेल्हइ तीर;
जइ हुवइ महिमासाह नउ कोई, इय विदा तणि मारइ सोई, २०४
सारी दुनी मांहि को इसउ, इय विदा तणि मारइ जिसउ;
महिमासाह नउ काकउ होई, एअ विदा तणि मारइ सोई; २०५
इयणा घरनी विद्या एऊ, भला मीर नवि जाणइ तेऊ;
ढीली मांहि वंदि तुम्हि धर्यउ, तउ खिणि आणि ऊभउ कर्यउ; २०६
तुम्हनइ निहाल करउ वड़ा मीर, इय विदा तणि मारइ तीरि;
साहिब सिंगणि वाण्या हाटि, सवालाख अडाणी माटि; २०७
सिंगणी घणी भली गइ हाथि, सींगणि सांची कुटका सात;
आणावी सिंगणी सुरताणि, मीरां नइं अति चड्यउ पराण; २०८
राय आगलि तव मांड्यउ नाच, धारू वारू नाचइ पात्र;
तोडी ताल पुठि फेरी जाम, मलिक मीर मारी ते ताम; २०९
एकइं तीरि पात्रि मारी बेउ, गढ बाहरि मारी पाड़ी तेऊ,
घणउ उचिति दीधउ सुलताणि, एउ पवाड़उ कीधउ तिणि ठामि; २१०
गढ गाढउ विस्यउ सुरताणि, को मलकी न सकइ तिणि ठामि;
मांहो मांहि मरइ लखकोड़ि, पातिसाह नवि जाए छोड़ि; २११
चार वरिस नउ विग्रह कीयउ, मीर मलिक घणा तिह मुया;
ढीली थी आई अरदासि, किसइ लोभि साहिब रहउ यासि; २१२

---

२०४ जय, २०७ करइ, २०९ धमम रो मरी मारी ताम, २१० बहरि मीरी

संइभरिआल न मानइ आण, दंड नवि यइ तुझ नइ सुरताण;
गढ नवि लीजइ प्राणइ किसइ, कटक मरावीइ कारण किसइ; २१३
थारइ गढ छइ आगइ घणा, घर संभालि साहिव आपणा;
पुत्र कलत्र सहुअइ परिवार, तीयारइ मेलउ दइ खुंदकार; २१४
साहिव कहइ सुणउ सहु मीर, नाक नमणि जे देइ हमीर;
घरि जातां सोभा हुइ घणी, पति पाणी रहइ आपणी; २१५
पातिसाह कहावइ ईम, वार वरस विग्रह नी सीम;
तं मोटउ अगंजित राव, सरणाई तणउ पतिसाह; २१६
वार वरस आपे रामति रमी, सुनइ घरि मुकलाविनइ किमइ;
हुं थारइ आव्यउ प्राहुणउ, मुहत देइ मो दे ताजिणउ; २१७

॥ दूहा ॥

पातिसाह इसउं कही, गढि मोकल्या प्रधान;
रामचंदि रूड़उ कीयउ, लोक कहइ चहुआण, २१८
आलम साह रइ आगलइ, तुं ऊगस्यउ अभंग;
खिजमति देइ वउलावि नइ, जेम रहइ अतिरंग; २१९
लोक कहइ चहुयाण नइ, ईम विमासी जोई;
मोटां सुं नमता कदे, दूयण- नावइ कोई; २२०
घणउ विसास जिहां तणउ, ते तेड्या राय प्रधान;
रणमल रायपाल सूरिमा, मोकलिजइ तिणि ठाम; २२१

२१४ सहुव, २१५ सुरि २१६ श्रगोजित, २१८ कहइ, २१९ चलावि तुरंग,. २२० इम

कवि कहइ 'भांडउ' इसउ, संभलिज्यो सहु कोई।
ते प्रधान जं करइ, अचरिज जोवउ लोई। २२२

॥ चउपही ॥

राय हमीर मोकल्या प्रधान, रणमल रउपाल गया तिणि ठामि,
पातिसाह नइ कीया सलाम; आलमसाह दीयइ बहु मान; २२३
रणमल तीरउ पूछइ पतिसाह, तुम्ह नइ ग्रास किसु दे राउ;
अरधी बूंदी अह्मनइ ग्रास, जिमणइ गोडइ बइसारइ पासि; २२४
सइ हथि बीड़उ अम्हनइ दइ राउ, गढ प्रधानउ करां पतिसाह;
तउ तुम्हि आव्या वड़ा प्रधान, घर मुकलावउ अम्ह नइ देइमान; २२५
बार वरस तइ विग्रह कस्यउ, गढ लीया विणु काइ पाछउ भयउ;
रिणमल राइ (पाल) कहइ सुरताण, बंधव गढ नवि लीजइ प्राणि; २२६
पूरी बूंदी थ्ये सुरताण, अम्हे गढ द्यउ (तुम्ह) विण प्राणि;
सुणी वात हरख्यउ सुरिताण, लिखि इहां दीध तिहां फुरमाण; २२७
अम्ह तुम्ह विचइ अलख रहमाण, कोस कीया करइ सुरताण,
बीजा ग्रास द्यउ अति घणा, वाह बोल तु दीउ आपणा; २२८
मति भूला नही तीय मान, तियां सुरिखानी नाठी सान,
हीया सूना जाणइ नही ईम, तुरकां नइ वेससिजइ केम, २२९
स्वामी-द्रोह कीयउ तिण तिहां, परिघउ ले आवां छां तिहां,
मनि हरख्या रिणमल राउपाल, कूड़ करी गढि ग्या ततकाल; २३०

---

२२४ रइ, २२७ दै, २३० रोउपाल

राय हमीरपूछ्यउ (छइ) इसउं, पातिसाह मांगइकहि किसउं;
देवलदे मांगइ कुंवरी, द्रोहे वात मनि हुंती कही; २३१
देवलदे (इ) कहइ सुणि वाप, मो वड्इ ऊगारि नि आप;
जाणे जणी न हुंती घरे, नान्ही थकी गई त्या मरे; २३२
राय हमीर सुधि नवि लहइ; सहु परिघउ फेरव्यउ तिणि समइ;
गढ नउ लोक न जाणइ भेउ, रणमल रायपाल करइ छइ तेउ; २३३

कोठारी नइ बोल्यउ विरउ, धान नखावि सहु तउं परउ;
अम्हनइ वूंदी पूरी हुई, तं परधानउ देस्यां सही; २३४
तिणि नीचि नाख्या सहुधान, रिणमल रउपाल परधान;
वीरमदेरी घालइ घात, राय तणइ मनि न वसी वात; २३५

रिणमल रउपाल मांगइ पसाउ; एकवार परघउ शउ राउ;
कटकि कीलउ करां अति भलउ, जे में तुरक पाडां पातलउ; २३६
राय तणइ मनि नही विशेष, द्रोहे कीधउ काम अलेख;
सवालाख परिघउ (दइ) राव, द्रोहे मिल्या जाई पतिसाहि; २३७
सात वार पहिराव्या तेउ; मूरख हरख्या गाढा वेऊ;
कोसीसे थीयउ देखइ राऊ, जोवउ रणमल खेल्यउ डाय; २३८
अणचिंतइवी हुइ कुण वात, दसा देवि दीधी अति घात;
पापी परधान पइड्या वेउ; परिघउ सहु लोपउ तेउ; २३९
गढ मांहि नहीं को जूझार, जइरइ हाथि दीजइ हथियार;
वांकउ देव तणउ विवहार, जीती कोई न जाई संसारि. २४०

---

२३१ पूछइ, इसुं मान, २३२ नहीं तु, २३३ भेऊं, २३४ नाखिउ, २३६ करा ति, २३८ खेलइउ

॥ दूहा ॥

तइ गढ पुठि ज दीध मूं हुउं, तुझ पूठि न देसि;
कीरति नारी वरि जि मइ, आज प्रमाण करेसि; २४१
मउड़उ वेगउ मरण छइ, सहुकिण नइ संसारि;
'भांडउ' कहइ राजा निसुणि, कलि माहि बोल ऊगारि; २४२
गढि गो ग्रहिय मरइं जिके, तियां रइ मोख दुवार;
अवसरि मरइ हमीरदे, नाम रहइ संसार; २४३
अवसरि जे नवि ओलखइ, नीभागीए नरेह;
'भांडउ' कहइ ते भीखिया, लहिसिइ नही वलेह; २४४
लोक सहु तेड़ी करी, पूछइ राउ चहुयाण;
हुं ठाकुर थे प्रजा थां,—वउलावुं किणि ठाणि; २४५
हमीरदे थारा अम्हे, सात पियां लगु लोक;
इणि वेला जे पुठि द्यां, जणणी जाया फोक; २४६
जाजा तुं घरि जाह, तु परदेसी प्राहुणउ;
म्हें रहीया गढ मांहि, गढ गाढउ मेल्हां नहीं; २४७
जाजउ कहइ ति जाउ, जे जाया तिह जण तणा;
अरथ विडाणा खाइं, साईं मेल्हइ सांकड़इ; २४८
जाजउ कहइ (ति) राजा निसुणि, अवसर जेम लहेसि;
तइं मरतइ गढ भाजवइ, कलि मांहि नाम करेसि; २४९

---

२४२ मरराउ श्रग्रइ, २४३ ग्रहि, कलिमांहि, २४५ प्रजथी,
२४६ लोक म्हे, थु

भाई भणी मइ भगतावीउ, तु महिमासाह हमीर;
देव सूत्र ईसउ हूवउ, वउलाऊ कहि मीर; २५०
ईण वचनि झांखा थई, बोलइ बेऊ मीर;
अनरथ अणहूतउ करी; जउ जाहं कहइ हमीर; २५१
म्हां दीधां जइ ऊगरइ, तउ तूं गढ ऊगारि;
मीर कहइ हम्मीर दे, अनरथ हुतउ निवारि; २५२
मनि मच्छर अधिकउ धरी, बोलइ राय हमीर;
डील वड़इ सुरिताण नइ, आपिसु ? बेउ मीर; २५३
महिमासाहि इसिउं कहइं, निसुणि राय हमीर;
धान जोवाड़ि कोठार नां, गढ राखां तउ मीर; २५४
कोठारी राय पूछियउ; केता धान कोठारि;
वणिठेइ वाणियइ देखालीया, ठाला लेई अंबार; २५५

(वस्तु)

राउ चिंतइ राउ चिंतइ मनह मझारि
गढ गाढउ पहड़ीयउ, घणउ द्रोह रणमलइ कीधउ
समउधान तूटउ तिहां, अति दुःख कोठारी दीधउ
वेगि वेगि जमहर करउ, कोई मालावउ वार
पटराणी राजा वीनवइ कुलनउ नामे उगारि २५६

॥ चउपई ॥

वीरमदे नइ राजा कहइ, तूं नीकलि, जिम वंसज रहइ;
वीरमदे कहइ सुणि वीर, तूं मेल्ही न जाऊं हमीर; २५७

२५६ वीनवउ

साची वात मानी चहुयाण, कुमर तेडाव्या तेणइ ठामि;
टीलउ काढि खड्ग दीधउ हाथि, रिणथंभोरि वडा हुजउ हाथ, २५८
वांभण नइ तुम्हि देज्यो दान, रखे महेसरी करउ प्रधान;
महेसरी ना वाढिज्यो कान, तुरकां ने देज्यो बहुमान; २५६
राय सिखावणि दीधी भली, तीयांरी माइ साथि मोकली;
तीह नइ घोड़ा दे रजपूत; दियइ बाप वली दुइ पूत; २६०
राय हमीर मीर नइ कहइ; हाथी मारि रखे कोई रहइ;
मेल्हइ मीर प्राण अति घाण, नव नव हाथी पाड़इ ठाण; २६१
सालिहोत्र सूधा तूषार, ते मारीजइ तेणइ वार;
घरि घरि जमहर लोके कीया, राऊल गुन बलइ छइ तिहां; २६२
जमहर रा माता थूंकला, राय अंतेउर लागा बला;
करी सनान पहिरीया चीर, उगटणे लहीया सरीर; २६३
सिरि सिंदूर सिथ तेडिया, सवा कोडि का टीका किया;
नयणे काजल सारी रेह, मुख तंबोल समाण्या तेह; २६४
काने कुंडल झलकइ तिया, सूरिज चंदरी ऊपम जीया;
बांहइ बांध्या बहरखा भला, सोवन चूड़ी खलकइ निला; २६५
आंगुलीयां मोहइ मूंदड़ी, सवा लाख री हीरे जड़ी;
कंठनि गोदर उरियर हार, पाइ नेउरि झण झण कार; २६६
सोलह सिंगार संपूरण कीया, नाचइ गावइ गाढी तीया;
आपण पणा संभालइ प्रिया, बेऊ पक्ष ऊआलइ प्रिया; २६७

---

२५८ ते थाव्या, २६० दइ, २६१ न, २६३ उगटले, २६४ सिधां तारोल, कीदा, २६७ प्रिया

देव तणी देवी हुइं जिसी, राय तणी अंतेउरि जिसी;
ते देखी देव खलभलइ, राय कुंवरी इसी परि वलइ; २६८
(रा) जाणे तिणि गढि पडिउ पुलउ, लोक सहू को लागउ वलउ;
अरथ भंडार संजति समुदाय, राछ पीछ वलइ तिणि ठाउ; २६६
सोना जड़ित वलइ पलाण, जीण साल हथियार लगाम;
पलंक ढोल कमखानइ पाट, चरु त्रंबालु कचोला त्राट; २७०
करणाली सोना रूपा तणी, गरथि भरीय वलइ अति घणी;
सुमखा कतीफा जुन पटकूल, सउड़ि तलाइ तणा अति पूर; २७१
एकवीस मूमिया वलइ आवासि, जाइ झाल लागी आकासि;
हणवंति जेम पजाली लंक, ते वीतक वीता रिणथंभि; २७२
जमहर करी पहूंतउ राउ, न को ऊगरिउ तिणि ठाउ;
उत्तम मध्यम [को] न लहइ पार, सवा लाख नउ हुवऊ संहार; २७३
गढ सगलउ मुकलावइ ताम, चिहु पोलि फिरि कीयउ प्रणाम;
पातिसाह नइ पूठि न देसि, चहुयाणाइ गढ वलि आणेसि; २७४
मुकलावइ देहुरा रा देव, कोठारे गयउ तिणि खेवि;
वावि सरोवर नगर विहार, मुकलावइ भंडार कोठार; २७५
ऊभउ रहि जोवइ कोठार, धान भरया दीसइ अंबार;
जाजउ वीरमदे वे मीर, गढ राखिस्या म मरि हमीर; २७६
राय कहइ बंधव सुणि वात, या कीसी बोली तइं घात;
अनरथ हुवउ घणउ तिणि ठामि, हिव रहि नइ करिस्यां पुण काम;२७७

२६६ लागइ वलइ, ति ठाईं, २७० लगाम, २७२ वलइ पवासि २७३ उगरउ, ठामि, २७६ ऊभउ, २७७. तूं,

॥ दूहा ॥

वीरमदे हम्मीरदे, मीर नइ महिमासाहि;
भाट नइ जाजउ प्राहुणो, ए रहिया गढ मांहि; २७८
जमहर करी छड्ड हुयउ, हमीरदे चहुयाण;
सवालाख संभरि धणी, घोड़इ दियइ पलाण; २७६
छत्रीसइ राजाकुली, ऊलगता निसि-दीस;
तिणि वेला एको नहीं, उवाढउ लेवहु ईस; २८०
हाथी घोड़ा घरि हुंता, उलगाणा रा लाख:
सात छत्र धरता तिहां; कोइ न साहइ वाग: २८१
नगर (लोक) मोह मेल्ही करी, घोडइ चढ्यउ हमीर:
कदि ही जुहार न आवतउ, पालउ पुलिइ ति वीर: २८२
बांधव पालउ देखि करि, गहवरीयो हम्मीर;
इणि घोड़इ कुण काम छइ, तिणि पालउ मुझ वीर: २८३
सइहथि घोड़उ मारि करि, पालउ चाल्यउ राउ:
पगि पाहण लागइ घणा, लोही वहइ प्रवाह: २८४
महिमासाह कांधइ करइ, अम्हारा साहिब हमीर:
वीरमदे वलतउ कहइ, यंधव वेलां (ह) मीर ! २८५
देव सहु मनि काल मुह, सूरिज प्रमुख ज केवि:
तीनइ त्रिभुवन डोलिया: राय हमीर दिगेवि: २८६
(ग) खाज्यो पिज्यो विलसज्यो; ज्यां दइ संपइ होइ:
मोह म करिज्यो लक्ष्मी तणउ, अजरामर नहि कोइ: २८७

---

२७६ हमीर २८० उलगता नसदीस, इस, २८३ हमीर, २८४ हमीर २८५, काल मुहा हुवा, २८७ नाहो

(ए) खाज्यो पीज्यो विलसज्यो; धनरउ लेज्यो लाह;
कवि 'भांडउ' असउ कहइ, देवा लांबी बाह: २८८

॥ चउपई ॥

भाट नइ राय दीधउ काम, दाध दिवाड़इ रूड़इ ठामि:
घोर घलावे बेऊ मीर, इसउ आदेश दियइ हमीर: २८९

'जाजउ' 'वीरमदे' हसमस्या, पिहिली किलउ अम्हे भालिस्या;
हाथ जोड़ि वे बोलइ मीर, अवसर हमारउ आज हमीर: २९०
म्हांथी दुख सहीयउ अति घणउ, नाक न नाम्यउ पणि अपणउ:
पहिला जे तुम्ह आगलि मरां, थारा मुंग उसांकल करां: २९१
बेऊ मीर भिड़इ अति भला, मारइ कटक घणा एकला;
[† चोटी साहइ भला अइयार, छरी स्यउं खंड करइ दसवार]
भिड़इ 'देवड़उ जाजउ' भलउ, वीरमदे अति कीधउ किलउ; २९२
भाट कहइ सुणउ महाराज, कुण नइ प्राण दिखालउ आज;
राय पवाड़उ कीयउ भलऊ, आपण ही साखउ जै गलऊ; २९३

॥ दोहा ॥

संवत तेरह इकहत्तरइ, जेठ आठमि सनिवार;
राउ मूवउ गढ पालट्यउ, जाणइ इणि संसारि: २९४

---

२९१ थे † यह पंक्ति उदयपुर वाली प्रति में नहीं है।

॥ चउपई ॥

धरा पीठ पड़ियउ 'हमीर', ऊभउ भाट बोलइ जई मीरः
'जाजउ' सिर सिर ऊपरि कीयउ, जाणे ईश्वर तिणि पूजीयउः २९५
'वीरमदे' रउ माथउ देठि, बेउ मीर पड्या पग हेठिः
देवलोकि जइ बइठउ राउ, कुडि रखवालइ भाटज तेऊः २९६
राति विहाणी हुवउ परभात, पातिसाह तिह मेल्हइ खाटः
हमीरदे पड्यउ छइ जिहां, पालउ ऊपरि आव्यउ तिहांः २९७
सीगणिगुण तोडइ सुरताण, आलम साह न खाई (न) ग्वाणः
'रिणमल' तीरइ पूछइ पतिसाह, तुम्हारा साहिब कुण इह मांहिः २९८
घणउ द्रोह आगइ तिणि कियउ, खाते पीते आकज लीयउः
नदि माता हूया जाचंध, पगम्यउ राऊ दिखालइ अंधः २९९
ए मोटउ प्रथवीपति राव, भली परि भूभूयउ तिणि ठाईः
संभरियाल सरीसउ वली, कोई न हीदू इणइ कलीः ३००
पतिसाह कुमखूयउ अति घणउ, सइ हाथि आप दियइ खापणउः
'विरद' नाल्ह [भाट] बोलइ तिणिठाइ, पतिसाह नइ दीधी ग्राहिः ३०१
बोलइ भाट करइ कइवार, बोलइ विरद अतिहि अपारः
धन जननी हमीर दे, मरणाइ वि जइ पंजरो मूरोः ३०२

॥ दूहा ॥

तु आलम अल्लाह तु, तू अलख्ख करतारः
वाच संभालि न आपणी, उचित आपि न्युंदकारः ३०३

---

२९६ खोट, २९९ मनि, ३०० पति, इणइ कलि, ३०१ ठामि ३०२ भणा, भण

सिरि सिरि ऊपरि देखिकरि, पूछिउ आलम साहि;
भाट कहइ जि कुण आदमी, ए हुआ कलि मांहि: ३०४
रिणथंभवर जे जलहरी, राई हमीर बइठउ ईस;
यइजलदे 'जाजउ देवड़उ', पूज्यउ साहिब सीस: ३०५

(य)उ वर वीरमदे वली; बंधव राय हमीर:
जु 'महिमासाह' 'गाभरु,' थांरा घर का मीर: ३०६
इय चहुयाण 'हमीरदे', मरणाई रत्नपाल:
'अलावदीन' तुझ आगलइ, मोटउ मूउ भूपाल; ३०७
मान न मेल्यउ आपणउ, नमी न दीधउ केम;
नाम हुयउ अविचल मही, चंद सूर दुय जाम: ३०८
इन्द्रासणि 'हम्मीरदे', जोवइ 'नाल्ह' की वाट;
उचित देई बुलावि नइ, करी समाध्यउ भाट: ३०९
'नाल्ह' कहइ सुरताण नइं, थापणि दइ मुझ आज:
भाट नइ मुकलावि परहउ, हमीरदे कइ राजि: ३१०

॥ चउपई ॥

पातिसाह 'नाल्ह' नउ कहइ, मांगि जि कांई थारइ मनि गमइ:
गढ अरथ देस भंडार, मांगि मांगि म म लाइसि वार: ३११
अरथ गरथ देस भंडार न काम, माथि किंपि न आवइ मामि:
जइ तूंठउ आपइ ग्रंदकार, द्रोहांति नइ परहा मारि: ३१२

---

३० ५इस, ३०८ थई, ३०९ हमीरदे, ३११ म ~ म म, ३१२ साथी न,

स्वामीद्रोह करइ मित्रद्रोह, विश्वासघात करइ नर सोई:
थापणि राखइ प्रकासइ गुझ, सो नर मारीजइ अबूझ: ३१३
जे हुता मोटा परधान; बूंदी सरिखा भोगवता ग्राम;
मइ हथि चीड़उ लहता वेउ, पगल्यउं राय दिखाल्यउ तेउ; ३१४
वाण्या हाथि हुंता कोठार, राय हमीर न लहतउ सार:
दाम किराड़ कूड कीयउ घणउ, धान नाखिउ कोठारा तणउ; ३१५
रणमल, रायपाल, वाण्या तणी, खाल कढाइ अंगुठा थकी;
भाट समाध्यउ गाढउ होई, कलि मांहि पाप करइ नवि कोई; ३१६
जइ तूठउ (तउ) आपइ तउ आपि, भाट नइ वलि दाइ निरवाप;
पातिसाह विमासइ आप, रिणमल रिउपाल मार्या नहीं को पाप; ३१७
जयड़र लहता एता मास, तीया मांहि कुण कीधा काम;
पातिसाह दीधउ फुरमाण, खाल कढावउ त्रिहु नी तिणि ठाम; ३१८
पापी नइ आपडीयउ पाप, कीधउ समाध्यो गाढउ भाट;
पातिसाह उसंकल हूयउ, हणी भाट सुरगापुरि गयउ: ३१९
रजपूता ने दीधा दाघ, घोर घलाव्या (बेऊ) मीर अदाघ;
गंगामांहि प्रवाहउ राउ, घणउ भलउ कीधउ पतिसाहि; ३२०
धनुधीता चहुयाण तणउ, मात्र पखूय उजाल्यउ घणउ;
धनु धनु जीवी राय हमीर, जिणि सरणाई राख्या बे मीर: ३२१
मोटउ मीर महिम्मासाह, जीह पूठि आव्यउ पतिसाह;
जाजा वीरमदे रा नाम, जग ऊपरि हुआ तिहरा नाम: ३२२

३१३ स्वामिद्रोह, विश्वासी ३१४ म > सइ ३१६ गयो, ३२२ महिमासाह

भाट घणउ सनमान्यउ ताम, स्वामि काज कीधउ अभिराम ;
वयर वाल्यो हमीरदे तणउ, कलि माहि नाम राख्यउ आपणउ; ३२३

रामायण महाभारथ जिसउ, हम्मीरायण तीजउ तिसउ;
पढइ गुणइ संभलइ पुराण, तियां पुरषां हुइ गंग सनान; ३२४

दूहा गाहा वस्त चऊपई, तिनिसइ इकवीसा हुई;
पनरह सइ अठतीसइ सही, काती सुदि सातम सोम दिनि कही; ३२५

सकल लोक राजा रंजनी, कलिजुगि कथा नवी नीपनी;
भणतां दुख दालिद सहु टलइ, 'भांडउ' कहइ मो अफलां फलइ ३२६

संवत्—१६३६, वरषे भादवा वदि १० रविवारे
लिखितं विजकीरति मलधार गच्छे ।

॥ राय हमीरदे चौपई पूरी छै ॥

---

३२४ हमीरायण वीतउ, गंगा, ३२५ चउपई ।

परिशिष्ट (१)

प्राकृत-पैंगलम् में हम्मीर सम्बन्धी पद्य

[१]

गाहिणी :—

मुंचहि सुन्दरि पाअं अप्पहि हसिऊण सुमुहि खग्गं मे।

कप्पिअ मेच्छशरीरं पच्छइ वअणाइं तुम्ह धुअ हम्मीरो ॥ ७१ ॥

रण यात्रा के लिए उद्यत हम्मीर अपनी पत्नी से कह रहा है —

हे सुन्दरि, पांव छोड़ दो, हे सुमुखि हंसकर मेरे लिए (मुझे) खड्ग दो। म्लेच्छों के शरीर को काटकर हम्मीर निःसन्देह तुम्हारे मुख के दर्शन करेगा।

[२]

रोला :—

पअभरु दरमरु धरणि तरणिरह धुल्लिअ झंपिअ,

कमठ पिट्ठ टरपरिअ मेरु मंदर सिर कंपिअ।

कोह चलिअ हम्मीर वीर गअजूह संजुत्ते,

किअउ कट्ठ हाकंद मुच्छि मेच्छह के पुत्ते ॥ ८२ ॥

पृथ्वी (सेना के) पैर के बोझ से दबा (दल) दी गई; सूर्य का रथ धूल से ढंक (झंप) गया; कमठ की पीठ तड़क गई, सुमेरु तथा मंदराचल की चोटियां कांप उठीं। वीर हम्मीर हाथियों की

सेना से सुसज्जित (संयुक्त) होकर क्रोध से [रणयात्रा के लिए] चल पड़ा। म्लेच्छों के पुत्रों ने बड़े कष्ट के साथ हाहाकार किया तथा वे मूर्छित हो गये।

[३]

छप्पय :—

पिधउ दिढ सण्णाह वाह उप्पर पक्खर दइ।
बंधु समदि रण धसउ सामि हम्मीर वअण लइ॥
उड्डउ णहपह भमउ खग्ग रिउ सीसहि झल्लउ।
पक्खर पक्खर ठल्लि पल्लि पव्वअ अप्फालउ॥
हम्मीर कज्जु जज्जल भणइ कोहाणल मह मइ जलउ।
सुलताण सीस करवाल दइ तज्जि कलेवर दिअ चलउ॥१०६॥

वाहनों के ऊपर पक्खर देकर (डालकर) मैं दृढ़ सन्नाह पहनूं, स्वामी हम्मीर के वचनों को लेकर बांधवों से भेंटकर युद्ध में धसूं; आकाश में उड़कर घूमूं, शत्रु के सिर पर तलवार जड़ दूं; हम्मीर के लिये मैं क्रोधाग्नि में जल रहा हूं। सुलतान के सिरपर तलवार मारकर अपने शरीर को छोड़कर मैं स्वर्ग जाऊं।

१ :—यह पद्य आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के मतानुसार शार्ङ्गधर के 'हम्मीर रासो' का है, जो अनुपलब्ध है। राहुलजी इसे किसी जज्जल कवि की कविता मानते हैं। पर वास्तव में स्वामीभक्त जाजा और जज्जल एक ही मालूम देता है, जिसकी उक्ति का कवि ने वर्णन किया है। देखिये :—हिन्दी साहित्य का इतिहास पृष्ठ २५, हिन्दी काव्य धारा पृष्ठ ४५२।

(४)

कुंडलिया :—

ढाल्ला मारिअ ढिल्लि महं मुच्छिअ मेच्छ सरीर।
पुर जज्जला मंतिवर चलिअ वीर हम्मीर॥

चालिअ वीर हम्मीर पाअभर मेइणि कंपइ।
दिग मग णह अंधार धूलि सूरह रह झंपइ।

दिग मग णह अंधार आण खुरसाणक आल्ला।
दरमरि दमसि विपक्ख मारु, ढिल्ली महं ढाल्ला॥ १४७॥

दिल्ली में (जाकर) वीर हमीर ने रणदुंदुभि (युद्ध का ढोल) बजाया, जिसे सुनकर म्लेच्छों के शरीर मूर्च्छित हो गये। जज्जल मन्त्रिवर को आगे (कर) वीर हम्मीर विजय के लिये चला। उसके चलने पर (सेना के) पैर के बोझ से पृथ्वी काँपने लगी। (काँपती है), दिशाओं के मार्ग में, आकाश में अंधेरा हो गया धूल ने सूर्य के रथ को ढंक दिया। दिशाओं में, आकाश में अंधेरा हो गया तथा खुरासान देश के ओल्ला लोग (पकड़ कर) ले आये गये। हे हम्मीर, तुम विपक्ष का दल मल कर दमन करते हो; तुम्हारा ढोल दिल्ली में बजाया गया।

[५]

भंजिअ मलअ चोलवइ णिवलिअ गंजिअ गुज्जरा,
मालवराअ मलअगिरि लुक्किअ परिहरि कुंजरा।

खुरासाण खुहिअ रण महं लंघिअ मुहिअ साअरा ;
हम्मीर चलिअ हारव पलिअ रिउगणह् काअरा ॥ १५१ ॥

मलय का राजा भग गया, चोलपति (युद्धस्थल से) लौट गया, गुर्जरों का मान मर्दन हो गया, मालवराज हाथियों को छोड़कर मलयगिरि में जा छिपा। खुरासाण (यवन राजा) क्षुब्ध होकर युद्ध में मूर्च्छित हो गया तथा समुद्र को लांघ गया (समुद्र के पार भाग गया)। हम्मीर के (युद्ध यात्रा के लिये) चलने पर कातर शत्रुओं में हाहाकार होने लगा।

[६]

लीलावती :—

घर लग्गइ अग्गि जलइ धह धह कइ दिग मग णह पह अणल भरे,
सब दीस पसरि पाइक्क लुलइ धणि थणहर जहण दिआव करे।
भअ लुक्किअ थक्किअ वइरि तरुणि जण भइरव भेरिअ सद्द पले,
महिलोट्टइ पट्टइ रिउसिर टुट्टइ जक्खण वीर हमीर चले ॥ १६० ॥

जिस समय वीर हमीर युद्ध यात्रा के लिये रवाना हुआ है (चला है)उस समय (शत्रु राजाओं के) घरों में आग लग गई है, वह धू—धू करके जलती है तथा दिशाओं का मार्ग और आकाशपथ आग से भर गया है ; उसकी पदाति सेना सब ओर फैल गई है तथा उसके डर से भगती (लोटती) धनियाँ (रिपु रमणियों - धन्याओं) का स्तनभार जघन को टुकड़े - टुकड़े कर रहे हैं; वैरियों की तरुणियाँ भय से [वन में घूमती] थक कर छिप गई हैं; भेरी का

भैरव शब्द (सुनाई) पड़ रहा है, (शत्रु राजा भी) पृथ्वी पर गिरते हैं, सिर को पीटते हैं तथा उनके सिर टूट रहे हैं।

[७]

जलहरण :—

खुर खुर खुदि खुदि महि घघर रव,
कलइ णणगिदि करि तुरअ चले,
टटटगिदि पलइ टपु धसइ धरणि।
धर चकमक कर बहु दिसि चमले॥
चलु दमकि — दमकि दलु चल पइकवलु,
घुलकि - घुलकि करिवर ललिआ :
वद मणुसअल करइ विपक्ख हिअअ।
सल हमिर बीर जब रण चलिआ॥२०४॥

जब वीर हमीर रण की ओर चला, तो खुरों से पृथ्वी को खोद-खोद कर ण ण ण इस प्रकार शब्द करते, घघंररव करके घोड़े चल पड़े; ट ट ट इस प्रकार शब्द करती घोड़ों की टापें पृथ्वी पर गिरती हैं, उसके आघात से पृथ्वी धंसती है, तथा घोड़ों के चंवर बहुतसी दिशाओं में चकमक करते हैं। [जाज्वल्यमान हो रहे हैं]; सेना दमक-दमक कर चल रही है, पैदल [चल रहे हैं], घुलक-घुलक करते, (झूमते) हाथी हिल रहे हैं, (चल रहे हैं), वीर हमीर जो श्रेष्ठ मनुष्यों में है, विपक्षों के हृदय में शल्य चुभो रहा है (पीड़ा उत्पन्न कर रहा है)।

[८]

वर्णवृत्तम् :—

> जहा भूत वेताल णच्चत गावंत खाए कबंधा,
> सिआ फारफक्कारहक्का रवंता फुले कण्णरंधा ;
> कआ टुट्ट फुट्टेइ मंथा कबंधा णचंता हसंता ।
> तहा वीर हमीर संगाम मज्झे तुलंता जुझंता ॥ १८३ ॥

जहां भूत वेताल नाचते हैं, गाते हैं, कबंधों को खाते हैं, शृगालियाँ अत्यधिक शब्द करती चिल्लाती है, तथा उनके चिल्लाने से कानों के छिद्र फटने लगते हैं, काया टूटती है, मस्तक फूटते हैं कबंध नाचते हैं और हँसते हैं,—वहां वीर हम्मीर संग्राम में तेजी से युद्ध करते हैं।

---

१ क्रीड़ाचक (कीडाचंड छन्द उदाहरण

परिशिष्ट (२)

-: कवित्त :-

रिणथंभोर रै रांणै हमीर हठालै रा

[१]

कीधा गुनह अपार, छोड दिल्ली तैं आए
मे छीना नवलाख, साह मारण फुरमाए
तुरक वसैं तैं पोल, दंड तहां हिंदू दर्व
आंथ न करो समरत्थ, मूक सरणागत रव्वं
ऊगयण सूर विच आथवण, सुणो राव मांसो भयो
महिमा मुगल इम उच्चरैं, हूं तो सरणं आवीयो।

[२]

जां लग गढ रिणथंभ, जांम जामो वड गूजर
जांम चंधव वीरम्म, तांम वलि रग्गां अनमर
मोमूंसाह मुगल, आच मो सरण पयट्टो
दल मेलै पतिसाह दुगम रिणथंभरि दिट्ठो
घट दांम दियां सिर ऊचरां, मांगै साह म दियां मुक्क
हमीर कहै मुगल सुणो, मोन न अप्पो काइ मुक्क

[३]

मांगै आलम साह कुंवरि वीमाह दिरीजै
धारू वारू पात सु पण महिमांन करीजै
तेरै कोडि दरव दियो असी तोखारह
आठ हसत अप्पिहो, पांण रखो अणपारह
सगि काय केल पकी अछै, रिणथंभरि गढ़ राज करि
कवि मह्ल हमीर सरिसो कहै, तूं कांय मरै पतंग परि

[४]

मूझ देह गंजणो साह हुसेन न आऊं
दे वंधव अलीखांन करै वसि वास कटाऊं
वोलण सहित सनेह एह वेनती कीजै
मांगै रांण हमीर नार मरहठी दीजै
पतिसाह पंच अवरा मिलौ, सेव देव मनहुं सवै
सुरतांन हुवै सैंभर घणी, तौ हूं दिल्ली चकव्वै

[५]

दस लख अस पखरेत, तूझ घर लख स सूझै
पंच लाख पायक साह सूं किण पर जूझै
चवदैसै मैमंत तूझ घर आठ स गैमर
हो हमीर चकव्वै किसा अै आहा टंवर
'कवि माल' पयंपै वांह वल सायर···त धत ट्ठ्वही
सुरतांण सीचाणां तुम चिडा, कहि हमीर किथ उड्डही

[६]

अरक गयण नह उगै, साह जो सीस नयाऊं
हरिहर वंच वीसरै सुकर जो डंड महाऊं
दीयण धीह जव दखूं, तवह जाय जीह तड़क्कं
चंद सूं ... ...
... ... साह मोमू पणि मूं सरणि
न मिलूं आय पतिसाह नूं मो मिलियां हुवै धरणि

[७]

दोय राह दरगाह रहै पतिसाह हुकम्मैं
सात दीप देसोत डंड काले सिर नम्मैं
चूको सरै अपार वार अहंकारे वग्गो
नरवै कुणनरपति जिको तिण पाय न लग्गैं
अलावदीन जग दुम्मणो, किसा हमीर डंमर करै
कमण काट डूंगर कमण उठै जाय घट ऊपरै

[८]

देवागिर म म जांण, नहीं ओ जादव नरवै
चत्रकोट म म जांण, परन पालक न होवै
गुजरात हि म म जांण, कोहि फूटै करिमहियां
मंडोवरि म म जांण, हेलि मातहि थीमहियां
अलावदीन हमीर हूं नित किमाड़ आडो नरो
रिणथंभगढ रोहीजतै, पाईस अर्थ पटंतरो

[६]

मिलै रिणमल कांगले सुतो पतिसाह सरसूं
चलै मिलै वीरम्म भेद आपवै घरसूं
छाहडदे छतिपति हुवो तोसूं अमेलो
प्रीथीराज परवाण कियो, पतिसाहां भेलो
की रंड करै कवि 'मल्ल' कहै जुधूध भरोसो जांहसूं
हमीर भीच थारा हूमै सो मिलिया पतिसाह सूं

[१०]

मिलो पीथल थिर चित्तो परतापमी पण मिलो
... ...
... ... लोप कुलवटची लजा
चंद सुर पण मिलो मिलो के ठाकुर दूजा;
करतार मिलो वेध्या मिलो इंद मिलै वलि को वियो
अलावदीन हूं न मिलूं कदि कदि मर हेमर हियो

[११]

खड़ि तिलंग खड़ि वंग खड़ै खग्गो खग्गरांणह
खड़ै ढोरसामंद खड़ै थट्टो मुलतांणह
खड़ै गोड़ गज्जणों देस पूरब तैं आवै
चोहवांण चकवै मेछ दिस सीस न नावै
सुरताण खड़ै दिल्ली सहित अलावदीन अंदर अड़ै
हमीर रांण विकमैं हूमैं निकर जाण तंडय पड़ै

[१२]

रंग पेखे हमीर पात नाचै राय अंगण
ज्युं ज्यु पे रणमणें, साह अतराज हुवै सुण
कीध माफ तकसीर दीध ले बीड़ो सूकर
देवगां पखरेत ताम कोतक जोवै नर
भुज ग्रहे बांण अगरोस भरि उमैकोसा अंयरि अड़ै
आहणी उडांणं संघ सूं ताल देत खड़हड़ पड़ै

[१३]

जब धारू धर पड़ीय राव पेखणो म भग्गो
छभा सोह ओदकी राय चमम फो स लग्गो
तब थूको तंबोल राय भोजन न किध्धो
मोमूंसाह मुगल्ल कोप करि बीड़ो लिध्धो
कोमंड ग्रहे सर पांण करि गढ़ ओ द्रायण गडड़ियो
मोकियो साह अलावदीन छत्र छेद धरती पड़ो

[१४]

एक नाल करि भलै मांणस रै मेली
आठ लाख औसदी भेलै करि पूरण भेली
भैंसा पांच हजार दिड कर आहुत दिध्धी
सामेरी कथ नालि कोप कर पूजा किध्धी
अलावदीन एम उचरै जो यह मीर जिन हथियां
छूटत नाल देवगमे अरप थंभ छेदए थियो

[१५]

जेसा कुञ्जर रवद मोड मां मांणकह मंडै,
जेसो कुल कुंजर रवद एक एको नह छंडै;
जेसो सीस सिर नमो सीस ते छत्र परग्गे,
अवर राव राईयां मांहि तां मोटो दिग्गे;
हमीर रांण गाढो क्रिपण दिये न दी जिम देवगिरि।
पाथर वढति घासंति किरि पडै टाल सुरतांण सिरि।

॥ अथ दूहा ॥

रजह पलट्टै दिन वलै, दिनह पलट्टै जांहि;
वड्डां मिनखां वोलियों, वचन पलट्टै नांहि ॥१॥
तू परदेसी पांहुणो, जाजा सुणिरि जाह;
गढि गरवातन ऊतरै,(ते)गढ करसां गजगाह॥२॥
जो जायो तंसै जणै, जाजो कहै सु जाहि,
रिणथंभ नूं रूड़ो करै, त्रित देसां गढिसांहि ॥३॥

॥ कवित्त ॥

[१६]

ऊंचो गाऊ एक ताह हमीर मरहरियो,
कणै थंभ ओपियो चंद तारां परवरियो;
सांमभ्रम निज भ्रम भ्रम हिंदुवो संभारै,
करण नांम मनि करै जीह श्रीराम संभारै;
हमीर छभा प्रणांम करि अवर जायरे स्वग अढै,
अलावदीन दल ऊपरी पतंग जांण जाम्हो पढ़ै।

[१७]

सकै सेन सूरमां छणे रज अंबर छायो,
धोरी धर धसमसै सेस पयाल न मायो:
गोरी दल गहमह मिले अमंगल मेछां दल,
सुर रथ संवाहि रहे अचरज्ज अणंकल;
हमीर चाडि रिणथंभ छलि सुत वैजल असमर कसै।
जाभो जडाग तोडै तुरक हड़हड़ तिम संकर हसै॥

[१८]

असि असंख असमर असंख संख सीतट न क्यौ जल,
अनि अनंत भड़ भागवंत जिसा जैसिंघ अणंकल:
रहेसि धेन घन धिसेह चिधियां सूरातण,
जांमवंत जुद्धवंत मन्छ कवि ओद्ध महा घण;
... ...
......वह दीह पयंपे लाछि घह मपड़ो......

[१९]

करे कोट जुहार सार गहीयां साऊजल,
चीध मुख हलकार वहे घपधार घीजूजल;
मिले लोह सूरमां हुवा भांड़ लथां वत्थां
वाह हथ वाखांण जिसी भारथ पारथी:
जे धंग तणो चंद नांम जहि साका धंध मभीर रे।
पड खेत मीर लेखे पग्गा रहे हाय हमीर रे॥

[२०]

हमीरह अगगले मास सामण तिथ पांचम,
धायरह घार मुर मड़ चढे तुरंगम:

छूटै तीर पनाग मारि मन कलह न रखै,
चहवांण झूझ गह भरै सोह सूरातन दखै;
रिणमल मिलै दलय घटै सुकर थंभ ओरस घटै।
चिख चिख लोह जामो चडै पडै राव गढ पालटै॥

[२१]

वरिस दुवादस समर मंडे हिंदुवां मूगलां,
वहै रूधिर वाहला ढलै नर कुंजर ढलां;
पूगी आस पलचरां हंस ले चली अपच्छर,
हार करण कज होस सीम ले वलियो संकर;
हमीर सरग दिस हल्लियो कलि ऊपर नामो करै।
इग्यार लाख अलावदीन तैंमे एक लाख दल ऊवरै॥

संवत् १७६८, मिती आसाढ वदि १२ लिखतं मूंधड़ा राजरूप देवगोक मध्ये।

॥ इति हमीरा कवित्त॥

परिशिष्ट (३)

मैथिल कवि पंडित श्रीविद्यापति ठाकुर रचित "पुरुष परीक्षा" के अन्तर्गत

श्री दयावीर कथा

—:※:—

दयालुः पुरुषः श्रेष्ठः सर्वजन्तूपकारकः।
तस्य कीर्त्तन मात्रेण कल्याणमुपपद्यते ॥१॥

अस्ति कालिन्दी तीरे योगिनीपुरं नाम नगरम्। तत्र च निज-भुजविजित निखिल भूमण्डलः सकला राति प्रलय धूमकेतुरनेक करि तुरग पदाति समेतः संकलित जनपदो निर्जित विपक्ष नरपति सीमन्तिनी सहस्रनयन जल कल्पिता पार पारावरो रक्षित दीनो-ऽदीनो नाम यवन राजो बभूव। स चैकदा केनापि निमित्तेन महिम-साहि नाम्ने सेनान्ये चुकोप। स च सेनानीस्तं प्रभुं प्रकुपितं प्राण ग्राहकश्च ज्ञात्वा चिन्तयामास। नायमपो राजा विश्वसनीयो न भवति। तदिदानीं यावदनिरुद्धोऽस्मि तावत् क्वापिगत्वा निज प्राण रक्षां करोमीति परामृश्य सपरिवारः पलायितः। पलाय-मानोऽप्यचिन्तयत्। सपरिवारस्य दुरगमन मशक्यं परिवारं परि-त्यज्य पलायन मपि नोचितम्। यतः :—,

जीवनार्थं कुलं त्यक्त्वा, योऽति दूरतरं वृजेत्।
लोकान्तर गतस्येव, किं तस्य जीवितेन वै ॥२॥

तदिदैव दयावीरं हम्मीरदेवं समाश्रित्य तिष्ठामीति परामृश्य स यवनो महिमसाहि हम्मीरदेव मुपागम्याह। महिमसाहिरुवाच। देव, विनाऽपराधं हन्तुमुद्यतस्य स्वामिनस्त्रासेनाहं त्वां शरणमागतोऽस्मि। यदि मां रक्षितुं शक्नोपि तर्हि विश्वासं देहि। न चेदितोऽप्यन्यत्र गच्छामि। राजोवाच। मम शरणागतं त्वां यमोऽप मयि जीवति पराभवितुं न शक्नोति। तदभयं तिष्ठ। ततस्तस्य राज्ञो वचनेन स यवनस्तस्मिन् रणस्तम्भनाम्नि दुर्गे निश्शंकमुवास। क्रमेण तमदीनराजस्तत्रावस्थितं विदित्वा परम सामर्पः करि तुरग पदातिपदाघातैर्धरित्रीं चालयन् कोलाहलैर्दिशो मुखरयन् कियद्भिरपि वासरैः लंघित वर्त्मादुर्गद्वार मागत्य शरासारैः प्रलय घनवर्षं दर्शयामास। हम्मीरदेवोऽपि परिखा गम्भीर चतुर्मेखलं कुन्तदन्तुरित प्राकार शेखरं पताका प्रबोधित द्वारश्रियं दुर्गं कृत्वा ज्याघात कर्णकटुकै र्घोणैर्गगन मन्धीकृतवान्। प्रथम युद्धान्तरं अदीनराजेन हम्मीरदेवम्प्रति दूतः प्रहितः। दूत उवाच। राजन् हम्मीरदेव, श्रीमान् अदीनराजस्त्वामादिशति यन्ममापथ्य कारिणं महिमसाहिं परित्यज्य देहि। यद्येनं न ददासि तदा श्वस्तने प्रभाते तव दुर्गं सुराघातैश्चूर्णवशेषं कृत्वामहिमसाहिना सह त्वामन्तक पुरं नेष्यामि। हम्मीरदेव उवाच। रे दूत, त्वमवध्योऽसि ततः किं करवाणि। अस्योत्तरं तव स्वामिने खड्गधाराभिरेव दास्यामि न वचोभिः। ममशरणागतं यमोऽपि वीक्षितुं न शक्नोति किम्पुनरदीन

राजः। ततोनिर्मित्सते दूते गते सति अदीनराजो युद्धसम्बद्धरोषो बभूव। एवमुभयोरपि बलयोर्युद्धे प्रवर्त्तमाने त्रीणि वर्षाणि यावत् प्रत्यहं सम्मुखाः पराङ्मुखा प्रहारिणः पराभूताः हन्तारो हताश्च परस्परं योधा बभूवुः। पश्चादर्द्धावशिष्ट सुभटे अदीन सैन्ये दुर्गं ग्रहीतुमशक्ये च अदीनराजः परावृत्य निजनगर गमनाकाङ्क्षी बभूव। तंच भग्नोद्यमं दृष्ट्वा रायमल्ल रामपाल नामानौ हम्मीरदेवस्य द्वौ सचिवौ दुष्टावदीन राजमागत्य मिलितौ। तावूचतुः। अदीनराज, भवता क्वापि न गन्तव्यम्। दुर्गे दुर्भिक्ष मापतितम्। आवां दुर्गस्य मर्मज्ञौ स्वः परज्ञौ वा दुर्गं ग्राहयिष्यावः। ततस्तौ दुष्ट सचिवौ पुरस्कृत्य अदीनराजेन दुर्गद्वाराण्यवरुद्धानि। तथा संकटं दृष्ट्वा हम्मीरदेवः स्वसैनिकान प्रत्युवाच। रे रे जाजमदेव प्रभृतयो योधाः, परिमितबलोऽप्यहं शरणागत करुणया प्रभूत बलेनाप्य दीनराजेन समं यात्स्यामि। एतत्र नीतिविरोगगम्यतं कर्म। नता यूयं सर्वे दुर्गाद् बहिर्भूय स्थानान्तरं गच्छत। ते ऊचुः। देव, भवादिरपराधी राजा शरणागतस्य करुणया संग्रामे मरण मंगीकुरुते। वयं भवद्राजीव्यभुजः कथमिदानीं भवन्तं स्वामिनं परित्यज्य कापुरुषस्य मनुसरामः। किंच श्वस्तनप्रभाते देवस्य शत्रुं हत्वा प्रभोर्मनोरथं साधयिष्यामः। यवनस्त्वयं वराकः प्रहीयताम्। तेन रक्षणीय रक्षा संभवति यतस्तद्दुरशानिमित्तकोऽयमारम्भः। यवन उवाच। देव किमयं मनस्य विदेशिनो मत्कार्यं स्वपुत्र कलत्रं स्वकीय राज्यं विनाशयिष्यति। ततो मां त्यज देहि। राजोवाच। यवन, मामैवं ब्रूहि। किंच यदि किंचिन्मन्यसे निर्भयस्थानं मद्

त्वां प्रापयामि। यवन उवाच। राजन्, मामेवं ब्रूहि। सर्वेभ्यः प्रथमं मयैव विपक्षशिरसि खड्गप्रहारः कर्त्तव्यः। राजोवाच स्त्रियः परं बहिः क्रियन्ताम्। स्त्रियःऊचुः। कथं स्वामी शरणागत-रक्षणार्थं संग्राम मंगीकृत्य स्वर्गयात्रा महोत्सवे प्रवृत्तोऽस्मान् बहिः कर्त्तुमिच्छति। कथं प्राणपतेर्विना भूतले स्थास्यामः। यतः—

मा जीवन्तु स्त्रियोऽनाथा, वृक्षेण च विना लताः।
साध्वीनां जगतिप्राणाः पतिप्राणानुगामिनः ॥३॥

ततो वयमेव वीरस्त्री जनोचितं हुताशन प्रवेश माचरिष्यामः। एवम्;—

भटैः रंगीकृतं युद्धं, स्त्रीभिरिष्टो हुताशनः।
राज्ञो हम्मीरदेवस्य, परार्थं जीवमुज्झतः ॥ ४ ॥

ततः प्रभाते युद्धे वर्त्तमाने हम्मीरदेव स्तुरगारूढः कृत सन्नाहो निज सुभट सार्थ सहितः पराक्रमं कुर्वाणो दुर्गान्निस्सृत्य खड्गधारा-प्रहारै विपक्षवाजिनः पातयन् कुञ्जरान् घातयन् रथान् निपातयन् कबंधान् नर्त्तयन् रुधिरधारा प्रवाहेणमेदिनीमलंकुर्वन शरशक-लित सर्वाङ्गस्तुरगपृष्ठे त्यक्तप्राणः सन्मुख; संग्रामभूमौ निपपात सूर्यमण्डल भेदीच बभूव। तथाहि:—

ते प्रसादा निरुपमगुणास्ताः प्रसन्नास्तरुण्यो,
राज्यं तच्च द्रविण बहुलं ते गजास्ते तुरङ्गाः।
त्यक्तुं यत्र प्रभवति नरः किञ्चिदेकं परार्थे,
सर्वं त्यक्त्वा समिति पतितो हन्त हम्मीरदेवः ॥५॥

॥ इति पुरुषपरीक्षायां दयावीर कथा ॥

॥ श्री दयावीर कथा ॥

—:०:—

(हिन्दी)

कालिन्दी [यमुना] के किनारे योगिनीपुर नामक नगर है। यहां अपने बाहुबल से सारे भूमण्डल को जीतने वाला, शत्रुओं के लिये प्रलय के धूमकेतु के समान, अनेक हाथी, घोड़े तथा पैदल सेना वाला, सभी प्रतिपक्षी राजाओं की रमणियों के नयनों में अश्रु समुद्र लहरा देनेवाला, दीनों का रक्षक अदीन नामक यवनराज हुआ। एक बार किसी कारणवश वह अपने एक सेनानी महिमसाह पर क्रुद्ध हो गया। सेनानी ने बादशाह को क्रुद्ध तथा प्राणों का ग्राहक जान विचार किया, कि "क्रोधी राजा का विश्वास न करना चाहिये।" अतः जबतक मैं स्वतंत्र हूं (गिरफ्तार न कर लिया जाऊं) तब तक कहीं जाकर अपनी प्राणरक्षा करनी चाहिये। यह विचार वह सपरिवार भाग गया। भागते भागते उसने सोचा, कि परिवार के साथ मैं बहुत दूर तो नहीं निकल सकूंगा और परिवारको छोड़कर भागा भी नहीं जासकता क्योंकि— अपने ही जीवन के लिये कुल को छोड़ जो बहुत दूर चला जाता है, उसके जीवन का उपयोग ही क्या ?" सो यहाँ दयावीर श्री हम्मीरदेव की शरण में जाना चाहिये। यों विचार वह यवन महिमसाहि हम्मीरदेव के पास जाकर बोला—देव, बिना अपराध

ही मेरा स्वामी मुझे मार डालने को उद्यत है। अतः मैं तुम्हारा शरणागत हुआ हूं। यदि आप मेरी रक्षा कर सकें तो विश्वास दान दें। अन्यथा कहीं और जाऊंगा।" राजा बोला—मेरे शरणागत को स्वयं यम भी पराभूत नहीं कर सकता, तुम निर्भय होकर ठहरो। राजा के अभय दान से विश्वस्त वह यवन रणथम्भोर किले में निश्शंक होकर रहने लगा।

जब अदीन राज को इसका पता चला तो क्रोधपूर्वक हाथी, घोड़े और पैदलों की एक विशाल सेना लेकर, जिससे धरती हिल उठे और दिशायें कांप उठे, रास्ता तय करता रणथम्भौर आ पहुंचा और भयंकर धावा बोल दिया। हम्मीर ने किले की खाई और गहरी कर, बुर्जों को शस्त्र सज्जित और द्वारों को सुरक्षित कर बाण वर्षा से धावे का उत्तर दिया। एक मुठभेड़ के बाद अदीन राज ने हम्मीर के पास दूत भेजा। दूत ने जाकर कहा—राजन्, श्रीमान् अदीनराज तुम्हें आदेश देते हैं कि मेरे अनिष्टकारी महिमसाहि को छोड़ मुझे सौंप दो। अन्यथा कल प्रातः ही तुम्हारे किले को मिट्टी में मिलाकर तुम्हें महीमसाह के साथ ही यमपुरी पहुंचा दूंगा।" हम्मीर ने उत्तर दिया—दूत, क्या करूं, तुम अवध्य हो। इसका उत्तर तो तुम्हारे स्वामी को वाणी से क्या तलवार की धारा से दिया जायगा। मेरे शरणागत को स्वयं यमराज भी देख नहीं सकता, बेचारा अदीनराज है क्या चीज? दूत के फटकार पाकर आने का कारण अदीनराज क्रोधपूर्वक युद्ध की तैयारी में लगा। इसप्रकार दोनों ओर लगातार तीन वर्ष

तक लड़ाई के चलते रहते हजारों योद्धा हताहत हुए। आधी बची सेना को देख और किले को अजेय देखकर, अदीनराज ने लौटाना चाहा। इसके भग्नमन को देख हम्मीर के दो विश्वासघाती मंत्री रायमल और रामपाल बादशाह से आकर मिले और बोले—बादशाह! कल परसों तक किला हाथ में आजाएगा, क्योंकि किले में अकाल पड़ गया है। 'आप कहीं न जाएं।' अदीनराज ने उन विश्वासघातकों को पुरस्कृत कर किले की नाकेबन्दी कर डाली। इस भीषण संकट को देख हम्मीर अपने सैनिकों को बोला—रे मेरे जाजमदेव आदि योद्धाओं! मेरी शक्ति सीमित है, पर शरणागत की रक्षा के लिए काफी सैन्य शक्ति वाले अदीनराज के साथ लड़ूंगा। भले ही यह नीति के विरुद्ध है। अतः तुम सब लोग किले से निकल अन्य स्थानों पर चले जाओ। वे बोले—राजन्! निरपराध होकर भी आप तो करुणापूर्वक शरणागत की रक्षा के हेतु युद्ध स्वीकार करें और आपकी दी हुई आजीविका खाने वाले हमलोग आपका साथ छोड़ कायर कैसे बनें? हम भी कल आपके शत्रु को मारकर आपकी मनोरथ सिद्धि में सहायक बनेंगे। हां, इस बेचारे यवन को छोड़ दीजिये, ताकि रक्षा के योग्य रक्षा हो सके, क्योंकि उसी की रक्षा के लिये यह सब कुछ किया जा रहा है। यवन महिम-साहि बोला—'देव, मुझ अकेले और विदेशी के लिए आप अपने परिवार और राज्य को नष्ट क्यों कर रहे हैं? मुझे जाने दें। राजा बोला—'ऐसा न कहो। हां, यदि तुम किसी निरापद स्थान पर जाना चाहो तो हम अवश्य पहुंचा देंगे।' यवन बोला—नहीं

देव, यह नहीं हो सकता। सबसे पूर्व शत्रु के मस्तक पर मेरा ही खड्ग प्रहार होगा। राजा ने कहा—किन्तु स्त्रियों को तो बाहर कर देना चाहिये तो स्त्रियों ने उत्तर दिया—स्वामिन, हमारे स्वर्ग-यात्रा महोत्सव में आप बाधा क्यों डालना चाहते हैं? अपने प्राणपति के बिना हम यहां कैसे रह सकती हैं। क्योंकि इस संसार में वृक्षों के बिना लतायें और नाथ के बिना स्त्रीगण कैसे जियें? पतिव्रताओं के प्राण तो पति के प्राण के अनुगामी होते हैं।' इसलिये हम भी जौहर करेंगी। यों परोपकार हेतु प्राण विसर्जन करने वाले राजा हम्मीरदेव के सुभट युद्ध में चले गये और स्त्रियों ने जौहर कर डाला।

तब प्रातःकाल युद्ध शुरू होने पर अश्वारोही हम्मीर अपने सैन्य सहित वीरतापूर्वक किले से निकल शत्रुओं पर टूट पड़ा। घोड़ों को गिराता हुआ, हाथियों को मारता हुआ, रथों को तोड़ता तथा कबंधों को नचाता और धरती पर खून की नदी बहाता हुआ हम्मीर युद्ध में घोड़े की पीठ पर ही वीरगति को पा सूर्यलोक गया।

हा, सर्वस्व छोड़ हम्मीर युद्ध में काम आया। वे महल अनुपम गुणवाले हैं, वे रमणियां प्रसन्न हैं, वह राज्य धनधान्यपूर्ण है, हाथी घोड़ों से भरा है, जिसे मनुष्य शत्रु के लिये नहीं छोड़ देना चाहता।

परिशिष्ट (४)

भाट खेम रचित राजा हम्मीरदे कवित्त

[बात]

राजा हमीरदे जैतसीयोत, जैतसी उदैसीयोत रो। चोहवांण गढरिणथंभोर साको कियो तिणरी माग रा कवित भाट खेम कहे :—

मैं मिता अन्याय साह मारण फुरमाया।
मेछ का नवलख, फोरा दिली धर आया॥
तुरक फसवै मोल, हंट हिंदुउपकठा।
उलग्या अस भए तास यंदे दम यम्यो॥
जहं लग उगै अथमै कहो राय कोई मरै।
मगोल कहै हमीर सुनि हम तुम मरणै उगरै॥१॥

जांम स गढ रणथंभ, सीस जब लग धर ऊपर।
जांम स हूँ भुज डंड, चलण हूँ चल विचक्षर॥
जाम जैत पीरम, जाम जाजा यद गुजर।
जाम स हय गय तुरी, संग नहि करूं अपिन दर॥
गरब देह गढ अप्पिहुं, जब किम मंगौ जाहि मोहि।
हमीर कहै मंगोल सुमन, ताम न कदु आपि तोहि॥२॥

[वात]

पतिसाह मोलण वांणीया ऊपर घनै मेल्हीयो छै ।

—: कवित्त :—

मोलण कीयौ सलांम, निमट सै सात तुखारां ॥
चढे पै हिंदु तुरक चड, सब सैभरवारां ।
इम पूछै रायि हंमीर, कहां तै मोल्हण आया ॥
पतिसाह दिली नरेस, तुझ पास पठाया ।
उलटा समद जग प्रलै हुय, हंकि राय कोप्पा घणा ।
रखिव राय रखिव सकै, मैं रिणथंभवर वुडाति सुण्या ॥३॥

रे मोलण वसीठ, कांय तूं अणगल भखै ।
जै धर मारू तो माहि, त तौ कुण सरणै रखे ॥
जे दिली पतसाहि, त तौ हुं संभर राजा ।
जाहि फेर चकवै, साहि के लुं सब वाजा ॥
असवार समेत विगह अरु, जुझून कूं समुंही भिरू ।
कै होय घोर सुरतान की, कै हंमीर जूझैव परू ॥४॥

दिली आलम साह, कुमर तिस कारण दीजै ।
धारू वारु पातुर, अवर महिमा जु भणीजै ॥
लख्ख टका किन देहि, देहि किनि लग्ग तुखारां ।
अष्ट धारु किनि देहि, जियौ चाहै इंहा यारां ॥
जीव विधारै यार है, श्रग कहा पापी चोर है ।
मालण कहै हमीर सुनि, मति है मरै पतंग है ॥

मोहि देहु गजनी , साह मो सेवा आवौं।
उलखां मो देह, पकर फर घास कटावौं॥
नुसरतखां मो देहु, पकर कर बेडीं मेलूं।
थटा तिलंग मोहि देह, नार मरहठी खेलूं॥
सुनि मोलण कहियो साहि सूं, रामायण भारथ भिरू।
कै चोर होय सुरतान की, कै हूं हमीर कूकय परू॥६॥
उस नव लख तुखार, तुम्ह घर एक न पूजै।
उस असी श्रहस पायक, साहि सूं कहि किम झूझै॥
उस चवदहसै मदगलित, तुम्ह घर अठै गैंवर।
सुनि हमीर चकवै, करै क्या गंवाडंबर॥
मोलन पूछै वाहि है, सायर थाह न चुहि है।
सुरतान निचांना नूं चिरा, कहि हमीर किम उठ है॥७॥

[वात]

यूं कहिनै मोलण पतिसाह आगै जाय हकीकति कही।

--। कवित्त :—

दे न दंड मांनै न सेव, लेनि दिल्ली निन पावै।
भरै झुंझा कलयर कमै, राय साम गग न्यावै॥
मांगै उलअखांन, नार मंगै मरहठी।
अरु मंगै गजनी, रही चहुवांण जु हठी॥
असवार ससेन विणट उरै, कूनन कूं ससहो कंमै।
गढ कपर राय हमीरदे, तुम्है चंवर ढर ढर हमै॥८॥

खिड्यौ गोड गजनौ, खिड्यौ ढिली समानौ।
खिड्यौ उच मुलतांन, खिड्यौ खोखर खुरसानौ ॥
खिड्यौ वंग तिलंग, खिड्यौ उवह चंगल देसां।
खिड्यौ कछ कावरू, खिड्यौ ईडरउ पदेसां ॥
इतरो खिड्यौ अलावदी, रणथंभोर मछड अड्यौ।
हमीर राउ विकसै हंसै, तिकर एक तंडो पड्यौ ॥६॥
देवगिर म म जांन, जान म म जादु नरवं।
गुजरात म म जांन, कर्ण चालुक न यह हे ॥
मांडोवर म म जान, सु तो हेला स ग्रहीयौ।
चीत्रोड म म जांन, सुतो कूडे कर ग्रहीयौ ॥
तूं अलावदीन हमीर हूं, द्रिड कपाट आडो खरौ।
रणथंभ द्रुग लागंत ही, सु अब जांनयौ पटतरौ ॥१०॥
ठयौ हमीर पेखनौ, तरण नचं राय अंगण।
मीम धुनं अलावदीन, आवर्ट खिण खिण ॥
पग नेपुरं रुण भुणे, कांन मोत्रन तर कवर।
हय गय पख्यर पडिग, चड्यौ चाहे नरवं नर।
करि ग्रह कमांण गलि भ्रज कर, छत्र वेह ममुहो तरंगि।
उडा न सीह पातुर हनिग, तार दंत खरहर परिग ॥११॥
छत्रधार नहि भईय, मार यच्यौ सिर ऊपर।
कर ग्रह गहियव डंड, जानि गोरख ध्यान धर ॥
राव रान भरि हरिग, अमर सुरतान पणट्यौ।
आन तीर चंचर्यौ, लिख्यौ महिमा मीय दिट्यौ ॥
मन धरय रोम धारू यर, नही हमीर भोजन पीयो।

ता करण असपति राय हो, तीर महन मुकीयौ ॥१२॥
जुद्ध रांम रांमनह, जुद्ध वालिह सुग्रीवहि।
जुद्ध करन अर्ज्जनह, जुद्ध दुसासन भीमहि ॥
पुहिमराय सुनि जुद्ध, काल वीती चहुवांनहि।
धीर एम कटियहि, छत्र ऊपर सुरतानह।
पर हसै एह चित्र परि अरीयन जिम पंडर रयन।

झगड़ौ पुरानौ उघडौ अहि नरिंद हमीर सुन ॥१३॥
जु सिर कनक मणि रयण, मोर माणंकह गुंदयौ।
जु सिर वास कुसमह निवास, छिन इक न छंडयौ ॥
जु सिर सिरांनहि नयव, तास सिर छत्र चयठौ।
जु सिर पंच भोआल, माहि उदयंतौ दिठौ ॥
हमीर राउ गाढौ कृपन, देन राग जिम देवगिर।
पाहन वहंत घठेव कर, सु परीया चंद सुरतान सिर ॥१४॥

[वात]

जाजौ वड गुजर प्राहुणौ थको आयौ हुतौ. तिण नूं राजा हमीर आपरी बेटी देवलदे परणाई थी। गु परण मोड बांधे हिज काम आयो। देवलदे राणी होद मांहे चुट मुई ॥

॥ दूहा ॥

जाजा तूं घाल जाहि, तू परदेसी प्राहुणो।
म्हे रहस्यां गढ मांहि, गढ दीपंतां न देवस्यां ॥१॥

जाजौ कहै सु जाय, जे नर जाया तिहु जांणां।
माल परायौ खाय, सांई मेलूहे सांकडै ॥२॥

—: कवित्त :—

मिलौ रांणौ रायपाल, मिलौ वाहुड़ विकसंतौ।
भोजदेव पिण मिलौ, मिलौ भोज रातू रंतौ॥
वीरमदे पिण मिलौ, मिलौ वड राउत जाजौ।
चंद सूर पिण मिलौ हीन नहि भखित राजा॥
तेतीस कोट ऊवै पिण मिलौ, अवर मिलौ महिपत दियो।
हमीर कहै ए मत मिलौ स, कर करमरदे.मरहियौ ॥१५॥

॥ दूहा ॥

सिंघ विसन सापुरस वचन, केल फलति इकवार।
त्रिया तेल हमीर हठ, चडै न दूजी वार ॥१॥

:— कवित्त :—

वायस विकम राव, वुद्धि विन खद्ध वयारह।
अजुहुं मुंज कराढ, रूलै दछिन भंडारह॥
मंडल फछ भलै, सीह गुजर रै अंगणे।
गंग युड जैचंद मुओ, भिडीयौ न भयंगम।
हमीर सरस हमीर किय, फर कंदल रणथंभ छल॥
अैसे फरै न काहु करहे न कोई सु कोई राव रविचक्रतल ॥१६॥
तेरह से तेपने, माह सुद ग्यार [स] मंगल।
अलावदीन छत्रपती, लीयै रणथंभ करि फंदल॥

सुणि मध्यान हमीर, चित्त हर घरणि लायौ।
दरवाजै सत प्रोल, ईस कू सीस पडायौ ॥
जैत सुतन जुग जुग अमर, कहै 'खेम' जस निमिल पढ्यौ।
खग प्रान भेदव फालकै, सु पातिसाह गढपर चढ्यौ ॥१७॥

संवत् १७०६ रा फागुन सुदि ६ शुक गढ रणथंभोर री तलहटी भाट सुखानंद व्यासा लक्ष्माउत रा बेटा कनै लिखायौ।

सोलह सै पचीस गिन, नवमी वदि गुरवार।
जेठ मास रिणथंभ गढ, लियो अकबरसाह जलाल ॥ १ ॥

॥*॥ समाप्त ॥*॥

हम्मीरायण के :— **पाठान्तर**

गाथा १२८ से उदयपुर की प्रति प्रारंभ होती है ।

(एक गाथा का अंतर है)

१२६ मेल्हाणउ दियउ, निसि नी वलि हुउ घोरंधार ।

१३० भउ सहु, अवरिज, लोक तणइ उछव अपार, पुण्य उपरि तिह कीध अचार ।

१३१ वधावा, देखइ गोयरइ ।

१३२ (हउं) घरि ऊपनउ भलइ चहुआग, रिणथंभउर ऊपनउ राउ ।

१३३ धरइ, आपइ, समापइ, सिणगारियउ, भइइ, पाहुणउ, अम्ह तणउ जनम ति आज सुधन्य ।

१३४ रिणथंभउरि, कोसीसे कोसी ने ।

१३५ पउलि, त्रिवक ।

१३६ धरियइ, अरि पइइ पराण, याजइं दरघू रिण०काहली, गढि उपरि चालइ ढीकुली ।

उदयपुर की प्रति में १३६ वां छन्द :—

मंत्र समदाया भूकण भली, देव सहु आव्या जोवा भगी ।
गढि गाढउ कीधउ ऊछाह, सिणगारयउ रिणथंभउर मांहि ॥१३६

उदयपुर की प्रति में नं० १३७, १३८, १३९ तीन पद्य नहीं हैं।

१४० आसिस दियइ, जैत्र हुई, खिसउ, तू हमीरदे चहुयाण।

१४१ सहुअइ मिली, बधावउ आपणउ, भरी भरी अंखियाण

१४२ सुलितान, परधाना नइ जुगती जाण।

१४३ तेड्इ सुलिताण, थउ, सांभलि राउल तीरइ जाउ, पूछउ,

१४४ ०गयउ गड मांहि, भेटियउ उछाहि, ०कीधउ पाहुणा पणउ।

१४५ जायउ, जेत्र, इतु=तू, रख्या।

१४६ निसुणि=इहां।

१४७ जे बेऊ तरणि, मइवर, ती।

१४८ राय, वारहट नइ, आपियइ, विदेसि।

१४९ मोल्हृ, कहीं सुणी न।

१५० घणा, तोनइ, अधिकइ राइ, मंडाव्य, सांभरि तूं केणि।

१५१ मोल्हृ, हुंत।

१५२ जइ इन, होलइ।

१५३ मोल्हृ! धर्यां, तइ लेइ, अग्नि ती।

१५४ तइ।

१५५ मोलावियउ, मार जाइ नइ।

इसके बाद की गाथा उदयपुर वाली प्रति में नहीं है :—

१५६ चालुंक न नु हइ, गाढिम, जि=करि, दढ, रिणथंभ दुग्ग लग्गंतयह, हिव लब्भइ पट्टंतरउ।

१५७ रिणिथंभउरि हम्मीरदे, केणि।

१५८ चेउ, (इम) कहइ राय हम्मीर।

१५९ तो सरिखा म्हारइ घणा, सेव करइ निसदीस।
हूं हमीर कहियइ इसउ, तोइ नमामउ सीस ॥१५९॥

१६० नइ सांचियउ, राय चहुआण, करां।

१६१ आगलि, घणउ, तुम्ह=अम्ह, तणउ।

१६२ तणउ, न्हाल।

१६३ चौपाई उदयपुर वाली प्रति में नहीं है :—

१६४ न्हाल, ज दी, तदि=तिहां

१६५ थइ, इस दोहेके उत्तरार्द्ध के बदले में उदयपुर की प्रति में इससे ऊपर वाले दोहे का उत्तरार्द्ध दिया है।

१६६से १७३ तक पद्धड़ी छन्द के बदले उदयपुर वाली प्रति में 'चउपई' लिखा है, तथा पाठान्तर भी अधिक हैं एवं ५ के बदले ४ छंद यहां दिये जाते हैं, उदयपुर की प्रति में १७२ वां पद्यांक नहीं है।

सिंदा, चिंदा महिमा जाणि, कछवाहा मोरी मंकुआण।
चारइ योद्धाणा अति भूझार चाला वघेला मिल्या अपार १६२

भाडिया गूडर तुंअर असंख, सुभट अनेरा आया असंख ।
गुहिलउत गुहिलाणा उगाह, पंवार पमारुया अति उछाह ॥१६३

सोलंकी सींधल अति मंडाणि, चंदेला चाउड़ चाहुआण ।
राठउड़ मेवाड़ अनइ कुंभ, छत्रिस कुली मिलि तिणि आरंभ १६४

हम्मीर राइ हरखियउ अपार, दीठा मेलेरा अति जूझार ।
मंडलीक मडहुया राणो राणि, सहु मिली आव्या तिणि ठाणि॥

१७१ दिया, ठाह=उछाह, खंडायुध दीया, गहिलामांहि उतारुया ।

१७२ जम, राय चहुआण, उछाह=सुजाण ।

१७४ कोलाहल हुअउ, दियउ दमामउ, लिया, घडियउ ।

१७५ नइ हुया=दंयह, तिणि, फिरणा ।

१७६ पठाण=पाला, गदि निडिया धणी स्यउं जुता ।

१७७ जे, भाखरि=तापरि, हुया ।

१७८ लेहु ये लेहुवे करउ अपार ।

१७६ जिम देरउ ।

१८० नउ, हुंती, राणि, मंडाणि ।

१८१—१८२, पद्यांक उदयपुरवाली प्रति में नहीं है ।

१८३ आलम ऊभां=रिणि ऊपरि ।

१८४ पद्यांग हलोल, इसका त्रुटक चतुर्थ चरण उदयपुर की प्रति मे पूरा किया गया है ।

१८५ महुअरी, त्याइ नादि वरी, कइवार न=तेन ।

१८६ अणीसार; विछूटइ, इम वेवइ ते भिड़इ सवीर ।

१८७ सुभटां नइ, मइगल, अयार, लियइ ।

१८८ धूणी धरा हइवर, घणा=भला, जणा, हिव अंतर दाखउ आपणा ।

१८९ हुयइ, सार दुहेली धार ।

१९० ग्रहियउ, वास=ठाम ।

१९१ जेइत्र हुइ रणथंभउर—धणी ।

१९२ री>नी, खूट्टउ=त्रुटा, इक, मलिक खान=कटक मिलि ।

१९३ प्राणइ, पुरावउ खुंदिकार, तिणि वार ।

१९४ रिण ऊपरि जोवइ चढि, मंडाण=विनाण, सउ=साम्हउ

१९५ कह्यउ, आव्या, पाडउं=मारउं ।

१९६ इम, किम भांजसि ।

१९७ तिणि पाड्या=पाड्या एकणि, चमक्यउ आलम, प्राण ।

१९८ पूरण्यउ, तिणि वरे, हुउ, नांखउ आवउ

१९९ मृधणी ।

२०० मन मांहि ।

२०१ दुर्गं हिव=सही गढ ।

२०२ जल वाल्या, स्यउं गई, ठाली थई।

२०३ नित पाउल. छड़हड़इ, धारू वारू नाचइ पात्र. पूठि दिखालइ वे वेस्या गात्र।

२०४ भल्ला, मारइ=येऊं, नइ मीर, सोईं=तीर।

२०५ तिसउ, काकउ=कोई, एज=एरि।

२०६ ऊआंरा भलउ, तेऊ=कोइ, तुन्हि=जे।

२०७ तो नइ, थेउ, इय=यार, सींगणि।

२०८ सींगणि, दइ, खांचइ तिम कुटका हुइ सात, सींगणि।

२०९ राउ, तिणि, नायइं।

२१० ०येमारी पात्र, ०पड़िया थे गात्र।

२१२ ०विमह नी सीम हुया, आवी, कांइ साहिब तई गांव्यउ याम (चतुर्थपाद)।

२१३ मांभरिवाल, न दइ सो नइ सुरिताण, किमइ पराण, ०सरायइ कारणि कयणि।

२१४ त्या नइं।

२१५ मयि, देइ=दहइ।

२१६ सउं, राउ, पातिसाह।

२१७ मोनइं घरि सुरताणर मही, आपउ पाछउ, महत देइ मोनइं ताजनउ।

२१८ गढे, रामचंद्र ।

२१६ तउ रहियउ रि अभंग, चलावि ▷ वउलाइ ।

२२० कदे = वली ।

२२१ विमासी ज्यां, तेड्या राय = मोकल्या, रउपाल देव वे मोकलिया, ठामि ।

२२२ हउणहार इम जोइ, मनि कूड़ा वेऊ तणा, जोवइ ।

२२४ छइ, अम्ह, वेसाड़इ तासु ।

२२५ अम्ह राउ, परधान, घरि मोकलउ देइ बहुमान ।

२२६ किया, गढ लीधा विणु [किम] जाइसि मियां ।

२२७ तउ गढ द्यां तुम्ह विण परमाणि, हसी हसी द्यै लिखि फुरमाण ।

२२८ हम्ह, विचि; [इन दो गाथाओं में २ पद त्रुटक को उदयपुर की प्रति से पूर्ति किया गया है] ।

२२६ मनि भूला नइ चूका सान, त्यां मूरिख. वीससियइ फीम ।

२३० वे, आव्यां छ इहां, हरिखयउ ।

२३१ पातिसाहि तुम्ह कहियउ किसउं, मांगी कुंयरी, मनां थी

२३२ जाणी, थी ।

२३३ हमीर=ईह, पिरथउ, रउपाल, करइ ⊳ कह।

२३४ बोलइ, धन नम्याविं सहुचइ पूरउ हुउ, तो नइ प्रधानउ।

२३५ मवि नीचा, रउपाल ⊳ नइ मिलिया, निवसी।

२३६ परिधाउ, करतां, जिउ तुरकां।

२३७ कीयउ, राजा द्रोह मिल्या पतिसाहि।

२३८ कोसीसां थी जोयइ।

२३६ अणचीतवी हुयइ, दामि देयि कुण कीधी घात, प्रधाने, ले गया।

२४० को, जियांरउ, दियइ, यंका, जीतइ जाइ न को।

२४१ गावउ, दिढ मइ, देसु, जिसगइ, करेसु।

२४२ मरण नीङउ वेगउ अछइ, किणही, उपारि।

२४३ गइ=नइ।

२४४ जे नवि=जेह, नीभागियउ न देवि, ति, वले,पि।

२४५ राय चाहुआण, घउलायउ।

२४७ पाहुणउ।

२४८ तिहुं, परारया स्वामि।

२४६ जेम=कई।

२५० भगमार्यांउ=ओलग्यउ, महिमा सह हम्मीर, हुयउ इसउ, इम बोलइ हम्मीर [चतुर्थ पाद]।

२५१ यह गाथा उदयपुर की प्रति में नहीं है।

२५२ दीधइ, तिमकरि; हुउ ति।

२५३ हमीर=चहुआण, मीर=पठाण।

२५५ राजा, विणठई वाण्यई दिखाड़िया, लेवि।

२५६ गाढउ=गेफारउ; रिणमलि कियउ समाधान, अधिक दुख कोठार दियउ, जउहर, वारि।

२५७ तउ, ज्यउ वंस ज्यउ।

२५८ तीणइ, टीकउ, दियउ, रिणथंभउरि तुम्हि होज्यो नाथ।

२५६ देज्यो बहुमान, महेसरी=वाणिया, जाति सूरमा बाधउ कान।

२६० सिखामणि, त्यांकी मां साथिइ, जोताव्या घोड़ा, मुकलाव्या बापइ वे पूत।

२६१ मीरां, ०सहु तिणि समइ, मारइ ठाणि।

२६२ तोखार, तीणइ, लोके जउहर किया, रावल गनि बल बोलइ तिया।

२६३ जमहर मांड्या यारू भला, चलण।

२६४ का॰ना, तेउ।

२६५ तिहां, उपमा तिहां, चुड्ला मलकइ निला।

२६६ सोवन, रैं, कंठि, उर, पाओ, रण झणकार।

२६७ आपणड़ा उजाड़ प्रिया, वे पख उजवालइ ते त्रिया।

२६८ अंतेवरि तिसी, राजकुमरि तीसी।

२६९ पड़ियउ पलउ, सांजति समुदाउ।

२७० सोनइं थित, ढोल कमखा—टोलिया लाट, तंबाढ़।

२७१ गरयइ भरी यलइ ते भली, फूंफूं तणी पलीता जुजा। पट्टकूल, भउइ बुलाई।

२७२ इकवीस भूमि, हणुमंत, मजाली, इसउ यीतग यीतउ रिणथूभि।

२७३ कोइ न उगरियउ तिणि ठाइ, उत्यम, लाउ, ७नउ हुयउ नवार।

२७४ सयलइ मुकलायउ, पउलि, फग्ग, ७तुं गइ पुत्रि न देइ पातुआण गति यहिला आर्णेणि।

२७५ रा > ना, देउ, कोठारिइ, सोंपलायइ।

[उदयपुर की प्रति के पद उल्ट–पुल्ट हैं]।

२७६ रहि ओवइ—रहियउ जाइ, भीमइ > मंगा, भीमदे आजउ मीर, हम्मस्यों तउं।

२७७ या कुण > वंधव सुणि, ठाइ, हिव जीवी नइ करस्यां कांइ

२७८ प्राहुणो > देवड़उ ।

२७९ हुअउ, चहुआण, दियइ > हाथि ।

२८० ऊभट ल्यइ पहु ईस ।

२८१ हि था, तिहां > जिके ।

२८२ मांहि, चड़इ, जोहार ।

२८३ वंधव, गहगहियउ, तिणि > यउ ।

२८५ करी, मीर, वांधव ।

२८६ भवणिज, पेखेवि ।

२८७ जिहांकइ, लिखमी ।

२८८ लेजो लखमी-लाभ, इस्यउ, दे याला वांह ।

२८९ रांजा, मान, घाल्यावे विन्हइ, इसउ ।

२९० धसमसइ, म्हारउ ।

२९१ सहीयउ=हुवउ, नमियउ; पुणि, जउ, धारा मूग उर सांकल करां ।

२९२ घेवइ, घणा > घेउं ।

२९३ सुणउ > नइ, प्राक्रम दिखाड़उं, आपहणी जाइस्यारउ गलउ ।

२९४ यह दोहा उदयपुर की प्रति में नहीं है ।

२९५ धारा पीठ खह्यउ हम्मीर, तिहि तीर, गिरि गिरि, कीयउ=पड्यउ, ईमर।

२९६ रा माथा हेठि, जाइ, कुल रखपान्हउ राख्यउ भाउ।

२९७ प्रभात तब मेली।

२९८ सुरिताण, खायइ, रणमल, पूछ्यउ पातिसाहि, तुम्हारउ, इणि।

२९९ आगेहि, आया ज्यां संप, दिखाड्इ।

३०० यउ, मूअउ, इणि ठाईं, सांभरियालः शुण हिंदू होम्याइ इणि कही।

३०१ तब साहिब, म्यान नइ घल्यउ, पाहि।

३०२ श्लोक—भाट कहइ कइयारों, पोलइ बिरद अप्पारों।
धन जणणी हम्मीरों, सरणाई बिजइ पंजरों सूरों २९२

३०३ संभारि, उचित्य देइ म्युद्पिकार।

३०४ सिरि ऊपरि देखी करी, पूछइ, कहि न. जो हुआ।

३०५ त्रि, मइठउ,=उड, चढ्उल दे=त्रिनिकुलि।

३०६ इन दोहे के अंतिम ३ चरण और ३०७ के दोहे का एक चरण मिलाकर एक दोहा उदयपुर वाली प्रति में कम है।

३०७ मूउ=हुअउ, गुआल।

३०८ फेम=कोप. महिचन्हि अखियन जो मगाइ. मुरिज धू अग जाम।

३०९ फी=नी, करउ समाधइ भाट।

३१० भान्ह=भाट, रइ मुम्ह=आपउ. गोयन्ताथि नर पइ=रइ।

३११ मनि गमइ=छइ हियइ।

३१२ देस भंडार > गढि घर गाम, स्वामि, तूठइ, द्रोह कियउ ते।

३१३ वेसासघातकी जे नर होइ, मारी जइ > नारी जाइ।

३१४ जेहनइ ए हुंता; ग्राम > आस, वीड़ा लेता, राउ दिखाड़इ।

३१५ राउ, दास किराड़ > वाणिअे, नाखिउ > खवाड़।

३१६ रउपाल, थकी > तणी।

३१७ भाट कहइ प्रभु दे निर्वाप, रिणमल रिउपाल > ग्यां, नहिं को > नवि कोई।

३१८ जयइर > जेइ, ग्रास > मान, त्याह मांहि कीधा ए काम, दीयउ, खाल, कढावइ तीणइ ठामि।

३१९ आवड़िया आप, कियउ, मृगापुरि।

३२० राजपूत, प्रवाहाउ, राय, कीयउ।

३२१ धन पीता; मात्र=पिता पक्ष अजुआलउ आपणउ; धन धन।

३२२ जिह > ज्यांरी; जग ऊपहरा हुआ तिणि ठामि।

३२३ दीधउ भाट नइ घणउ ज मान, मामि, घडर।

३२४ रामाकृण, सांभलइ, होइ।

३२५ त्रिण, हुअइ ममइ, मातमि, दिनिकही > दिनइ।

३२६ रंजिनी, युगि, काया, मुणनां।

विशेष नाम सूची

शुद्धा-शुद्धि पत्र

दो शब्द :—

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
६	८	हमर हठ	हमीर हठ
११	१६	एवं	एवं
११	२०	उपर्यु ँक्त	उपर्युक्त

भूमिका :—

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
४	४	हम्मीर पर	हम्मीर पर आक्रमण किया।
५	१५	की	कि
७	६	रणभेत्र	रणक्षेत्र
७	१६	फरन	करने
८	५	रोशनी डाली है,	रोशनी डाली है किन्तु
६	११	लें ।ता	लें, तो
१०	२	अस्पस्ट	अस्पष्ट
१०	१५	इस्लीम	इस्लामी
१०	१७-१८	राज्य मार्ग	राज्य-मांग
१४	१३	पटान्तर	पटान्तर का
१५	३	द्रप्टव्य	द्रष्टव्य
१५	१०	मारा	मारा तो
१८	१	छटा	छठा
२०	४	निरचप्ट	निश्चेष्ट

२८	२१-२२	खाई सामान	खाई का सामान
२६	१	उस	इस
२६	२४	पूछा तो	पूछा तो अमात्यों ने
३३	६	चारा	चारों
३३	१३	रविवार था	रविवार थी
३३	१६	स्वामि	स्वामी
३६	२	प्रयोग	उपयोग
३६	२२	उसमें	उसे
३६	८	सेना विनाश	सेना का विनाश
३६	१३	हम्मीरायण	तो हम्मीरायण
३६	१६	में से	में से है,
४०	७	शम्भु	शम्भु,
४४	११	एक सा।	एक सा है।
४६	७	मुहम्मदशाह	मुहम्मद शाह
६२	१५	किन्तु हम्मीर	हम्मीर
८६	६	भी	भी है
८७	३	गणेशचन्दन	गणेशचन्दन से
८६	१४	अपूर्व युद्ध	अपूर्व युद्ध के पश्चात्
६२	१०	क्य यहाँ	यह यहाँ
८८	४	अवतार की।	अवतार लिया।
१०४	६	सुद्धिः	सुधि
१०४	६	द्वैतीदिच	द्वैतोदिच
१०५	६	भद्राः शर्मा	भद्रा शर्म
१०४	११	सुस्थापना	सुस्थापना
१०८	१२	आर्यावर्त	जगति आर्यावर्त

१११	१०	अमीर खुसरो	अमीर खुसरो ने
११७	१८	पराजित होके	पराजित हो कर
११६	२२	द्रष्टव्य	द्रष्टव्य
१३४	११	उद्धरणादि	उद्धरणादि द्वारा हमने

हम्मीरायण :—

१३	१४	संभलि	संभलि
२८	१	मूं हउं,	मू, हउं
२६	१७	मालावउ	म लावउ
३१	६	मूमिया	भूमिया
३२	२२	१८४	२८४
३४	६	मेल्इइ	मेल्हइ
३६	१८	कविला	कविता
५१	१४	हमीरा	हमीर रा
५३	१५	०गंगगन	०गंगन
५३	१६	हन्मीर देव	हम्मीर देव
५५	१०	भटैः रंगीकृतं	भटैरंगीकृतं
५७	१५	सौंप .	सौंप
५८	२	लौटाना	लौटना
५६	१	सवसे पूर्व	सबसे पूर्व
५६	६	जियें	जियें
५६	१७	सर्वस्व	सर्वस्व
८०	१२	राजस्यानी	राजस्थानी
८०	अंतिम	सद्दूल	सादूल
८०	अंतिम	बीकानीर	बीकानेर